हिन्दी अंक 22 : सितम्बर, 2020
चौ-मासिक : बेंगलूरु

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन



विकलांग बच्चों के शिक्षण का परिप्रेक्ष्य

कृपया ध्यान दें :
इस अंक में प्रकाशित लेख मूलतः लर्निंग कर्व (अँग्रेज़ी) अंक 5 दिसम्बर, 2019 के लेखों का हिन्दी अनुवाद हैं। लेखों में व्यक्त विचार और दृष्टिकोण लेखकों के अपने हैं, उनसे अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

'' लर्निंग कर्व अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक प्रकाशन है। इसका उद्देश्य शिक्षकों, शिक्षक-अध्यापकों, स्कूल प्रमुख, शिक्षा अधिकारियों, अभिभावकों और गैर-सरकारी संगठनों तक ऐसे प्रासंगिक और विषयगत मुद्दों में पहुँच बनाना है जो उनके रोजमर्रा के काम से सम्बन्धित हैं। लर्निंग कर्व शैक्षिक जगत के विभिन्न दृष्टिकोणों, अभिव्यक्तियों, परिप्रेक्ष्यों, नई जानकारियों और नवाचार की कहानियाँ प्रस्तुत करने के लिए एक मंच प्रदान करता है। इसका मूल विचार 'शैक्षणिक' और 'अभ्यासकर्ता' के मध्य सन्तुलन हेतु उन्मुख पत्रिका के रूप में स्थापित होना है।''

सम्पादक की ओर से



शिक्षा का अधिकार अब एक सार्वभौमिक अधिकार के रूप में स्थापित हो गया है और यह दुनिया के हर देश की शिक्षा नीतियों में निहित है । भारत में राइट्स ऑफ़ पर्सन्स विद डिसेबिलिटीज़ (आरपीडब्ल्यूडी, 2016) के तहत एक विस्तृत सूची* बनाई गई है जिसका पालन, विकलांग बच्चों को पढ़ाने के लिए, सरकारी स्कूलों को विशेष रूप से करना होगा ।

लेकिन यह शिक्षा गुणवत्तापूर्ण होनी चाहिए और प्रत्येक विकलांग बच्चे को उसकी क्षमता के अनुसार सम्मान के साथ दी जानी चाहिए; इस बात को मानते हुए कि बच्चा पहले आता है और विकलांगता उसके व्यक्तित्व के लिए आकस्मिक बात है ।

विकलांग बच्चों के लिए विशेष स्कूलों के पक्ष और विपक्ष में लम्बे समय से बहस चल रही है, लेकिन आज लोगों की सम्मति समावेशी शिक्षा की ओर है । आरपीडब्ल्यूडी (2016) में भी इस दृष्टिकोण का समर्थन किया गया है और इसे शिक्षा की एक ऐसी प्रणाली के रूप में परिभाषित किया गया है, जिसमें 'विकलांगता और ग़ैर-विकलांगता वाले विद्यार्थी एक साथ पढ़ाई करते हैं और इन विभिन्न प्रकार के विद्यार्थियों के अधिगम की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए शिक्षण और अधिगम की प्रणाली को उपयुक्त रूप से अनुकूलित किया जाता है' ।* आज के समय में, जब हर प्रकार की विविधता को अपनाना आदर्श बन चुका है तो आशा है कि अन्ततः विकलांग बच्चों को भी हमारी सभी कक्षाओं में जगह मिलेगी ।

प्रत्येक बच्चा, फिर चाहे वह विकलांग हो या ग़ैर-विकलांग अपनी विभिन्न क्षमताओं, ज्ञान प्राप्त करने, उसे समझने और संसाधित करने के तरीक़ों के साथ अद्वितीय और अलग है । हॉवर्ड गार्डनर के बहुबुद्धिमत्ता सिद्धान्त को पिछले दो दशकों में पर्याप्त आधार प्राप्त हुआ है और लोग इसे जानने लगे हैं । हालाँकि हमें इस बारे में पता है, लेकिन अब तक पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रम ने एक समान दृष्टिकोण का सहारा लिया है तथा कठोरता से और बिना किसी कल्पनाशीलता के इसके अनुपालन पर ज़ोर दिया है । इस प्रकार के व्यक्तित्व को स्वीकार करने और उसका सम्मान करने के मार्ग में विभिन्न कारक रोड़े बनकर खड़े हो गए हैं— और कई जगहों पर अब भी ऐसा हो रहा है । इनमें से कुछ कारक हैं : ठसाठस भरी हुई कक्षाएँ, उपयुक्त शिक्षक-प्रशिक्षण की कमी, माता-पिता और भाई-बहनों के लिए समर्थन का अभाव और इन सब के साथ-साथ कुछ अप्रचलित सांस्कृतिक और सामाजिक कारक भी हैं । यह भी सच है कि अपेक्षित व्यापक समर्थन के अभाव में, जिन बच्चों को इसकी सबसे अधिक आवश्यकता होती है, वही बच्चे पहले से ही ओवरलोडेड इस तन्त्र में उपेक्षित रह जाएँगे । ऐसा इसलिए होगा क्योंकि इसे कारगर बनाने के लिए आवश्यक सुविधाएँ और अधिकार जैसे कक्षाओं, प्रयोगशालाओं और स्कूल के भवन की ऊपरी मंज़िल तक पहुँचने की व्यवस्था, सहायक उपकरण जैसे ब्रेल पुस्तकें, छाया (सहायक) शिक्षक, स्पीच थेरेपिस्ट और फिज़ियोथेरेपिस्ट उपलब्ध नहीं हैं या उनकी कमी है । एक आदर्श दुनिया में यह सब स्कूल में उपलब्ध होगा । शिक्षकों को उनकी ज़रूरत का प्रशिक्षण मिलेगा, माता-पिता बच्चों के साथ अधिक समय बिताने के लिए स्वतन्त्र होंगे और समुदाय अधिक समानुभूति रखने वाला होगा । अभी जैसी स्थिति है उसमें स्कूलों को डर है कि वे विकलांग बच्चों की ज़रूरतों और ग़ैर-विकलांग बच्चों की ज़रूरतों में मेल नहीं बिठा पाएँगे ।

यहीं पर समावेशन और स्वीकरण की बात आती है । अगर स्कूल पड़ोस के सभी बच्चों को दाख़िला दे सकें तो समावेशन स्वत: ही हो जाएगा । यदि विकलांग बच्चे नियमित रूप से कक्षा में उपस्थित हों तो संवेदनशीलता और स्वीकरण बढ़ेगा। माता-पिता भी अपने बच्चों को बच्चों के रूप में देखने में सक्षम होंगे, वे बच्चों की अक्षमताओं पर ध्यान केन्द्रित करने की बजाय उनकी क्षमताओं के लिए उनकी क़दर करेंगे । बावजूद इसके कि अभी भी बहुत कुछ हासिल करना बाक़ी है, हम विकलांगों के स्वीकरण की दिशा में एक लम्बा सफ़र तय कर चुके हैं । बहुत कुछ किया जा चुका है और अभी भी

किया जा रहा है । माता-पिता, शिक्षक और सहपाठी अब अधिक जागरूक और संवेदनशील हैं । प्रारम्भिक हस्तक्षेप कार्यक्रम, भेदभाव न करने वाले शिक्षक और मुख्य अध्यापक, विभिन्न क्षमताओं को समायोजित करने वाला पर्याप्त लचीला पाठ्यक्रम तथा अनुकूलनशील मूल्यांकन प्रणालियों में भारी परिवर्तन आया है ।

इस अंक में हमारे पास उन लेखकों के लेखों का विस्तृत संकलन है जिन्होंने विकलांग बच्चों को अलग-अलग तरह से देखा है, लेकिन एक ही लैंस के माध्यम से : समावेशन । इसमें विकलांग बच्चों की शिक्षा के अवसर पैदा करने के लिए कई वर्षों से कार्यरत विभिन्न संगठनों के इतिहास का पता लगाने वाले लेख हैं । तो कुछ लेख ऐसे हैं जो विकलांग बच्चों को यात्रा के माध्यम से वास्तविक दुनिया में जीवन का अनुभव करने के अवसर प्रदान करते हैं और इतिहास व भूगोल को अधिक सुलभ तरीक़े से प्रस्तुत करते हैं । कुछ अन्य लेखकों ने भाषा अधिग्रहण, सम्मानजनक स्वीकरण और 'अदृश्य विकलांगताओं' जैसे कि वाचन वैकल्य (डिस्लेक्सिया), गणना अक्षमता (डिस्क्लेकुलिया) और स्वलीनता (ऑटिज़्म) के बारे में लिखा है । एक लेख में विकलांग बच्चों की यौन-भावनाओं पर चर्चा की गई है, यह एक ऐसा विषय है जिसे अब तक गुप्त रखा गया था । अधिगम की कठिनाइयों से निपटने के लिए, विशेष-शिक्षक बन चुकी माताओं ने व्यावहारिक सुझाव दिए हैं जो हल्के-फुल्के, विनोदपूर्ण हैं किन्तु विश्वास का निर्माण करते हैं । भविष्य की ज़रूरतों की तैयारी के लिए शिक्षक-प्रशिक्षण पर एक जानकारीपूर्ण लेख है । साथ ही कुछ अभिभावकों और एक बहन के विचार भी शामिल हैं, जिन्होंने इन विवरणों में यथार्थवाद का स्वर जोड़ा है कि विकलांग बच्चे के साथ रहने का क्या मतलब है ।

सभी के साथ साझा करने और विचार करने के लिए ऐसे कई और लेख भी शामिल किए गए हैं । इन सब में एक बात सामान्य है— बच्चे तो बच्चे हैं । उनकी विकलांगता उन्हें परिभाषित नहीं करती है । और इस बात को स्थापित करने का तरीक़ा है— समावेशन ।

एक पहलू जिसका निश्चित रूप से उल्लेख करना ज़रूरी है, वह है महिलाओं— फिर चाहे वे शिक्षिकाएँ हों या माताएँ —की इस क्षेत्र में भारी उपस्थिति जिन्होंने उस परिवर्तन को लाने का बीड़ा उठाया है जिसे हम सभी चाहते हैं ।

हमेशा की तरह हम हिन्दी से अँग्रेज़ी अनुवादों के लिए राजेश उत्साही और उनकी टीम को धन्यवाद देते हैं ।

पाठकों का फीडबैक हमारे लिए एक ऐसी प्रेरणा है जो हमें बेहतर से बेहतर कार्य करने की ओर प्रवृत्त करता है । कृपया नीचे दी गई ईमेल आईडी पर हमें लिखें ।

प्रेमा रघुनाथ
मुख्य सम्पादक
prema.raghunath@azimpremjifoundation.org
अनुवाद : नलिनी रावल

*अध्याय III, अनुभाग II, आरपीडब्ल्यूडी 2016

इस अंक में

इस अंक में

शिक्षक-प्रशिक्षण कुंजी है

इन्दु प्रसाद

लर्निंग कर्व के साथ एक उन्मुक्त बातचीत में इन्दु प्रसाद बताती हैं कि समावेशी शिक्षा के क्षेत्र में हमने कितना रास्ता तय किया है और भविष्य में विकलांग बच्चों के लिए बेहतर तथा अधिक समावेशी शिक्षा के लिए कौन-से कारक महत्त्वपूर्ण होंगे।

यदि आप विकलांग बच्चों या युवाओं को शिक्षित करने के पूरे इतिहास को देखें तो आप पाएँगे कि इन बच्चों को बच्चा समझने के लिए भी हम कितनी जद्दोजहद से गुज़रे थे। यहाँ तक कि हम उनके लिए 'वह मोटा लड़का' या 'वह मन्दबुद्धि लड़की' या 'वह स्वलीन लड़का' जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं। अपने प्रशिक्षण से मैंने जो महत्त्वपूर्ण बातें सीखीं, उनमें से एक यह थी कि विकलांग बच्चा पहले एक बच्चा है और फिर वह जैसा भी है, वैसा है— तो जैसे मैं एक लम्बी नाक वाली लड़की हूँ, वैसे ही वह स्वलीनता या प्रमस्तिष्क पक्षाघात (सेरब्रल पॉल्ज़ी) वाली लड़की है । इस बात को पहचानने में हमें बहुत समय लग गया कि ये बच्चे सबसे पहले तो बच्चे हैं। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि जब हमने इसे पहचाना, तब भी विकलांगता के बारे में हमारा दृष्टिकोण चिकित्सीय या मेडिकल ज़्यादा था— और यहाँ मैं उस बात की अनदेखी कर रही हूँ जहाँ आप विकलांगता वाले बच्चे को छिपाते हैं। ऐसा अभी भी होता है लेकिन अब यह एक आम बात नहीं है। हालाँकि ऐसे कई परिवार हैं जिनके बच्चे गम्भीर रूप से विकलांग हैं पर वे इसके बारे में बात नहीं करना चाहते, वे बच्चे को कुछ करने नहीं देते। हमें ऐसे परिवारों की मदद करनी है लेकिन मैं समझती हूँ कि ऐसे लोग अधिक नहीं हैं।

पन्द्रह साल पहले जब मैं विकलांग बच्चों की शिक्षिका थी, तब ऐसे बच्चे भी थे जो दस साल की उम्र में पहली बार मेरे पास आए थे। ऐसा नहीं है कि वे दस साल से कुछ और कर रहे थे और फिर वे मेरे पास आए। नहीं। वे घर से बाहर ही तब निकले जब माता-पिता को आख़िरकार यह एहसास हुआ कि स्थिति बदल गई है। इसलिए यह स्थिति अकल्पनीय या असत्य नहीं है कि ऐसे परिवार हैं जो संघर्ष करते हैं लेकिन इसके पीछे बच्चे को हानि पहुँचाने की भावना नहीं होती है। कई बार ऐसा इसलिए होता है क्योंकि वे बच्चे को बाक़ी दुनिया से बचाकर रखना चाहते हैं, क्योंकि वे बच्चे की सुरक्षा करना चाहते हैं या फिर संसाधनों की कमी है या सरासर व्यावहारिकता है— उनके पास खाने के लिए पर्याप्त भोजन नहीं है, दूसरे बच्चों के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं हैं। कई बार यह डर भी होता है कि लोग क्या कहेंगे, लोग क्या सोचेंगे, मैं इस बच्चे को बाहर कैसे ले जाऊँ— सामाजिक दबाव, पारिवारिक दबाव का मिला-जुला प्रभाव। लेकिन जैसा मैंने कहा, अब ऐसे परिवार अधिक नहीं हैं।

हम विकलांगता के 'चिकित्साकरण' के दौर से भी गुज़रे। दुनिया भर में विकलांगता को एक चिकित्सा सम्बन्धी मुद्दे के रूप में देखा गया। चिकित्सीय समाधान हैं, लेकिन कुछ चीज़ें ऐसी हैं जिन्हें चिकित्सीय रूप से हल नहीं किया जा सकता। इसलिए यह पता लगाना ज़रूरी है कि उनका प्रबन्धन कैसे किया जाए। यह किसी मरीज़ का इलाज करने जैसा है। एक 'तकनीकी' प्रकार के डर के कारण लोग इन बच्चों को उन बच्चों के रूप में नहीं देखते थे जो बड़े होते हैं, जिन्हें सामाजिक जीवन और भावनात्मक समर्थन की आवश्यकता होती है, जो मूर्खतापूर्ण, अच्छे, बुरे, प्यारे और परेशान करने वाले काम करेंगे— ठीक वैसे ही जैसे कोई अन्य बच्चा करता है। उन्हें कुछ अतिरिक्त चीज़ों की, कुछ अलग चीज़ों की आवश्यकता होगी लेकिन किसी भी अन्य बच्चे की तरह उन्हें भी शिक्षित करने और शिक्षा के अवसर देने की आवश्यकता है। इस मुक़ाम तक पहुँचने में हमें लम्बा समय लगा कि जब हम किसी बच्चे और इन मुद्दों को देखकर यह सोचें कि इस बच्चे में कुछ क्षमताएँ हैं और इसे कुछ दिक़्क़तें हैं, तो इस बच्चे के लिए कुछ ऐसा किया जाए जो इसके लिए अच्छा हो और इसके काम आए।

कई बार परिस्थितियाँ कठिनाइयों को बढ़ा देती हैं। उदाहरण के लिए, मान लीजिए आपकी आँखों में कोई तक़लीफ़ है और आप कक्षा में सबसे पीछे बैठे हैं। पुस्तक में अक्षरों का आकार बहुत छोटा है और कोई भी आपको चश्मा दिलाने का कोई प्रयास नहीं करता है, तो इस तरह एक छोटी-सी समस्या एक बड़ी अक्षमता में बदल सकती है। जैसे ही आपको चश्मा मिल जाता है, सब कुछ बदल जाता है। इस तरह की कुछ परिस्थितियाँ हैं, कुछ वातावरण हैं जिन्हें आप बना सकते हैं, भले ही इनसे अक्षमता दूर न हो लेकिन उसका प्रबन्धन बेहतर तरीक़े से किया जा सकेगा।

इन बच्चों की मदद करने के तरीक़ों को समझने के लिए बहुत

अधिक महारत की आवश्यकता होती है। वैसे तो किसी कक्षा में तीस नियमित बच्चों का प्रबन्धन करने के लिए ही अत्यधिक सहायता की आवश्यकता होती है, लेकिन जब विभिन्न प्रकार की विकलांगता वाले बच्चों की बात हो तो कक्षा में पाँच से सात बच्चों से अधिक नहीं लिए जा सकते। इस बात ने हमें यह सोचने के लिए प्रेरित किया कि चूँकि इसके लिए बहुत महारत और शिक्षण-अधिगम के लिए एकदम अलग प्रकार के दृष्टिकोण की आवश्यकता है, तो क्यों ना उनके लिए विभिन्न संस्थानों की स्थापना की जाए। प्रारम्भ में ये संस्थान ऐसे थे जहाँ आप बच्चे को छोड़ देते थे और संस्था उनकी देखभाल करती थी। तो इस मामले को लेकर बहुत चिन्ताशील लोगों में से अधिकांश ने शुरू में विदेश जाकर प्रशिक्षण प्राप्त किया क्योंकि उस तरह का प्रशिक्षण देश में उपलब्ध नहीं था। कई लोगों के परिवार में कोई विकलांग व्यक्ति था तथा वे इस बारे में कुछ करना चाहते थे, तो उन्होंने ये संस्थान शुरू किए। यह 'विशेष स्थान' वाला चरण था— यानी केवल विकलांग बच्चों के लिए एक केन्द्र। यह स्थान एक उत्कृष्ट स्थान था, जिसमें ऐसे प्रतिबद्ध लोग थे जो बच्चों की देखभाल बहुत अच्छी तरह से करते थे। अतः बच्चों का विकास भली भाँति होता था। कई बच्चों को इस तरह की तवज्जो और देखभाल से बहुत लाभ मिला है— अन्यथा शायद वे बच्चे कहीं खो गए होते, लेकिन इन संस्थानों के कारण उन्होंने सभी प्रकार की दिलचस्प चीज़ें सीखीं और कीं। यहाँ बच्चों को एक अच्छा व संरक्षित वातावरण मिलने लगा जहाँ हर चीज़ का पूरा ध्यान रखा जाता है। मैं उन संस्थानों की बात कर रही हूँ जो अच्छी तरह काम करते हैं और हमारे देश में इसके पर्याप्त उदाहरण हैं।

इसका नकारात्मक पक्ष यह है कि इस तरह की सुविधा, इस तरह के लोग और वातावरण केवल बड़े शहरों में उपलब्ध हैं और इसलिए देश का बड़ा हिस्सा इससे वंचित रह जाता है। कई संस्थानों ने अपनी बात का प्रसार करने के लिए, विभिन्न हिस्सों में मदद के लिए विस्तार केन्द्र भी खोले लेकिन उनका मुख्य काम 'विशेष शिक्षा' था— विकलांग बच्चों के लिए एक ऐसी जगह जो संरक्षित, सुरक्षित, ध्यान रखने वाली और प्रतिबद्ध हो —एक पेशेवर स्थान जहाँ वे सभी सहूलियतों व सेवाओं का उपयोग कर सकते हों। यह कुछ समय के लिए एक मॉडल रहा है। मैंने इस तरह की जगहों पर काम किया है और मैं इनकी सकारात्मक बातों को जानती हूँ। दुनिया में जहाँ इन बच्चों का बिलकुल स्वागत नहीं होता अर्थात इन्हें स्वीकार नहीं किया जाता, वहाँ यह उसकी भरपाई का एक प्रयास है। यह उनके लिए एक अच्छा और छोटा वैकल्पिक संसार बनाने जैसा है। लेकिन यह एक अवास्तविक दुनिया है, वह नहीं जिसे उन्हें भविष्य में सँभालना है। जब वे बड़े होते हैं तो इस देश के नागरिक के रूप में, समाज और समुदाय के सदस्यों के रूप में, उन्हें हर चीज़ में भाग लेना होता है। इस भागीदारी के साथ समझौता हो जाता है। दूसरी बात, दुनिया के बाक़ी लोग, उनके साथी, यह जानते ही नहीं कि उनका अस्तित्व है। अधिकतर लोग यही सोचकर बड़े होते हैं कि दुनिया में हर कोई उनके जैसा ही है। तो हर तरफ से नुक़सान ही होता है।

इस समय तक समावेशन पर बहुत सारी बातचीत शुरू हो गई थी। पहले इसे 'एकीकरण' कहा गया था अब यह 'समावेशन' है। मूल बात यह है कि सबसे पहले तो ये बच्चे हैं, विकलांगता तो बाद में आती है और जैसे हम अन्य बच्चों के लिए प्रावधान करते हैं, वैसे ही हम विकलांग बच्चों के लिए भी प्रावधान करते हैं। हम इनके लिए कुछ अधिक प्रयत्न करते हैं क्योंकि यह उनका अधिकार है कि उन्हें जो कुछ भी मिले वह हमारी उदारता या उनकी तरफ़दारी करने की वजह से न मिले। इसलिए धीरे-धीरे यह पूरा विचार अधिकार आधारित दृष्टिकोण बन गया, एक अधिक समावेशी दृष्टिकोण। यह विचार उजागर हुआ कि इन बच्चों का समाज में स्थान है, और आप उसे छीन नहीं सकते।

इन बच्चों की स्कूली शिक्षा किस तरह की होनी चाहिए— इसके चयन का अधिकार बच्चों या उनके परिवारों को होना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे यह दूसरे बच्चों के लिए है। यदि कोई परिवार यह चुनाव करता है कि उनके बच्चे को अन्य बच्चों के साथ किसी नियमित स्कूल में जाकर पढ़ाई करनी चाहिए तो यह स्कूल की और राज्य की ज़िम्मेदारी है कि वे इस बात को सुनिश्चित करें कि उस बच्चे को जो भी चाहिए वह उपलब्ध हो। यदि कई प्रकार की विकलांगता वाले बच्चों के माता-पिता यह महसूस करते हैं कि उनके बच्चों के लिए विशेष स्कूली शिक्षा ठीक रहेगी तो यह सुविधा उन्हें उपलब्ध कराई जानी चाहिए। यदि किसी तीसरे वर्ग को लगता है कि उनके बच्चे को घर पर ही रहने की आवश्यकता है, क्योंकि वह भौतिक रूप से स्कूली शिक्षा तक पहुँच पाने में असमर्थ है, तो उसे घर पर ही उस तरह की देखभाल उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इस प्रकार से पूरा नज़रिया ही बच्चे की आवश्यकता पर विचार करने और बच्चे को वह आवश्यकता उपलब्ध कराने की ओर स्थानान्तरित हो गया है।

जहाँ तक सम्भव हो, बच्चों को एक बड़ी समावेशी व्यवस्था का हिस्सा होना चाहिए। इसका अर्थ है अपने दिमाग़ को खुला रखना— पहली बात, बच्चों को बच्चों के रूप में देखना; दूसरी बात, भौतिक पहुँच प्रदान करना और बच्चे की सभी शारीरिक ज़रूरतों के हिसाब से मदद करना और तीसरी बात, इसे मोटे तौर पर 'पाठ्यक्रम सम्बन्धी पहुँच' कहा जाता है। पाठ्यक्रम सम्बन्धी पहुँच का मतलब स्तर को कम करना

नहीं है, बल्कि ऐसे समायोजन करना है जिन्हें करना आवश्यक है ताकि बच्चा अपनी पूरी शिक्षा प्राप्त कर सके। अगर खेल के मैदान, प्रयोगशाला या परीक्षा प्रणाली को उनके अनुरूप बनाना है, तो बनाएँ। शिक्षा का अधिकार क़ानून के तहत कोई भी स्कूल किसी भी बच्चे को 'ना' नहीं कह सकता है।

लेकिन वास्तव में माता-पिता, स्कूल और प्रणाली के लिए यह बहुत कठिन है। एक तो हमें उस तरह की दक्षता का निर्माण करना होगा जो विकलांग बच्चों के साथ काम करने के लिए आवश्यक है। 'विकलांगता' एक बहुत व्यापक शब्द है, इसमें कई मुद्दे आ जाते हैं और बच्चे के जीवन के हर चरण में उस विकलांगता के निहितार्थ बदल जाते हैं। उदाहरण के लिए, स्वलीनता के निहितार्थ एक बहुत छोटे बच्चे के लिए अलग और किशोरों के लिए अलग हो सकते हैं। विकलांगताएँ अलग तरह से काम करती हैं और कई विकलांगताएँ अलग-अलग बच्चों के साथ अलग तरह से काम करती हैं। स्नायु सम्बन्धी (न्यूरोलॉजिकल) कठिनाइयाँ बहुत सारी हैं और हालाँकि इनका एक व्यापक पैटर्न है, लेकिन कई बार आपको यह देखना पड़ेगा कि वास्तव में बच्चे के साथ क्या हो रहा है, तब आप उसके प्रति सही प्रतिक्रिया दिखाने में सक्षम होंगे। आज हम जहाँ हैं, उसके हिसाब से ऐसा कर पाना नियमित स्कूल या प्रणाली के लिए कठिन है। क्या यह असम्भव है? हरगिज़ नहीं। हमें इस दिशा में काम करना है और जब तक हम एक ऐसे बिन्दु पर नहीं पहुँच जाते हैं जहाँ हमारा सिस्टम इसके लिए तैयार हो जाए, तब तक हमें बहुत सारे समायोजन करने होंगे। हो सकता है कि ये पूरी तरह से एक आदर्श समावेशन के समान न हों क्योंकि यदि आप बच्चे के दृष्टिकोण से देखें तो उस बच्चे का ऐसे स्कूल में होने का क्या उपयोग है जिसमें बच्चे को सँभालने की क्षमता नहीं है और अगले कुछ वर्षों में इसकी सम्भावना भी नहीं है।

इसे देखने का एक तरीक़ा यह है कि हम चाहते हैं कि ये बच्चे दूसरे बच्चों के साथ रहें और सीखें। लोग अच्छे हैं, देखरेख करने वाले हैं, खुले विचारों के हैं और समायोजन करने के लिए तैयार हैं। लेकिन कई बार इतना काफ़ी नहीं होता क्योंकि अगर हम बच्चे के विकास के महत्त्वपूर्ण वर्षों के दौरान हस्तक्षेप न करें तो हम बहुत कुछ खो बैठते हैं। जिसे सुधारा या रोका जा सकता था, उसे सिर्फ़ इसलिए नहीं रोका जा सका क्योंकि ऐसे लोग उपलब्ध नहीं थे जो ऐसे महत्त्वपूर्ण समय में काम करने का मतलब समझते हों जब हस्तक्षेप के द्वारा विकलांगता के प्रभाव को कम किया जा सकता है, भले ही वह विकलांगता को दूर न कर सके।

कुछ राज्यों ने एक बहुत अच्छी प्रणाली स्थापित की है जो कि खण्ड/ब्लॉक स्तर तक और कई बार संकुल/क्लस्टर स्तर तक पहुँचती है, जबकि कुछ अन्य ऐसे हैं जिन्होंने इसे किया तो है लेकिन अधिक सफल नहीं हो पाए। उन्होंने योग्य लोगों को काम पर रखा है जो बच्चों की स्क्रीनिंग करते हैं, उनके साथ व्यक्तिगत रूप से काम करते हैं क्योंकि सरकारी स्कूल प्रणाली की वास्तविकता यह है कि स्कूल छोटे हैं और व्यापक रूप से फैले हुए हैं। इसलिए प्रत्येक स्कूल के लिए एक विशेष शिक्षक को रखने की बजाय यह तरीक़ा अधिक कारगर लगता है। ब्लॉक स्तर पर 5-6 लोग (फिज़ियोथेरेपिस्ट, स्पीच थेरेपिस्ट, विशेष शिक्षक आदि) हैं, जो श्रवण दोष, चलन अक्षमता, तन्त्रिका सम्बन्धी कठिनाइयों वाले बच्चों के साथ काम करने के योग्य हैं (एक आदर्श स्थिति में— वास्तव में, आपको हर ब्लॉक में इतने योग्य लोग नहीं मिलते हैं)। बच्चे ऐसे किसी केन्द्र में आते हैं या ये शिक्षक उनके घरों या स्कूलों में जाते हैं। यह आदर्श स्थिति नहीं है लेकिन वास्तव में लक्ष्य की ओर बढ़ने से मेरा यही तात्पर्य है कि इस तरह से बढ़ना चाहिए जो सम्भव हो। बेंगलूरु में आप बहुत कुछ कर सकते हैं लेकिन अगर आप कर्नाटक के यादगीर या बीदर या बागलकोट के ब्लॉक में जाएँ तो ऐसी विशेषज्ञता बहुत कम मिल पाती है। यहाँ तक कि अगर आप आर्थिक रूप से अच्छे स्पीच थेरेपिस्ट, फिज़ियोथेरेपिस्ट और विशेष शिक्षक को काम पर रखने में सक्षम हों भी तो समस्या उपलब्धता की है। हमारे पास कुछ स्थानों में समूहबद्ध विशेषज्ञता है लेकिन प्रसार उपलब्ध नहीं है।

एक चीज़ और है जो हमने नहीं की है या पर्याप्त रूप से नहीं की है या थोड़ी बहुत की है— वह यह कि सेवापूर्व शिक्षक-शिक्षा में विकलांग बच्चों के साथ काम करने के अभ्यासों, विचारों और तरीक़ों को यथेष्ट स्थान नहीं दिया है। किसी नियमित स्कूल शिक्षक की कक्षा में विकलांगता वाले बीस बच्चे तो नहीं होंगे, केवल एक होगा। इसलिए यदि आपके पास ऐसा एक बच्चा है तो आप क्या कर सकते हैं? ऐसे कौन-से संकेत हैं जिन पर आपको ध्यान देना है, जिसकी आपको चिन्ता करनी है? ऐसे कौन-से संकेत हैं जिन पर आपको कोई ठप्पा लगाने की जल्दी में नहीं होना चाहिए? किसी बच्चे पर एकदम से ठप्पा लगाने के ख़तरे भी उतने ही बुरे हैं। इन पहलुओं को नियमित शिक्षक-शिक्षा का हिस्सा होना चाहिए, विशेष रूप से शुरुआती वर्षों में क्योंकि बाद के वर्षों में यह अकसर बहुत मुश्किल होता है। मैं प्री-स्कूल और प्रारम्भिक प्राथमिक कक्षाओं के बारे में बात कर रही हूँ यानी तीन से आठ वर्ष की आयु के बच्चों की। स्पष्ट और साफ़ नज़र आने वाली विकलांगता की स्थिति में शिक्षकों को इसे सँभालने के कुछ तरीक़ों को ज़रूर जानना चाहिए— ऐसे छोटे-छोटे सरल तरीक़े जिन्हें व्यावहारिक रूप से करना सम्भव हो, ना कि आदर्शवादी असम्भव विचार। जैसे अगर किसी बच्चे को

देखने में दिक़्क़त पेश आती हो तो उसे कक्षा में आगे बिठाने जैसा सहज सामान्य तरीक़ा। नियमित शिक्षक-प्रशिक्षण में इस तरह की बातों को जोड़ने की दिशा में हमें अभी बहुत लम्बा रास्ता तय करना है।

दूसरी समस्या संरचनात्मक है। भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) विकलांग बच्चों के लिए शिक्षक-प्रशिक्षण का ध्यान रखती है और राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एनसीटीई) नियमित शिक्षक-प्रशिक्षण का ध्यान रखती है। हमें इन दोनों को साथ लाना होगा। आरसीआई सामाजिक न्याय और अधिकारिता मन्त्रालय का हिस्सा नहीं हो सकती— इसे मानव संसाधन विकास मन्त्रालय का हिस्सा होना चाहिए।

हमें शायद कुछ विचारों की शुद्धता पर पूरी तरह से ध्यान केन्द्रित करने की धारणा से हटकर सोचना होगा। समावेशन के अपने विशुद्ध रूप में बहुत लम्बे समय तक और बड़े पैमाने पर बने रहने की सम्भावना नहीं है। हमें इस स्थिति तक पहुँचने में कम से कम 50 साल लगेंगे कि जब हर स्कूल विकलांग बच्चे की देखभाल और शिक्षित करने के कार्य का 'स्वागत' करेगा और उस 'योग्य' होगा। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हम इसके लिए काम नहीं करें। हम जो कुछ भी करें, उसमें समावेशन का सन्देश सदा अपने शुद्धतम और आदर्श रूप में अन्तर्निहित होना चाहिए। लेकिन वहाँ तक पहुँचने के लिए हमें कई कार्य करने होंगे। हमें कोई विकल्प केवल इसलिए नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि हम किसी निश्चित शुद्ध विचार से चिपके रहना चाहते हैं। ऐसे कई लोग हैं जो कहेंगे कि 'सभी विशेष स्कूलों को बन्द कर दिया जाए'। ऐसा करने का मतलब है एक ऐसी प्रणाली को नष्ट करना जिसने बहुत अच्छा काम किया है और जो विकलांग बच्चों के परिवारों के मन में एक मज़बूत विकल्प के रूप में अपना स्थान बनाए हुए है। हम इन्हीं संस्थानों की वजह से यहाँ तक पहुँचे हैं। हमें इन संस्थानों के कुछ अभ्यासों को नियमित स्कूल प्रणाली में शामिल करने का प्रयास करना होगा; शिक्षक-शिक्षा के चारों ओर काम करना होगा; और, जहाँ भी विकलांग बच्चों की पहचान की जाए वहाँ अधिगम सामग्रियों/साधनों/उपकरणों के लिए बजट बढ़ाना होगा।

पाठ्यक्रम और आकलन के लचीलेपन पर ध्यान देना सबसे महत्त्वपूर्ण है। हम ऐसा नहीं करना चाहते हैं— परीक्षाएँ अलंघनीय (sacrosanct) हैं और हमें उसके चारों ओर काम करने की कोशिश करनी चाहिए। यदि आपके पास अधिगम की अक्षमता वाला बच्चा है, तो हमें सफल होने में उसकी मदद करनी चाहिए। हमें वैकल्पिक शिक्षण और आकलन के रास्ते खोजने चाहिए जो किसी भी अन्य रास्ते की तरह कठोर और वैध हों। हमारी सहायता के लिए दुनिया भर के पर्याप्त शोध मौजूद हैं। हमें एक ऐसी प्रणाली बनानी होगी जो ऐसा करने का अवसर और प्रोत्साहन प्रदान करे।

किशोरावस्था के दौरान विकलांग बच्चों को कैसा महसूस होता है, इसकी भी पर्याप्त समझ हमें नहीं है। उनके शरीर, उनके भावनात्मक जीवन... स्वलीनता स्पेक्ट्रम के अतिक्रियाशील बच्चे; शारीरिक तौर पर विकलांग किन्तु बहुत तेज़ दिमाग वाले बच्चे; अधिगम की अक्षमता वाले समूह में विभिन्न स्तर रखने वाले बच्चे; बौद्धिक रूप से अक्षम बच्चे —इन सबके साथ किशोरावस्था के दौरान क्या होता है? क्या कुछ अलग होता है— उनकी भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ; उनके बदलते विचार; सौन्दर्य के बारे में उनकी प्रतिक्रिया; यौन आकर्षण; अपने शरीर में होने वाले परिवर्तन को सँभाल सकना। ये ऐसी चीज़ें हैं जिन्हें हम पर्याप्त रूप से समझ नहीं पाए हैं क्योंकि हम यह मानकर चलते हैं कि विकलांग बच्चे अलग होते हैं। हम अपने विकलांग बच्चों को किशोरावस्था और युवावस्था के लिए तैयार नहीं करते हैं।

सामाजिक समावेशन की दिशा में कोई भी क़दम उठाने के लिए यह बहुत महत्त्वपूर्ण होने वाला है। क्योंकि अगर बच्चे उन सारी चीज़ों को सँभालने में सक्षम नहीं होते हैं जिन्हें उन्हें सँभालना चाहिए तो उन्हें हमेशा संघर्ष करते रहना पड़ेगा। जो बच्चे दुनिया में कहीं भी जाने या अपने दम पर जीने में सक्षम हैं, उन्हें भी लगातार संरक्षण की आवश्यकता होगी। सभी बच्चों को देखभाल की आवश्यकता नहीं होती, इसलिए एक बिन्दु के बाद लगातार उनकी रक्षा करना बच्चे के विकास के लिए नकारात्मक और हानिकारक बन जाता है। सुरक्षा के मुद्दे बहुत बड़े हैं— भावनात्मक, शारीरिक। अनुचित व्यवहार का ख़तरा हमेशा बना रहता है, उससे बचा नहीं जा सकता— कुछ बच्चों को हमेशा दूसरों की तुलना में अधिक सुरक्षा की आवश्यकता होगी। इसलिए बच्चे के चारों ओर एक सहायता तन्त्र का निर्माण बहुत महत्त्वपूर्ण है, लेकिन यह मान लेना कि सभी विकलांग बच्चे ख़ुद की रक्षा करने में असमर्थ हैं, एक चरम प्रतिक्रिया है।

साथ ही बहुत जटिल अन्दाज़ में स्थितियों का जवाब देने से परिवारों को बहुत परेशानी होती है। कुछ सरल छोटे विचार जो कारगर होते हैं और जिन्हें माँ या बच्चे या दोस्त वास्तव में कर सकते हैं—अकसर हमारे ज़ेहन से निकल जाते हैं। यह बात हमारे सभी बच्चों पर लागू होती है। हमें कई चीज़ें बदलनी होंगी और कभी-कभी ये बहुत छोटी चीज़ें होती हैं। और ऐसा करने की ज़िम्मेदारी सिस्टम की है। लेकिन मुझे यह भी लगता है कि एक सिद्धान्त के रूप में यह कल्पना करना कि विकलांग बच्चे स्थिति का सामना नहीं कर सकते, उनकी गरिमा का अपमान करना है। यह तो ऐसा ही हुआ कि जैसे मैं

किसी ऐसी कक्षा में हूँ जिसमें 24 घण्टे इतालवी बोली जाती है, सारा साहित्य इतालवी में है और उनका सम्पूर्ण सांस्कृतिक व्याकरण मेरे लिए पूरी तरह से अनजाना है तो मैं उस कक्षा में बिलकुल अक्षम हो जाऊँगी। हमारे विकलांग बच्चे नियमित हालातों में बिलकुल ऐसा ही महसूस करते हैं, फिर चाहे वह कक्षा हो या खेल का मैदान या बाज़ार। बाज़ार और खेल के मैदान जैसी अनौपचारिक जगहों पर किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा मध्यस्थता की जा सकती है जो उन्हें बहुत अच्छी तरह से जानता हो लेकिन कक्षा में वे अकसर अकेले पड़ जाते हैं।

इसलिए कक्षाओं को फिर से इस तरह डिज़ाइन करने में सक्षम होना जिसमें सभी को शामिल किया जा सके, एक ऐसी चुनौती है जिसके लिए हम सभी को कार्य करना होगा और कई शिक्षकों ने ऐसा किया भी है। वे ऐसा कर पाए क्योंकि उन्हें प्रशिक्षित किया गया है या इसलिए क्योंकि वे अच्छे शिक्षक हैं और जो बच्चे उनके पास आते हैं, उन्हें वे बच्चा ही मानते हैं। तकनीकी रूप से भले ही वे बड़ी-बड़ी चीज़ें नहीं कर सकते हों लेकिन अन्ततः उनके पास ऐसे बच्चे होंगे जो अपने मौजूदा वातावरण में कुछ चीज़ों को सँभालने में सक्षम होंगे। मैंने दूरदराज़ के स्थानों में ऐसा होते हुए देखा है । क्योंकि बच्चे के पास जाने के लिए कोई और जगह नहीं है, सिवाय गाँव के स्कूल के। माता-पिता दोनों पूरे दिन मेहनत-मज़दूरी करते हैं, दादा-दादी भी काम पर जाते हैं, बच्चे की देखभाल करने वाला कोई नहीं होता इसलिए बच्चा भाई-बहन के साथ स्कूल चला आता है। यह बहुत क़िस्मत की बात है कि शिक्षक उसका स्वागत करते हैं और बच्चा चीज़ों को सीखना शुरू कर देता है, उन्हें करना शुरू कर देता है। अब सम्भव है कि अगर इस बच्चे को उसके जीवन के सही चरण में सही तरह की थेरेपी, सही तरह का शैक्षिक इनपुट तथा सही तरह की अन्य सहूलियतें मिलतीं तो उसकी प्रगति बहुत बेहतर होती। लेकिन जब आप स्कूल में जाते हैं और उन परिस्थितियों में आप एक प्रसन्न बच्चे को देखते हैं जो काफ़ी कुछ कर रहा है, तो यह बहुत असाधारण बात है। इसका कारण यही है कि शिक्षक ने उस बच्चे को एक बच्चे के रूप में माना।

दूसरी ओर एक ऐसा शिक्षक है जिसने यह सब नहीं देखा है, जिसे इन बातों की कोई समझ नहीं है, जिसकी कक्षा में पचास बच्चे हैं, उसे किसी प्रकार का कोई समर्थन नहीं दिया जाता, तो उससे इन बातों की अपेक्षा करना और फिर यह कहना कि शिक्षक ध्यान नहीं देता, एकदम अनुचित है। हमें सन्तुलन खोजना होगा, हम किसी नायक पर निर्भर नहीं हो सकते। इसकी ज़िम्मेदारी एक ऐसी प्रणाली पर होनी चाहिए जो बच्चों की मदद करे, समाधान सरल और स्थायी हों और तीसरी बात, शुद्धतावादी विचारों को छोड़ें, ऐसे समायोजन और परिवर्तन करें जो किए जा सकते हैं। वो करें जो अभी सम्भव है।

कुछ संरचनात्मक और प्रणालीगत मुद्दों को हल करना होगा—शिक्षक-प्रशिक्षण में विकलांगता प्रशिक्षण को एकीकृत करना; आकलन की एक वैकल्पिक प्रणाली बनाना, पाठ्यक्रम के साथ ऐसे प्रयोग करना कि जो वास्तव में सभी बच्चों को सम्बोधित करें। मुझे लगता है कि इन बातों के लिए सिस्टम को तैयार होना होगा। जहाँ भी विकलांग बच्चे हैं, उन स्कूलों को ऐसे संसाधनों तक पहुँचने की सुविधा होनी चाहिए। हर स्कूल में विकलांग बच्चे नहीं होते। लेकिन एक बार जब आप एक विकलांग बच्चे की पहचान कर लेते हैं तो शिक्षक के पास उन संसाधनों की पहचान करने की क्षमता होनी चाहिए जो स्कूल में मौजूद नहीं हैं लेकिन कुछ स्कूलों के संकुल के संसाधन केन्द्र में मौजूद हैं। यह वह प्रणाली है जो बड़े तथा भौगोलिक रूप से फैले हुए सिस्टम में काम करती है। हमारे वर्तमान ढाँचे में हर स्कूल में ऐसे संसाधन नहीं होंगे। अगर हम आगे जाकर अपना ढाँचा बदलते हैं तो वह अलग बात है।

नया पीडब्ल्यूडी अधिनियम 2016 बहुत व्यापक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) में जो भी सिफ़ारिश की गई है वह 2016 के पीडब्ल्यूडी अधिनियम के अनुरूप है। अब सवाल यह है कि हम विकलांग लोगों को, जो अपने अधिकारों के लिए नहीं लड़ सकते, कैसे सशक्त बनाएँ? देश भर में कई समूह हैं और उनमें से अधिकांश अभिभावकों के समूह के रूप में शुरू हुए क्योंकि वे ही हैं जो इस स्थिति को महसूस करते हैं, उसके लिए संघर्ष करते हैं और जिन्हें सबसे अधिक लड़ना पड़ता है। इसलिए अभिभावकों के संघों ने विकलांग लोगों के पक्ष-समर्थन के पूरे आन्दोलन का नेतृत्व किया है। फिर स्वयं विकलांग लोग भी हैं, जिन्होंने शिक्षा प्राप्त की है, जो समुदाय के साथ काम करना चाहते हैं और जिन्होंने महसूस किया है कि उन्हें एक साथ मिलकर ज़ोरदार आवाज़ उठानी है। इसके अलावा ऐसे संगठन भी हैं जिन्होंने विकलांग बच्चों के साथ कई वर्षों तक काम किया है। पीडब्ल्यूडी अधिनियम 2016 स्वयं इसी का परिणाम है। यह पहला अधिनियम नहीं है लेकिन जिस तरह के बदलाव आए हैं वे इसी राष्ट्रीय स्तर के पक्ष-समर्थन का परिणाम हैं।

लेकिन छोटे स्थानों में, उन जगहों पर जहाँ इस तरह की सहायता उपलब्ध नहीं है, वहाँ माता-पिता के लिए पहली आवाज़ उठाना बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इस बारे में कोई भी उनसे अधिक नहीं जानता, ख़ासकर तब जब बच्चा छोटा होता है। उन्हें सवाल पूछने हैं, सेवाओं की माँग करनी है और उनमें योगदान देना है, प्रोत्साहित करना है तथा सभी उपलब्ध साधनों का उपयोग करना है। कई बार तो परिवारों को पता ही

नहीं होता है कि क्या उपलब्ध है और ज़ाहिर है कि इन चीज़ों तक वित्तीय और भौतिक पहुँच सीमित है। इसलिए विचार यह है कि प्रणाली परिवार तक पहुँचे, परिवार प्रणाली तक नहीं। लेकिन वास्तव में हमारे विशाल देश में यह सम्भव नहीं है। हमें प्रणाली में उपलब्ध सभी संरचनाओं का उपयोग करना होगा जैसे शैक्षिक संरचना, ग़ैर-सरकारी संगठन और नागरिक समाज संगठन। यह ज़िम्मेदारी राज्य की है लेकिन लोगों को पंचायतों, एसएमसी और अन्य स्थानों में बातचीत शुरू करनी है और पता लगाना है कि संसाधनों तक कैसे पहुँचा जाए। यह कहीं जाने और माँगने की बात नहीं है; वरन नए विचारों के बारे में सोचने की बात है। ऐसा नहीं है कि सिस्टम के लोग मदद नहीं करना चाहते हैं या उन्हें रुचि नहीं है। यदि कोई माता-पिता किसी ज़िले के किसी ब्लॉक में एक अधिकारी से एक स्पीच थेरेपिस्ट की माँग करते हैं तो अधिकारी उसे कहाँ से लाएगा? लेकिन अगर माता-पिता उसे बताते हैं कि राज्य की राजधानी में स्पीच थेरेपिस्ट प्रशिक्षण का एक कॉलेज है और वे अपने अन्तिम वर्ष के कुछ विद्यार्थियों का ब्लॉक प्लेसमेंट करने को तैयार हैं तो इससे अधिकारी को सहायता मिलेगी। तब ऐसा हो सकता है कि जब तक वह प्रशिक्षक वहाँ है, उस दौरान वह एक या दो अभिभावकों को थेरेपी सिखा दे ताकि वे बाद में भी उसे जारी रख सकें। तो हमें समाधान और विचारों के बारे में सोचना होगा। किसी से इसकी माँग करना एक तरीक़ा है, लेकिन मुझे पता नहीं क्यों लगता है कि यह पर्याप्त नहीं है। हमें एक साथ मिलकर इसके बारे में पता लगाना होगा, माता-पिता को अगुवाई करनी होगी क्योंकि वे समझते हैं कि उनके बच्चे को क्या चाहिए।

एक आख़िरी बात जो मैं कहना चाहती हूँ, वह यह है कि विकलांग बच्चों का जो डेटा हमारे पास है, वह बहुत विश्वसनीय नहीं है। हमें इसकी बेहतर समझ होनी चाहिए ताकि हम यह पता लगा सकें कि जो विकलांग बच्चे स्कूल में हैं, उनके साथ क्या हो रहा है, कौन स्कूल जा रहा है और कौन नहीं।



इन्दु प्रसाद वर्तमान में स्कूल ऑफ़ एजुकेशन और स्कूल ऑफ़ कंटीन्यूइंग एजुकेशन एण्ड यूनिवर्सिटी रिसोर्स सेंटर, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में निदेशक के रूप में कार्यरत हैं। वे 2005 से अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन का हिस्सा हैं। उनके काम के मुख्य क्षेत्र शिक्षक-शिक्षा (नीति, पाठ्यक्रम, अभ्यास) और केन्द्र और राज्य सरकारों के साथ शिक्षा नीति पर काम करना है। इससे पहले उन्होंने लगभग पन्द्रह साल तक विकलांग बच्चों के साथ काम किया है। उनसे indu@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

समावेशी शिक्षा :
सुसंगत समझ के निर्माण में चुनौतियाँ

डॉ. अंकुर मदान

पिछले छह वर्षों से मैं समावेशी शिक्षा का स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम पढ़ा रही हूँ और एक प्रशिक्षक के रूप में साल दर साल मुझे अपने विद्यार्थियों के काफ़ी सन्देहों का सामना करना पड़ता है। इस पाठ्यक्रम में विद्यार्थियों को सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली की वास्तविकताओं से अवगत कराया जाता है, अतः वे इस बात से अच्छी तरह से वाक़िफ़ हो जाते हैं कि भारत के अधिकांश स्कूलों का संचालन के दौरान किन अवरोधों से सामना होता है। अब तक वे ऐसी पर्याप्त कक्षाएँ देख चुके होते हैं जिनमें संसाधनों की बहुत कमी होती है। वे ऐसे शिक्षकों से मुलाक़ात कर चुके होते हैं जो अल्प प्रशिक्षित हैं और जिनमें स्वयं कार्य करने की कोई प्रेरणा नहीं होती। वे ऐसे बच्चों के साथ बातचीत कर चुके होते हैं जो अपने निम्न अधिगम स्तर के साथ ऐसे कठोर पाठ्यक्रम का अर्थ खोजने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, जो उनके तात्कालिक सन्दर्भों से बहुत दूर है।

इसलिए जब मैं उन्हें समावेशी शिक्षा सम्बन्धी *विचार* के बारे में बताती हूँ और इसके कार्यान्वयन में समर्थन के लिए मानव अधिकारों व सामाजिक न्याय के उचित क़ानूनों और नीति के दस्तावेज़ों पर बहस को बढ़ावा देती हूँ तो वे मेरे प्रस्तावों को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। वे व्यावहारिक रूप से इन आदर्शों को साकार करने के बारे में बहुत कठिन सवाल उठाते हैं। ऐसे में मैं अपने इन विद्यार्थियों के सामने हिम्मत के साथ अपने चेहरे पर मुस्कान बरक़रार रखते हुए इस मुद्दे को दृढ़ता के साथ रखने की कोशिश करती हूँ तब मुझे एक और समस्या का सामना करना पड़ता है। मैं उन्हें भारतीय सन्दर्भ में समावेशी शिक्षा की अवधारणा की एक ऐसी सुसंगत तथा स्पष्ट समझ प्रदान करने में ख़ुद को असमर्थ पाती हूँ जो इसके कार्यान्वयन के लिए स्पष्ट दिशानिर्देशों और अनुशंसाओं की रूपरेखा दे सकती हो। जिन अनेक सन्दर्भों और पठन सामग्रियों (रीडिंग्स) का उपयोग मैं कक्षा में करती हूँ, वे पश्चिमी संसार की हैं, जहाँ एक अवधारणा और अभ्यास के रूप में समावेशी शिक्षा न केवल कई वर्षों तक शिक्षा के विमर्शों का हिस्सा रही है, बल्कि इसकी उत्पत्ति और अभ्यास का ऐतिहासिक सन्दर्भ हमसे बहुत अलग है।

इसलिए अपनी कक्षा में मुझे भारत में सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली में समावेशी शिक्षा के आदर्शों को लागू करने के लिए ठोस, व्यावहारिक समाधान प्रदान करने से सम्बन्धित शैक्षणिक चुनौतियों का सामना करने के साथ-साथ अपने विद्यार्थियों को कुछ सहज सवालों के जवाब देने में भी मदद करनी होती है, जैसे : *समावेशी शिक्षा क्या है? यह किसके लिए है? इसे व्यवहार में कैसे प्राप्त किया जा सकता है?*

मैं इस लेख में समावेशी शिक्षा की एक सुसंगत समझ तक पहुँचने से सम्बन्धित कुछ अवधारणात्मक मुद्दों पर विस्तार से चर्चा करूँगी। यह बताने का प्रयास भी करूँगी कि सामाजिक, सांस्कृतिक और प्रासंगिक कारकों के व्यावहारिक विचारों के आधार पर इस समझ का निर्माण करना संगत क्यों है जिनके तहत देश में सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली अमल में है। और अन्त में सुझाव दूँगी कि समावेशी शिक्षा के अभ्यास में अभिन्न रूप से जुड़े हुए लोगों को शामिल करके इस विषय में अकादमिक अध्ययन को ज़मीनी स्तर पर किस तरह उत्पन्न किया जा सकता है।

समावेशी शिक्षा की प्रकृति पर प्रश्न करना

अब तक भारतीय सन्दर्भ में समावेशी शिक्षा पर सन्दर्भ के लिए अकादमिक और अनुभवजन्य रूप से मज़बूत स्रोतों को खोजने का संघर्ष कई स्तरों पर होता आया है। एक, भारत में समावेशी शिक्षा अभी हाल ही में लोकप्रिय हुई, जब नब्बे के दशक के उत्तरार्ध में नीति के दस्तावेज़ों में इसकी उपस्थिति धीरे-धीरे दर्ज होने लगी। इस बारे में बहुत थोड़ा-सा अकादमिक अध्ययन ही अब तक प्रकाशित हुआ है और सार्वजनिक रूप से सुलभ है। दो, समावेशी शिक्षा में अनुभवजन्य अनुसंधान का आधार पिछले दो दशकों में उत्पन्न हुआ है और इसलिए इसका क्षेत्र और गुणवत्ता दोनों सीमित हैं (लिंडसे, 2007; रोज़, 2017; सिंगल, 2006)। तीन, नीति दस्तावेज़ों में अवधारणा का निरूपण ग़लत व्याख्याओं और अस्पष्टता से भरा हुआ है, जिससे इसकी केवल एक धुँधली अवधारणात्मक समझ विकसित हो सकी है। इसके अलावा समावेशी शिक्षा को अभी भी देश में मुख्यधारा के शिक्षा विमर्श का एक अभिन्न अंग नहीं माना जाता है। इसकी इसी हाशिया स्थिति ने इसे भारत में शिक्षा अध्ययन के क्षेत्र में कोई भी नजर आने वाला उल्लेखनीय योगदान देने से रोक दिया है।

ये तो हुए भारत में समावेशी शिक्षा पर अकादमिक अध्ययन के निर्माण से सम्बन्धित विशिष्ट मुद्दे। लेकिन पश्चिमी सन्दर्भों में भी, जहाँ इस अवधारणा पर बहुत अधिक ध्यान दिया गया है, समावेशी शिक्षा की कई व्याख्याएँ मिलती हैं और यह एक

विवादास्पद धारणा बनी हुई है। आर्मस्ट्रांग, आर्मस्ट्रांग और स्पैंडागॉ (2010) ने इस धारणा को स्पष्ट रूप से समझाने के लिए इस उक्ति का प्रयोग किया है कि *'समावेशन का मतलब अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग है।'* लेखकगण आगे इसकी जटिल प्रकृति का चित्रण करते हुए कहते हैं कि समावेशन को बेहतर रूप से इस तरह से जाना जाता है कि यह क्या नहीं है बजाय इसके कि यह क्या है।

हालाँकि समावेशी शिक्षा की एक सुसंगत परिभाषा तक पहुँचने के कई प्रयास किए गए हैं, किन्तु अकादमिक विद्वान और अभ्यासकर्ता एक आम सहमति तक पहुँचने में अन्तर्निहित कठिनाइयों की ओर इशारा करते हैं। समावेशी शिक्षा मूल रूप से क्या थी और अब यह क्या हो गई है— इन दोनों दृष्टिकोणों के बीच का विभाजन बड़ी कठिनाई पैदा करता है। इसकी उत्पत्ति का पता लगाते हुए आर्मस्ट्रांग, आर्मस्ट्रांग और स्पैंडागॉ (2010) कहते हैं कि समावेशी शिक्षा पहुँच और भागीदारी के उन प्रतिबन्धों के लिए एक प्रतिक्रिया और चुनौती के रूप में पैदा हुई थी जो मुख्यधारा में शामिल करने और एकीकरण के अभ्यास के कारण सामने आ खड़े होते थे। अभिभावकों, शिक्षकों और विकलांगता के कार्यकर्ताओं द्वारा उठाए गए इस आन्दोलन ने *लोकतांत्रिक और समावेशी समाज बनाने में स्कूलों की भूमिका की परिकल्पना की*। लेकिन व्यवहार में सिद्धान्तों का कोई स्पष्ट समूह नहीं है जो इसके कार्यान्वयन का मार्गदर्शन करे। समावेशी शिक्षा को केवल बयानबाज़ी तक सीमित कर दिया गया है जो मूल मार्गदर्शी सिद्धान्तों के साथ किसी भी गम्भीर सम्बन्ध के बिना समावेशी विमर्श के कुछ 'अच्छा लगने' वाले पहलुओं को अंगीकार करती है। इसलिए समावेशी शिक्षा की परिभाषाएँ वास्तविक अभ्यासों के विवरणों बनाम जो होना चाहिए के आधार पर बदलती हैं (इंस्कोउ और अन्य, 2006)।

इसी तरह की समस्या कुछ परिभाषाओं में भी है जो या तो बहुत संकीर्ण हैं या बहुत व्यापक हैं, या आंशिक हैं— उन विद्यार्थियों के समूह के आधार पर जिनके लिए यह समावेशी शिक्षा है।

> परिभाषाओं की बहस के इतर, ग्राहम और स्लीव (2007) जैसे लेखकों ने कुछ बुनियादी सवाल उठाए हैं और वे उम्मीद करते हैं कि समावेशी शिक्षा के शिक्षक और अभ्यासकर्ता समावेशी शिक्षा की प्रकृति और इसके अभ्यास के बारे में जानकारी प्राप्त करने के दौरान इन प्रश्नों के उत्तर देने की कोशिश करेंगे। ऑस्ट्रेलिया में मौजूदा प्रथाओं की जाँच के द्वारा शुरू की गई एक प्रबल आलोचना में लेखक निम्नलिखित प्रश्न उठाते हैं : समावेशन की बात करने का क्या मतलब है, यह समावेशी होने से कैसे भिन्न हो सकता है और जिन अभ्यासों से समावेशन किया जा सकता है वे किनके लिए हितकारी होंगे?

इन सवालों पर चिन्तन करने से पर्याप्त रूप से यह स्पष्ट हो जाता है कि समावेशी शिक्षा की अपर्याप्त समझ उस खिंचाव या तनाव से उत्पन्न होती है जो इसके वैचारिक और अवधारणात्मक गठन बनाम व्यवहार में इसकी प्राप्ति के बीच मौजूद है। जैसा कि आर्मस्ट्रांग, आर्मस्ट्रांग और स्पैंडागॉ (2010) संकेत देते हैं कि *समावेशन किसके लिए, किसमें और किस उद्देश्य के लिए जैसे प्रश्नों का उत्तर देने के बाद, हमें यह भी पूछना चाहिए कि समावेशी अभ्यास क्या है?* चूँकि वांछनीय (वैचारिक) साध्य (अभ्यास) से अलग हो सकता है।

नीति में समावेशी शिक्षा

जैसे-जैसे हम इस विरोधाभास को दूर करने के लिए संघर्ष करते हैं, वैसे-वैसे एक और आयाम इस मुद्दे को अधिक जटिल बना देता है— वह है नीति दस्तावेज़ों में समावेशी शिक्षा का निरूपण। यह आयाम भारतीय सन्दर्भ में विशेष रूप से प्रासंगिक है। भारत में समावेशी शिक्षा शब्द का इस्तेमाल नीतिगत दस्तावेज़ों और योजनाओं, जैसे कि नब्बे के दशक में पीआईईडी, डीपीईपी, पीडब्ल्यूडी और एसएसए (2000) में किया गया था। इसके लिए 1994 में स्पेन में सलामांका स्टेटमेंट द्वारा बहुत प्रोत्साहन प्रदान किया गया, जिसमें भारत एक हस्ताक्षरकर्ता था (चौधरी, 2011)। तथापि भारत में समावेशी शिक्षा एक ऐसी अवधारणा के रूप में सामने आई जिसे पश्चिम से मुख्य रूप से अपनी ख़ुशफ़हमी, बाल-केन्द्रित और 'रोमांटिक अपील' (सिंगल, 2005; शर्मा; 2010; अलूर, 2007) के लिए ग्रहण किया गया था। सिंगल (2006) का कहना है कि भारत में समावेशी शिक्षा के साथ पर्याप्त रूप से जुड़ाव नहीं हुआ है। वे आगे बताती हैं कि कई नीतिगत दस्तावेज़ों के साथ-साथ समावेशन पर प्रारम्भिक लेखों में *एकीकरण* और *समावेशन* शब्दों का उपयोग वैकल्पिक रूप से किया गया था, जिससे बहुत अस्पष्टता पैदा हुई और ग़लत अर्थ का निरूपण हुआ।

इसके अलावा उस समय शुरू की गई योजनाओं में भी एक दोहरा दृष्टिकोण अपनाया गया था, जिसमें एक तरफ़ तो विकलांग बच्चों की शिक्षा को नियमित स्कूलों में लागू किया गया और दूसरी तरफ़ विशेष स्कूलों को भी बढ़ावा दिया जाता रहा। वास्तव में समावेशी शिक्षा को विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए उपलब्ध कई विकल्पों में से केवल एक विकल्प के रूप में देखा गया था, न कि स्कूलों में सुधार लाने के तरीक़े के रूप में (लिंडसे, 2007)। इसलिए समावेशी शिक्षा के केवल अस्पष्ट विचार प्रदान करने वाले नीतिगत दस्तावेज़ों के कारण कई मौलिक प्रश्नों, जैसे कि *समावेशी शिक्षा क्या है या*

समावेशी अभ्यासों में क्या शामिल है, के आसान उत्तर नहीं मिल सके।

इन मुद्दों की जाँच करते समय एक बड़ा सवाल उठाया जा सकता है कि *फिर ज्ञान के वैध स्रोत कौन-से हैं जो समावेशी शिक्षा की समझ में योगदान कर सकते हैं?*

अकादमिक अध्ययन को प्रासंगिक सन्दर्भों में स्थित करना

जैसा कि लेख के पूर्व भाग में कहा गया है, भारत में समावेशी शिक्षा एक ऐसी घटना प्रतीत होती है जिसे पश्चिम से उधार लिया गया था और वह भी इस अवधारणा के साथ पर्याप्त आलोचनात्मक जुड़ाव बनाए बिना (सिंगल, 2006)। अतः इसके मूल, उद्देश्य और अनुप्रयोग के कई महत्त्वपूर्ण पहलू उपेक्षित ही रह गए और इसकी केवल आंशिक समझ ही विकसित हो पाई जिससे कई व्याख्याओं और निरूपणों की सम्भावना पैदा हो गई।

जैसे-जैसे हम आगे बढ़ेंगे, यह आवश्यक होगा कि इस क्षेत्र में विकसित होने वाला कोई भी अकादमिक अध्ययन भारत की अनूठी ऐतिहासिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता के साथ-साथ इसके जटिल शैक्षिक परिदृश्य की प्रकृति को भी ध्यान में रखे। कई विद्वानों ने इस रवैये की पुष्टि की है (लिंडसे, 2007; राव, 2001; रोज़, 2017; सिंगल, 2006)। मैं कुछ दृष्टान्तों के साथ इस दृष्टिकोण को प्रमाणित करती हूँ।

मूल का पता लगाना

पश्चिमी संसार में समावेशन की उत्पत्ति का पता लगाते हुए राव (2011) बताते हैं कि विकसित संसार में, परम्परागत रूप से, विकलांग बच्चों को विशेष स्कूलों में भर्ती कराया जाता था। जैसे-जैसे विकलांगता का सामाजिक मॉडल विकसित होता गया, समावेशन को अलगाव की बाधाओं पर क़ाबू पाने और अ-संस्थानीकरण के साधन के रूप में देखा जाने लगा। मार्गदर्शी सिद्धान्तों के रूप में साम्यता और सामाजिक न्याय के साथ समावेशन स्कूल सुधार का प्रतीक बन गया। हालाँकि भारत जैसे देशों में, जहाँ विशेष स्कूल कभी आदर्श नहीं थे, *संस्थागत अलगाव को समावेशी शिक्षा के लिए एक मज़बूत तर्काधार के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता था।*

इसी कारण से, यह आर्थिक तर्क भी बहुत सही नहीं है कि भारत में समावेशी शिक्षा इसलिए अनिवार्य है क्योंकि भारत शिक्षा की समानान्तर प्रणालियों का निर्माण नहीं कर सकता है। राव विशेष शिक्षा पद्धतियों, जिन्हें बस पश्चिम से स्थानान्तरित कर लिया जाता है, की तरह समावेशन के भी एक और 'प्रवृत्ति' बनने के खिलाफ़ चेतावनी देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पश्चिमी समाज में जिस आधार पर समावेशी शिक्षा ने सफलता प्राप्त की, वह हमारे लिए मज़बूत तर्काधार नहीं हो सकता। इसलिए यदि हम समावेशन को अपनाते हैं तो इसकी वजह भी उन उद्देश्यों से उत्पन्न होनी चाहिए जो हमारे ऐतिहासिक और सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में अन्तर्निहित हैं।

इसी तरह समावेशी शिक्षा की समझ विकसित करने के लिए, भारत में विकलांग बच्चों की स्थिति से सम्बन्धित मुद्दों को ऐतिहासिक और सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण से समझना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भारत में जाति, वर्ग और धार्मिक अन्तरों से सम्बन्धित अनूठी विविधता एक जटिल सन्दर्भ है, जिसके भीतर समावेशी शिक्षा की परिकल्पना और अभ्यास किया जाना चाहिए । मैं अपनी बात को स्पष्ट करने के लिए कुछ पहलुओं का संक्षेप में उल्लेख करूँगी।

भारत में विकलांगता

घई (2015) का कहना है कि भारत में विकलांगता की कोई एकीकृत परिभाषा नहीं है। उनका मानना है कि भारतीय सन्दर्भ में विकलांगता के अर्थ को समझने के लिए हमें सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को समझना होगा। इसकी जड़ें पौराणिक और धार्मिक मान्यताओं में मज़बूती से जमी हुई हैं, जिसमें विकलांगता और विकलांग लोगों को *बुरा, दोषपूर्ण* या *अलौकिक क्षमताओं* वाला माना जाता है। यही वजह है कि विकलांगता की धारणा को विविध और जटिल अर्थ दे दिए जाते हैं। इसके अलावा ऐतिहासिक दृष्टिकोणों के बारे में व्यवस्थित अनुसंधान की कमी के कारण, समकालीन संरचनाओं ने विकलांग लोगों को चिकित्सीय मॉडल की प्रबलता के कारण नकारात्मक पहचान के रूप में चित्रित किया है। क्योंकि चिकित्सीय मॉडल में एक विकलांग व्यक्ति की पहचान केवल उसकी हालत और उसमें जो 'कमी' है वहीं तक सिमटकर रह जाती है (घई, 2001)। आगे वे समाज में विकलांगता वाले लोगों को हाशिए पर रखने पर दुख प्रकट करते हुए कहती हैं :

'उनका जीवन असहाय निराशावाद, राजनीतिक जड़ता और अपर्याप्त सामाजिक नवाचारों के दुष्चक्र में उलझा रहता है, जो दीर्घकालिक समाधान की पेशकश नहीं करते।'

विकलांगता का एक महत्त्वपूर्ण पहलू जिसे भारतीय सन्दर्भ में नज़रअन्दाज़ नहीं किया जा सकता, वह है ग़रीबी के साथ इसका घनिष्ठ सम्बन्ध। भारत जैसे विकासशील देशों में दुर्बलता और असमर्थता का सबसे बड़ा कारण ग़रीबी है। विकलांगों और उनके परिवारों के जीवन पर इसका प्रभाव संरचनात्मक और व्यावहारिक अवरोधों का कारण बनता है जो अत्यधिक शक्तिहीनता और अरक्षितता की भावनाओं को जन्म देता है (घई, 2001)। ग़रीबी, लिंग, जाति और ग्रामीण-शहरी विभाजन से विकलांगता को जो हानि पहुँचती है, वह

कलंक और ठप्पा लगाने (लेबलिंग) से और अधिक बढ़ जाती है। इससे देश में विकलांग लोगों की संख्या का सही-सही आकलन करने में जटिलताएँ पेश आती हैं। साथ ही विभिन्न प्रकार की विकलांगता को सूचित करने के लिए कई श्रेणियों और असंगत शब्दावली का उपयोग करने की समस्याएँ भी हैं। भारत में विकलांग बच्चों की शिक्षा पर किसी भी प्रामाणिक चर्चा में इन सभी कारकों पर विचार करने को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

शिक्षा का परिदृश्य

भारत की शिक्षा प्रणाली में विविधता और विशालता की परतें हैं। यहाँ स्कूली आयु वर्ग के बच्चों की संख्या संसार भर में सबसे अधिक है और प्राथमिक शिक्षा प्रणाली का अनुमाप बहुत बड़ा है और शायद संसार भर के नीति-निर्माताओं और योजनाकारों के लिए इसकी कल्पना करना कठिन है (लिटिल, 2010 जैसा कि सिंगल, 2014 में उद्धृत है)। हाल के वर्षों में कई महत्त्वपूर्ण नीति और विधायी चिह्नकों या मार्करों (जैसे कि एसएसए, 2001 और आरटीई, 2009) की प्रेरणा से भारत ने अपने लगभग 98 प्रतिशत बच्चों को स्कूलों में दाख़िला दिलाने में ज़बरदस्त सफलता हासिल की है (यूनिसेफ, 2015)। तथापि प्रतिधारण, पर्याप्त संसाधनों के आवंटन और वितरण, शिक्षक-शिक्षा के मुद्दे और सबसे महत्त्वपूर्ण बात शिक्षा की गुणवत्ता आदि चिन्ता का कारण बने हुए हैं।

जाति और लिंग, बहिष्करण के महत्त्वपूर्ण आयामों के रूप में सामने आते हैं, जिनमें निचली जातियों के बच्चों, खासकर लड़कियों के स्कूल छोड़ देने का जोखिम अधिक होता है (सिंगल, 2014)। कम शुल्क लेने वाले लेकिन ख़राब गुणवत्ता वाले निजी स्कूलों की बढ़ती लोकप्रियता के विपरीत सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली में बच्चों को बनाए रखने का संघर्ष एक और प्रणालीगत चुनौती है जो भारतीय शिक्षा के परिदृश्य पर मँडरा रही है। स्कूल आने वाले विकलांग बच्चों पर उपलब्ध डेटा अत्यधिक विरोधाभासी और असंगत है। यूनेस्को और टीआईएसएस (2019) की हालिया रिपोर्ट के अनुसार भारत में 19 वर्ष से कम आयु के लगभग 78 लाख बच्चे विकलांग हैं। इनमें से, 5 साल तक बच्चों में से तीन-चौथाई और 5-19 आयु वर्ग में एक चौथाई बच्चे किसी भी शैक्षिक संस्थान में दाख़िल नहीं होते हैं। विकलांग बच्चों द्वारा स्कूल छोड़ने की सम्भावना समाज के अन्य वंचित वर्गों, जैसे अनुसूचित जाति और जनजाति, के बच्चों की तुलना में पाँच गुना अधिक है (सिंगल, 2014)। इस परिदृश्य में शिक्षा प्रणाली के भीतर प्रणालीगत चुनौतियों की अनदेखी करना या सिर्फ़ विकलांग बच्चों के सीमित दृष्टिकोण से समावेशी शिक्षा को देखना, प्रतिकूल साबित होने वाला है। इस तरह के संकुचित दृष्टिकोण से देश न तो सभी के लिए शिक्षा के अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है और न ही विकलांग बच्चों की शिक्षा को सार्थक और सशक्त बनाने की परिकल्पना की जा सकती है। देश में समावेशी शिक्षा के किसी भी विचार के लिए इन सभी कारकों को पहचानना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

समावेशी शिक्षा में अकादमिक अध्ययन की रचना करना

मेरा निवेदन यह है कि बेक़द्री और ग़रीबी के कारण जिन मान्यताओं और अत्यधिक उपेक्षा का सामना भारत के बहुसंख्यक विकलांग लोग करते हैं और उसके साथ भारतीय शिक्षा प्रणाली की विविध व जटिल प्रकृति जिस पारिस्थितिक ढाँचे का निर्माण करती है, उसके अन्तर्गत ही समावेशी शिक्षा की प्रकृति का निर्माण किया जाना चाहिए।

इसके अलावा ऐसा अकादमिक अध्ययन जो ज़मीनी स्तर से विकसित होता हो, केवल तभी उत्पन्न हो सकता है जब शोधकर्ता और अभ्यासकर्ता दोनों एक साथ मिलकर सहयोगी के रूप में कार्य करते हैं। तब वे समावेशी अभ्यास के बारे में एक ऐसे ज्ञान का निर्माण करते हैं जो इसमें शामिल लोगों के वास्तविक जीवन के अनुभवों के क़रीब है। यह ज्ञान नीति-निर्माताओं, प्रशासकों, अभिभावकों और शिक्षकों को समावेशी शिक्षा की एक साझा समझ विकसित करने में विभिन्न स्तरों पर योगदान दे सकता है। ऐसी समावेशी शिक्षा, जो उन लोगों की आवश्यकताओं का ध्यान रखे जिनको इसकी ज़रूरत है। विशेष रूप से इस तरह के अध्ययन ऐसे वैचारिक परिवर्तन और नज़रिए को बदलने पर ध्यान केन्द्रित कर सकते हैं जो स्कूलों को सैद्धान्तिक और व्यवहारिक रूप से समावेशन को अपनाने में सक्षम बनाते हैं, जैसे अधिगम के लिए बहिष्करण सम्बन्धी रुकावटें कैसे दूर की जाती हैं, शिक्षकों और अन्य हितधारकों को शिक्षण की विविध आवश्यकताओं वाले बच्चों के साथ काम करने के लिए कैसे तैयार किया जाता है, हितधारकों से सहयोग की माँग कैसे की जाती है और शासन-प्रणाली के मुद्दों, वित्त तथा पाठ्यक्रम और आकलन की कठोरता से कैसे निपटा जाता है (मदान, 2018)।

विद्यार्थियों के तीखे सवालों के ठोस जवाब देने की चुनौती तब तक बनी रहेगी जब तक कि समावेशी शिक्षा में अच्छे तरीक़ों के पर्याप्त उदाहरण यह प्रदर्शित नहीं करते कि सभी अवरोधों के बावजूद समावेशी शिक्षा के लक्ष्यों को कैसे प्राप्त किया जा सकता है। इस बीच यह आवश्यक है कि शोधकर्ता, शिक्षक, प्रशासक, नीति नियोजक और शिक्षाविद मिलकर कार्य करें और समावेशी शिक्षा की एक ऐसी सुसंगत समझ बनाएँ जो इसके सामाजिक-सांस्कृतिक सन्दर्भ में सन्निहित हो, अभ्यास द्वारा सूचित हो और इसकी प्राप्ति में योगदान देती हो।

References

Ainscow, M, Booth, T & Dyson, A. (2006). *Improving Schools, Developing Inclusion*. London: Routledge.

Alur, M. (2007). *The Lethargy of a Nation: Inclusive Education in India*, in L. Barton and F. Armstrong, (eds.). *Policy, experience and change: Cross-cultural reflections on inclusive education*, pp. 91-106. Dordrchet: Springer.

Armstrong, A.C., Armstrong, D. & Spandagou, I. (2010). *Inclusive Education: International Policy and Perspective*. London: Sage.

Ghai, A. (2015). *Rethinking Disability in India*. London: Routledge.

Ghai, A. (2001). *Marginalization and disability: Experiences from the Third World*, in M. Priestley (Ed.). *Disability and the Life Course: Global Perspectives*. Cambridge University Press.

Graham, L. J., and Slee, R. (2008). *An Illusory Interiority: Interrogating the Discourses of Inclusion. Educational Philosophy and Theory*, Vol.40, No. 2.

Lindsay, K. G. (2007). *Inclusive Education in India: Interpretation, implementation and issues. Create Pathways to Access*, 15. University of Sussex.

Madan, A. (2018). *Inclusive Education in India: Concept, Practice and the Way Forward*, in A. Ghai, (Ed.). *Disability in South Asia: Knowledge and experience*. London: Sage.

Rao, S. (2001) *'A Little Inconvenience': Perspectives of Bengali Families of Children with Disabilities on Labelling and Inclusion, Disability & Society*, 16:4, pp. 531-548.

Singal, N. (2014). *Entry, Engagement and Empowerment: Dilemmas for Inclusive Education in an Indian Context*, in L. Florian (Ed.). *The Sage Handbook of Special Education*, Vol 1. (pp.203-216). London: Sage.

Singal, N. (2006). *Inclusive Education in India: International Concept, National Interpretation. International Journal of Disability, Development and Education*, Vol. 53, No. 3, pp. 351–369.

Singal, N. (2005). *Mapping the Field of Inclusive Education: A Review of the Indian Literature. International Journal of Inclusive Education*, 9:4, 331-350, DOI: 10.1080/13603110500138277

UNESCO (2019). *N for Nose: State of the Education Report India: Children with Disabilities*. New Delhi: UNESCO.

UNICEF (2015). Retrieved from: https://www.oxfamindia.org/education/Still-too-many-children-out-of-school.



डॉ. अंकुर मदान अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में पढ़ाती हैं। उनके शिक्षण और शोध का क्षेत्र बाल विकास और समावेशी शिक्षा है। उनसे ankur.madan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

विकलांग बच्चों के लिए अधिगम के अवसर पैदा करना

अनुपमा राय

यदि आप किसी विकलांग बच्चे के माता-पिता हैं तो उसके लिए एक निरापद, सुरक्षित और किफ़ायती अधिगम के अवसर खोजना एक चुनौतीपूर्ण काम है। मैं इस लेख में बताऊँगी कि मैंने अपने बेटे के लिए कौन-कौन से क़दम उठाए।

विकलांग लोगों के लिए रोज़गार को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय केन्द्र (एनसीपीईडीपी) के एक सर्वेक्षण से पता चला है कि भारत में विकलांगता वाले (पीडब्ल्यूडीएस) केवल 1.2 प्रतिशत लोगों ने ही किसी भी तरह की कोई शिक्षा प्राप्त की है। अखिल भारतीय स्कूल स्तर पर किए गए सर्वेक्षण में एनसीपीईडीपी ने पाया कि सर्वेक्षण किए गए 89 स्कूलों में से 34 स्कूलों में एक भी विकलांग विद्यार्थी नहीं था और दुर्भाग्य से उनमें से 18 स्कूलों में विकलांग बच्चों को प्रवेश देने के खिलाफ़ नीति थी (सखुजा, 2004)।

अधिगम में कठिनाइयों का कारण बनने वाली विकलांगता में दृष्टि, बोलने व भाषा सम्बन्धी और श्रवण दोष, मांसपेशियों और हड्डियों या तन्त्रिका तन्त्र या दोनों से सम्बन्धित कष्ट, अधिगम की अक्षमता और स्वलीनता स्पेक्ट्रम विकार, मानसिक रोग, चिरकालिक तन्त्रिकाजन्य स्थितियों के कारण होने वाली विकलांगता, एकाधिक विकलांगता और ऐसी ही वह श्रेणी शामिल है जिसे केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचित किया जा सकता है।

भारतीय शिक्षा-प्रणाली में अध्यापन-कला दृश्य-सामग्री के लिए पाठ्यपुस्तकों और ब्लैकबोर्ड पर बहुत अधिक निर्भर करती है। इससे श्रवण या/और दृश्य प्रसंस्करण (visual processing) समस्याओं वाले बच्चों को कठिनाई होती है। उनके लिए तो ऐसी गतिविधियाँ आवश्यक हैं जो नाटक, संगीत, चित्र और दृश्य-श्रव्य सामग्री के उपयोग पर आधारित हों। उदाहरण के लिए, वर्णमाला सिखाने के लिए रेगमाल या सैंडपेपर कट-आउट, ट्रेसिंग लेटर्स, शारीरिक गति (जैसे नृत्य में होती है), ध्वनियों आदि का प्रयोग करना अधिक उपयुक्त है। इसी प्रकार भूगोल की घूर्णन और परिक्रमण जैसी अवधारणाओं को प्रदर्शित करने वाली गतिविधियाँ या तो क्रॉफ्ट गतिविधियों या फिर रोल-प्ले के माध्यम से बेहतर समझ सुनिश्चित करेंगी। ये बहु-संवेदी शिक्षण विधियाँ बच्चे को एक से अधिक इन्द्रियों के माध्यम से सीखने में मदद करती हैं।

तथापि विकलांगता वाला बच्चा दृश्य या श्रवण या इन दोनों तरीक़ों में कठिनाइयों का अनुभव कर सकता है। बच्चे का दृश्य प्रसंस्करण प्रभावित हो सकता है और उसे लक्ष्यानुसरण (ट्रैकिंग) और दिशात्मकता की कठिनाइयाँ हो सकती हैं। इसका समाधान यह है कि शिक्षण में एक साथ दो या अधिक इन्द्रियों के उपयोग को शामिल करना चाहिए, विशेष रूप से स्पर्श (छूना) और गतिज (गति) का उपयोग। उदाहरण के लिए वर्णमाला की बनावट को समझाने के लिए इन दोनों का उपयोग करके एक ट्रे पर शेविंग फोम की सहायता से बच्चे को वर्णमाला के अक्षर लिखने के लिए प्रोत्साहित करना। इससे बच्चे के मस्तिष्क को अपने स्पर्शशील और गतिज अनुस्मरणों (मेमोरी) के साथ-साथ दृश्य और श्रवण अनुस्मरणों को बनाए रखने में सहारा मिलेगा।

विकलांग बच्चों के शिक्षण के लिए सब कुछ मूर्त होना चाहिए : एक अनुभवी विशेष शिक्षक के शब्दों में 'पहले वस्तु, फिर अमूर्त'। कक्षा और शिक्षण के अन्य वातावरण ऐसे होने चाहिए जो बच्चों को खेल-खेल में सीखने के पर्याप्त अवसर दें और पढ़ने-लिखने के शुरुआती कौशलों पर कम ज़ोर दें। एक दिन मैं अपने बेटे को जिम की गेंद और योग की चटाई की मदद से उसके स्कूल में विशेष शिक्षक के कमरे में एक संवेदी विराम दे रही थी। उसी समय एक अन्य बच्चे का विशेष शिक्षक के साथ सत्र चल रहा था। वह जिम की गेंद की सभी गतियों की ओर आकर्षित हो रहा था - उसे अपने शरीर के माध्यम से सीखना अच्छा लग रहा था। जिन बच्चों को सीखने में कठिनाई होती है, उन्हें अपने हाथों से सब कुछ करके अपने शरीर के माध्यम से सीखने की आवश्यकता होती है। प्रत्येक क्रिया उन्हें नए शब्द सिखाती है, उन्हें अन्य बच्चों की तुलना में अपने शरीर को अधिक गतिमान करने की आवश्यकता होती है ताकि उनकी सजगता में सुधार हो और वे कक्षा में अधिक देर तक व अधिक चौकस होकर ध्यान केन्द्रित कर सकें, नहीं तो पढ़ाई जाने वाली विषयवस्तु से उनका ध्यान बड़ी आसानी से बँट जाता है। उन्हें कई बार इस बात की ज़रूरत भी पड़ सकती है कि शिक्षक थोड़ा रुकें और अवधारणाओं को कई बार दोहराएँ ताकि वे मूल विचार को समझ सकें।

खेल चिकित्सक ऐसे बच्चों के साथ बहुत अद्भुत काम कर रहे हैं जिन्हें किसी भी प्रकार की विकलांगता है। वे उन्हें समूहों का हिस्सा बनने में मदद करने के लिए मज़ेदार तरीक़े तैयार करते हैं। साथ ही व्यावसायिक चिकित्सक बच्चे की ज़रूरतों के लिए अनुकूलित व्यायाम और गतिविधियों को डिज़ाइन करते हैं।

हालाँकि सीबीएसई ने हर स्कूल में एक विशेष शिक्षक का होना अनिवार्य कर दिया है, लेकिन दुख की बात है कि अधिकतर स्कूलों में विशेष शिक्षक या तो अच्छी तरह से प्रशिक्षित नहीं होते हैं या किसी अनुपस्थित शिक्षक के एवज़ में काम करते हैं या फिर परीक्षाओं अथवा खेल गतिविधियों के दौरान उनमें हाथ बँटाते हैं। आमतौर पर विभिन्न कक्षाओं और कठिनाइयों के विभिन्न स्तरों वाले पन्द्रह से बीस विद्यार्थियों के लिए केवल एक विशेष शिक्षक होता है। मेरे बेटे के स्कूल में जो विशेष शिक्षक थे, वे उसकी अकादमिक सहायता के लिए सप्ताह में केवल एक बार अपना सत्र चला पाते थे। माता-पिता के साथ अधिक प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने के कारण और इस तथ्य के कारण भी कि उनका पारिश्रमिक और रोज़ काम के अधिक घण्टे उनकी योग्यता से मेल नहीं खाते, क्योंकि इसमें मेहनत बहुत है, विशेष शिक्षक जल्दी-जल्दी नौकरियाँ बदलते रहते हैं। यह एक गम्भीर मुद्दा है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप उनके विद्यार्थी असुरक्षित महसूस करते हैं। विकलांग विद्यार्थियों के लिए सीखने का माहौल पूर्वानुमानित तथा स्थान भावनात्मक रूप से सुरक्षित होना चाहिए और इसके लिए शिक्षक व बच्चे के बीच एक अनवरत और मज़बूत सम्बन्ध ज़रूरी है।

निजी विशेष शिक्षा और व्यावसायिक चिकित्सा सत्रों का खर्चा 400 से 600 रुपए प्रति सत्र के लगभग होता है, जिसकी अवधि 45 मिनट से लेकर एक घण्टे तक की होती है। कई अभिभावक यह खर्चा नहीं उठा सकते हैं। इससे माता-पिता की वित्तीय हालत पर गम्भीर असर पड़ता है, ख़ासकर जब उन्हें अपने भविष्य के लिए भी बचत करनी हो क्योंकि ये उपचार चार से पाँच साल तक चल सकते हैं। यदि स्कूल में विशेष शिक्षा के साथ-साथ व्यावसायिक चिकित्सा, भाषा और वाक चिकित्सा की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँ तो न केवल माता-पिता का समय और पैसा बचेगा, बल्कि वे अपने विकलांग बच्चे को अन्य प्रकार के अनुभव भी दिला सकेंगे। उदाहरण के लिए उन्हें किसी कौशल की कक्षा में भर्ती करवाना जहाँ बच्चे की भीतरी ताक़त और रुचियाँ उभर सकती हैं, जैसे कि मिट्टी के बर्तन बनाना, कला और शिल्प, मल्टीमीडिया, नाटक, संगीत, खेल, खाना बनाना और बेकिंग। द्वितीय और तृतीय श्रेणी के शहरों में आवश्यक उपचार प्रदान करने वाले सम्भवतः एक या दो केन्द्र होते हैं और स्कूलों में एक भी विशेष शिक्षक नहीं होता है, जबकि दिल्ली, मुम्बई, पुणे जैसे मेट्रो शहरों में हर हफ़्ते एक नया केन्द्र खुल जाता है। ऐसे स्कूल भी हैं जिनके पास पेशेवरों की बहुत ही अच्छी टीम है, लेकिन इन स्कूलों की फ़ीस इतनी अधिक है कि अधिकांश माता-पिता अपने बच्चों को वहाँ नहीं भेज पाते।

यहाँ पर यह बताना ज़रूरी है कि शिक्षा के इस पहलू पर भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) के कोई दिशानिर्देश नहीं हैं। इस क्षेत्र में काम करने वाली विभिन्न एजेंसियों के नियमन हेतु दिशानिर्देश तैयार करने के लिए आरसीआई और सीबीएसई को साथ मिलकर कार्य करने की ज़रूरत है। हाल ही में इसने निजी संस्थानों में विकलांगता के विभिन्न पाठ्यक्रमों में डिप्लोमा और बीएड करने वाले विद्यार्थियों के लिए उपस्थिति अनिवार्य कर दी है - यह सही दिशा में उठाया गया एक क़दम है। स्कूलों को हर साल बच्चों की स्क्रीनिंग करनी चाहिए और अपेक्षित समर्थन प्रदान करना चाहिए, फिर चाहे वह अधिक और विविध शिक्षण-अधिगम सामग्री उपयोग करने जैसा सरल तरीक़ा ही क्यों न हो।

जिन बच्चों के ध्यान केन्द्रित करने की अवधि कम होती है वे व्यावसायिक चिकित्सक के परामर्श से डिज़ाइन किए गए खेलों और अभ्यासों के माध्यम से बेहद लाभान्वित होंगे। स्कूल और माता-पिता जितनी जल्दी ऐसे बच्चों की पहचान कर लें जिन्हें बाक़ी कक्षा के साथ अकादमिक, संज्ञानात्मक और सामाजिक रूप से तालमेल बिठाने में परेशानी होती है, उतना ही बेहतर है। फिर वे विकासात्मक बाल रोग विशेषज्ञ, विशेष शिक्षक और व्यावसायिक चिकित्सक जैसे पेशेवरों की मदद से इनमें अन्तर्निहित मुद्दों का ठीक तरह से पता लगा सकते हैं। क्योंकि उसके बाद इन्हें प्राथमिक विद्यालय के स्तर से ही विशिष्ट रूप से निर्मित योजना के अनुसार शिक्षा प्रदान की जा सकती है। इससे स्कूलों को यथासम्भव बच्चों को मुख्यधारा की कक्षा में एकीकृत करने में मदद मिलेगी ताकि विद्यार्थी सामान्य शिक्षा के पाठ्यक्रम और सामग्री तक पहुँच सकें और अपने सहपाठियों के साथ सकारात्मक मित्रता विकसित कर सकें, जो बदले में, उन्हें सीखने के लिए एक समृद्ध और अधिक सुरक्षित आधार प्रदान करेगा।

सीखना कभी अलगाव में नहीं होता है और न ही कमज़ोर भावनात्मक सेहत के आधार पर। बच्चों को अपनी कमज़ोरियों पर जितना काम करने की आवश्यकता है, उतनी ही आवश्यकता उन्हें नियमित कक्षा के वातावरण की भी है जो उन्हें भविष्य के लिए तैयार कर सके और उन्हें स्मार्ट, सुरक्षित और आत्मविश्वासी वयस्कों में विकसित कर सके। यह किसी विशेष व्यवस्था की सुरक्षित दीवारों में नहीं हो सकता है। लिहाज़ा हमारे शिक्षकों को उनकी अलग-अलग डिग्रियों में विभिन्न प्रकार की विकलांगताओं के बारे में संवेदनशील

बनाए जाने की आवश्यकता है। इसके साथ ही कक्षा में सभी बच्चों की समान भागीदारी सुनिश्चित करने में उनकी मदद करने के लिए रणनीतियाँ भी विकसित करनी होंगी। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) विकलांग विद्यार्थियों के लिए एक वरदान साबित हो रहा है क्योंकि यह बच्चों को किसी उपहास और अनुचित दबाव का सामना किए बिना अपने शैक्षिक लक्ष्यों को अपनी गति से पूरा करने देता है।

आज जब न्यूरोटिपिकल विद्यार्थियों के लिए भी खुली किताबों वाली परीक्षाओं पर विचार किया जा रहा है ताकि उन्हें उत्तरों को रटने से रोका जा सके, हमें विकलांग विद्यार्थियों के लिए भी इसी तरह की व्यवस्था बनानी चाहिए जिससे उन्हें एक सम्मानजनक व स्वतन्त्र जीवन जीने की तैयारी में मदद मिल सके, जो समावेशन के लिए ज़रूरी है। वर्तमान स्थिति ऐसी है जिसमें प्रतिबद्धता और निष्ठा की बहुत कमी है। उदाहरण के लिए, पहले तो स्कूल बच्चे की विकलांगता की पूरी जानकारी होने के बावजूद प्रत्येक विद्यार्थी के लिए पाठ्यक्रम संशोधित करने से इन्कार करते हैं और बाद में बच्चे को फेल कर देते हैं।

शिक्षक अपने कार्यों में मल्टीमीडिया की प्रस्तुतियों का उपयोग कर सकते हैं। तथापि उच्च दर्ज़े के स्कूल जो अब स्मार्ट बोर्ड का प्रयोग करते हैं, वे अपने शिक्षकों को इनका उपयोग करने की अनुमति नहीं देते हैं क्योंकि उन्हें समय पर पाठ्यक्रम पूरा करने की जल्दी होती है। विकलांग बच्चों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उचित शिक्षण-अधिगम सामग्री तैयार करने और उनका उपयोग करने में उच्च शिक्षक-विद्यार्थी अनुपात एक और बाधा है।

मैंने क्या सीखा

जब मेरा बेटा एक 'सामान्य' स्कूल के अन्तिम सत्र में था तब मुझे उसका साथ देने का मौक़ा मिला। मेरे बेटे को स्वलीनता स्पेक्ट्रम विकार (एएसडी) है। यह स्पष्ट था कि कक्षा में बच्चों के सीखने, ध्यान देने और फोकस करने के अलग-अलग स्तर थे, जिनमें से लगभग दस बच्चों में विभिन्न अन्तर्निहित मुद्दों के कारण सीखने की अक्षमताएँ थीं। एक लड़की ऐसी थी जिसे कुछ भावनात्मक समस्याएँ थीं और वह अधिकांश कक्षाओं में अपना काम पूरा नहीं कर पाती थी। लेकिन गिनतारा (अबैकस) की कक्षा में वही लड़की काफ़ी उत्साही रहती थी और जब शिक्षक प्रश्नों को स्पष्ट रूप से और धैर्यपूर्वक दोहराते तो वह अधिकांश प्रश्नों के सही उत्तर दे देती थी। शिक्षक के धीरज ने ऐसा करने में उसकी मदद की।

जिन बच्चों में भाषा की पूरी क्षमता होती है लेकिन अधिगम सम्बन्धी अन्य अक्षमताएँ होती हैं, उनके माता-पिता शिक्षकों की चेतावनी को अनदेखा कर देते हैं और बच्चे का आकलन नहीं करवाते। ऐसे मामलों में स्कूल सहायता और मार्गदर्शन प्रदान कर सकता है। स्कूल के विकासात्मक विशेषज्ञों और विशेष शिक्षकों की एक टीम माता-पिता को आमन्त्रित कर सकती है ताकि वे अपने बच्चे का उसकी कक्षा में और कक्षा के बाहर भी निरीक्षण करें और ख़ुद तय करें कि उनके बच्चे को वास्तव में कहाँ दिक़्क़त हो रही है।

कक्षा की ख़ाली दीवारें बच्चों को निरुत्साहित कर देती हैं, उन्हें बच्चों की कृतियों से भरा होना चाहिए। मेरे बेटे को वाहनों और कार्टून चरित्रों के चित्र बनाना तथा मोबाइल गेम्स के ग्राफिक्स को फिर से बनाना पसन्द है। केवल किसी परीक्षा में प्राप्त अंकों के लिए ताली बजाने से बाल मस्तिष्क में अकादमिक उत्कृष्टता के लिए एक मानदण्ड बनता है; अतः ऐसा करने की बजाय हमें इन ग़ैर-शैक्षिक उपलब्धियों की भी सराहना करनी चाहिए । आज की दुनिया में हमें लगातार याद दिलाया जाता है कि बोर्ड की परीक्षा में प्राप्त अंक बाद के जीवन में सफलता की गारंटी नहीं देते हैं। जो लोग अपने पूरे स्कूली जीवन में पढ़ाई में पिछड़े हुए थे, उन्होंने बाद में सफलतापूर्वक अद्वितीय उद्योग स्थापित किए हैं।

आज स्कूलों के पास अपने विद्यार्थियों को अधिगम का प्रेरक वातावरण प्रदान करने के लिए आधारभूत संरचना और संसाधन हैं। इनका रचनात्मक रूप से उपयोग करने के लिए एक छोटा प्रयास करना चाहिए। एक और विचार यह है कि दैनिक समय-सारिणी को इस तरह से नियोजित करना चाहिए कि बच्चों को नियमित अन्तराल पर गति विराम, शारीरिक व्यायाम और अन्य संवेदी विराम दिए जा सकें और उन्हें शैक्षिक अवधियों के दौरान पूरी सतर्कता और एकाग्रता के साथ अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने में मदद मिल सके। उदाहरण के लिए दिल्ली के एक स्कूल में दिन-प्रतिदिन का कार्य शुरू करने से पहले शून्य काल में बच्चों से स्केटिंग करवाई जाती है।

मेरी सात वर्षीय बेटा अपने अधिगम की कठिनाइयों और संवेदी मुद्दों (जो कि स्वलीनता की कुछ सह-अस्वस्थताएँ हैं) के कारण स्कूल के शैक्षिक पाठ्यक्रम के साथ तालमेल नहीं रख पा रहा है, लेकिन उसके सहपाठी उसकी स्पेलिंग याद करने की क्षमता, तैराकी और पानी के अन्दर उसके कौशलों का लोहा मानते हैं। जब वे मुझसे मिले तो उन्होंने मुझसे कई सवाल पूछे : हेरम्ब ऐसा क्यों करता है? वैसा क्यों करता है? वह इन दिनों नियमित रूप से स्कूल क्यों नहीं आता (स्कूल ने उसे बिना शैक्षिक सहायक के आने की अनुमति नहीं दी थी)? किसी अच्छे शैक्षिक सहायक को ढूँढ़ना एक बड़ी चुनौती है, क्योंकि उन्हें प्रशिक्षित करने के लिए अभी तक कोई संस्था नहीं है और स्कूलों के पास आन्तरिक शिक्षक अथवा सहायक स्टाफ को इस भूमिका में रखने के लिए न तो समय है और न ही प्रेरणा।

एक विकलांग बच्चे की माता के रूप में जब मैं अपने बच्चे को कोई कौशल चुनने में मदद करने की कोशिश करती हूँ तो कभी-कभी मुझे कठिन पलों और एकदम ठण्डी नज़रों का सामना करना पड़ता है; क्योंकि लोग न तो नए विचारों का उपयोग करना चाहते हैं और न ही अपने तरीक़ों को बदलना चाहते हैं। तब ऐसा महसूस होता है कि दुनिया की आलोचनात्मक नज़रों से दूर अपने बच्चे को अपनी बाँहों में समेटकर हम किसी निरापद और सुरक्षित जगह में जाकर छुप जाएँ। लेकिन अपनी कमज़ोरी को ख़ुद पर हावी न होने दें क्योंकि ऐसा करके आप न केवल अपने बच्चे को बल्कि कई और बच्चों को भी हानि पहुँचाएँगे। मुझे जितनी भी कठोर टिप्पणियाँ सुनने के लिए मिलीं, कठिन परिस्थितियों में मुझे उतना ही अप्रत्याशित उत्साह मिला तथा मैंने अपने बच्चे को उसकी क्षमता तक पहुँचाने में उसकी मदद करने के लिए वह सब कुछ किया, जो मैं कर सकती थी।

विकलांग बच्चों को पढ़ाने के रोज़मर्रा के संघर्ष में हम अकसर यह महत्वपूर्ण बात भूल जाते हैं कि विकलांग बच्चा सबसे पहले तो एक बच्चा है। मुझे अभी भी याद है कि जब मुझे अपने बेटे की स्वलीनता के बारे में पहली बार बताया गया तो उसके बाद छह महीने तक मैं उसकी तस्वीरें लेना पूरी तरह से भूल गई थी, जबकि पहले मैं, स्मार्टफ़ोन की बदौलत, उसकी हर मुस्कान की, उसकी हर गतिविधि की फ़ोटो क्लिक करती थी। जब आप बच्चे के उपचार के लिए इधर से उधर दौड़भाग करें तो बच्चे को खुली हवा और खुले स्थानों में पर्याप्त समय बिताने का अवसर देना न भूलें। इनसे मेरे बेटे को काफ़ी मदद मिली, उसके कई संवेदी और नींद से जुड़े मुद्दों का समाधान मिला। साथ ही सीखने के मज़ेदार मौक़े भी सामने आए। व्यक्तिगत रूप से मुझे यह विशेष नाम या टैग समझ नहीं आता : विशेष आवश्यकता वाले बच्चे, विशेष स्कूल, विशेष सेटअप इत्यादि - तो क्या आगे चलकर विशेष कॉलेज, अस्पताल, बैंक, मॉल वगैरह भी होंगे?

हालाँकि मानव संसाधन विकास मंत्रालय (एमएचआरडी) के हस्तक्षेप और दिल्ली सरकार के विकलांग बच्चों के लिए ऑनलाइन प्रवेश अभियान (जिसके तहत स्कूलों को अपने आसपास के विकलांग बच्चों को प्रवेश देने के लिए मजबूर किया गया है) से अभिभावकों को अपने बच्चे को स्कूल में सीट दिलाने में मदद मिली है, लेकिन यह बच्चे के अधिकारों के लिए स्कूल के अधिकारियों के साथ निरन्तर चलने वाली लड़ाई की एक लम्बी व संघर्षपूर्ण यात्रा की शुरुआत भर है। अगर हम आज इस लड़ाई से कतराते हैं तो हमें भविष्य में एक समावेशी समाज का सपना देखना बन्द कर देना चाहिए।

References

Sakhuja, S. (2004). Education for All and Learning Disabilities in India. Society for the Study of Peace and Conflict.

https://www.rehabcouncil.nic.in, Learning Disabilities, Rehabilitation Council of India.



अनुपमा राय ने बायोटेक्नोलोजी में स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त की है । उन्होंने TERI, CII और IDRC कनाडा जैसी संस्थाओं के साथ काम किया है । अब वे एक सुन्दर स्वलीन लड़के की माँ हैं, उसके अधिकारों के पक्ष में पैरवी कर रही हैं और अन्य लोगों को जागरूक कर रही हैं । उनसे anupma04@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है । **अनुवाद :** नलिनी रावल

समावेशन, विशेष आवश्यकताएँ और चिन्तनशील शिक्षक

अनुराधा नायडू

परिचय

कक्षा में प्रत्येक बच्चे की खुशहाली का समर्थन करने का पहला उत्तरदायित्व शिक्षक का है, फिर चाहे वह भावनात्मक खुशहाली हो या स्वास्थ्य और पुनर्वासन से सम्बन्धित। आधुनिक कक्षा में 'विविधता' शब्द के अन्तर्गत अनेक प्रकार के बच्चे आ जाते हैं, जैसे- विशेष आवश्यकताओं वाले और विकलांग बच्चे, प्रवासी बच्चे, ग़रीबी में जीवन-यापन करने वाले बच्चे, एकल माता-पिता के बच्चे, गोद लिए गए बच्चे, गम्भीर रूप से बीमार माता-पिता के बच्चे और ऐसे कई अन्य बच्चे जिनकी ज़रूरतें बहुत अलग प्रकार की होती हैं तथा उनका विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। जब हम शिक्षकों की सेवापूर्व तैयारी की बात करते हैं तो शिक्षक-प्रशिक्षण में उनकी बहुआयामी भूमिकाओं को शामिल करना चाहिए ताकि वे समावेशन के लिए तैयार हो सकें।

समावेशन और विविधता

यूनेस्को के अनुसार, समावेशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे शिक्षार्थियों की उपस्थिति, भागीदारी और उपलब्धि को सीमित करने वाले अवरोधों को दूर करने में मदद मिलती है। जिन शिक्षार्थियों की बहिष्कृत होने की सम्भावना सबसे अधिक है, वे हैं– ग़रीब घरों के बच्चे, विशिष्ट धार्मिक, सांस्कृतिक या जातीय समूहों के बच्चे, स्वदेशी समुदायों के बच्चे या विशेष आवश्यकताओं वाले और विकलांग बच्चे (यूनेस्को)। ऐसे अनेक अवरोध हैं जो भागीदारी को सीमित करते हैं- जैसे शारीरिक, तकनीकी, वित्तीय या अभिवृत्तिक या फिर बच्चों को स्कूल में रख पाने में स्कूल की असमर्थता।

इंस्कोउ और बूथ भी कहते हैं कि समावेशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें मानव विविधता की सराहना के लिए मज़बूत प्रतिबद्धता होती है। उनके अनुसार जब स्कूल अपने विद्यार्थियों की विविधता की सराहना करते हैं तो वे बच्चों द्वारा अपने साथ लाए मूल्यों को पहचानना शुरू करते हैं। विद्यार्थियों की विविधता को महत्व देने का मतलब यह होगा कि स्कूल सक्रिय रूप से विद्यार्थियों को एक साथ सीखने और शिक्षार्थियों के मिश्रित समूहों में सहयोग करने में सक्षम बनाते हैं। समावेशन की प्रक्रिया के तहत स्कूल द्वारा सभी विद्यार्थियों को अपने समुदायों में शामिल करके इस विविधता को बढ़ाना और ऐसे सभी प्रकार के चयन और बहिष्करण को दरकिनार करना आ जाता है जो भेदभाव करते हैं (इंस्कोउ, बूथ एवं डाइसन, 2006)।

'समावेशी शिक्षा' शब्द हाल ही में लोकप्रिय हुआ है। आमतौर पर यह शब्द नियमित स्कूलों में विशेष आवश्यकताओं वाली शिक्षा से जुड़ा हुआ है। यह इस बोध से विकसित हुआ है कि समान अवसरों और अधिकारों के लिए विकसित हो रहे विकलांगता आन्दोलन के समक्ष पृथक्कृत शिक्षा अप्रासंगिक थी।

इसके साथ ही स्कूलों के अनुकूलन की माँग उभरी है और इससे शिक्षक-शिक्षा की अपेक्षाएँ भी बढ़ी हैं। आज समावेशी शिक्षा की व्यापक परिभाषा में वे सभी बच्चे शामिल हैं जिन्हें ऐतिहासिक रूप से विविध सांस्कृतिक, आर्थिक और जातीय पृष्ठभूमि के आधार पर हाशिए पर रखा गया है; अब यह बात केवल क्षमता के बारे में नहीं रही।

सेवापूर्व शिक्षक-शिक्षा का पुन:अवधारण (re-conceptualised) किया जा सकता है ताकि शिक्षक समावेशी कक्षा में आत्मविश्वास से कार्य कर सकें। एक सुस्पष्ट दृष्टिकोण के साथ, यह तैयारी ऐसी होनी चाहिए जो प्रशिक्षु को आत्म-चिन्तन का अभ्यास करने और अपनी प्रभावशीलता में आत्म-प्रभावकारिता या विश्वास की भावना विकसित करने के अवसर प्रदान करे। विकलांग बच्चों और उनके परिवारों सहित विविध पृष्ठभूमि के बच्चों के साथ बातचीत करने के अवसर निश्चित रूप से शिक्षकों के दिमाग़ की खिड़कियाँ खोलते हैं और वे बाल कारकों और अपनी स्वयं की विश्वास प्रणालियों में अन्य अवरोधों पर विचार कर पाते हैं।

नवाचार को शिक्षक-शिक्षा के केन्द्र में होना चाहिए जबकि विभिन्न क्षेत्रों में विकलांगता आन्दोलन का नेतृत्व करने वाले लोगों, जैसे 'स्व-अधिवक्ताओं', के साथ बातचीत आज की शिक्षा में वास्तविक चुनौतियों को जीवन्त करती है और इस संवाद के दूरगामी सकारात्मक प्रभाव अवश्य होते हैं।

हाल के दशकों में कई ऐसे आदर्श एवं अनुकरणीय विकलांग व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने समावेशी समाज के लिए बहुत कार्य किया है और वे इस क्षेत्र में परिवर्तन लाने तथा इसका नेतृत्व करने में सफल रहे हैं। विकलांगता

अधिकार के अधिवक्ता मुख्यधारा में इसकी समझ बनाने के प्रयासों का निरन्तर प्रदर्शन करते रहते हैं। ढाई दशक तक **जावेद आबिदी** ने विकलांगता अधिकार आन्दोलन का नेतृत्व किया; उनके अथक अभियान के कारण एक नया विकलांगता अधिकार क़ानून पारित किया गया, जिसका नाम है, विकलांगजन अधिकार अधिनियम (2016)। विकलांगता सम्बन्धी एक अन्य उल्लेखनीय स्व-अधिवक्ता हैं **अंजलि अग्रवाल,** जिन्होंने भारत सरकार के साथ अभिगम्य वातावरण के पक्ष-समर्थन पर अभियान का लम्बे समय तक नेतृत्व किया। अभी हाल ही में **स्मिता सदाशिवन** ने भारत के चुनाव आयोग के साथ अभिगम्य चुनावों पर और यह सुनिश्चित करने के लिए काम किया है कि विकलांगता वाले व्यक्तियों के वोट भी गिने जाएँ। एक ऑनलाइन समाचार पत्र, 'कनेक्ट स्पेशल' प्रकाशित करने वाली **भावना बोट्टा** भी हैं, जो विकलांगता के पक्ष-समर्थन सम्बन्धी मुद्दों में रुचि रखने वालों के लिए नवीनतम विचारों का प्रसार करती हैं।

इन अनुकरणीय लोगों की सफलता की कहानियों से केवल सेवापूर्व शिक्षक ही नहीं, बल्कि सभी शिक्षक बहुत कुछ सीख सकते हैं। शिक्षा की व्यापक प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, क्या सेवापूर्व शिक्षक-प्रशिक्षण को विशेष आवश्यकताओं वाले लोगों के जीवन के अनुभवों से समृद्ध किया जा सकता है?

इक्कीसवीं सदी में आत्म-चिन्तन और शिक्षण

जब कोई सोचने के बारे में सोचता है तो उसकी अपनी सोचने की प्रक्रिया के बारे में जागरूकता होती है, न कि केवल विचारों के बारे में। देकार्त का प्रसिद्ध उद्धरण, 'मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ', यह दर्शाता है कि उन्होंने अपनी सोच को अपने अस्तित्व के प्रमाण के रूप में लिया । इस तरह की चिन्तनशील सोच स्वयं की अवधारणा के लिए और हमें मानव बनाने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। क्या विचार के इस अनिवार्य मानवीय पहलू को कक्षा में वास्तविक रूप से उपयोग में लाया जा सकता है? कक्षा में विभिन्न प्रकार के विद्यार्थी होते हैं, इस मिश्रण को देखते हुए शिक्षकों को अपनी स्थिति पर अवसर और सम्भावना से परे जाकर चिन्तन करना चाहिए।

आज, शिक्षण-अभ्यास को कक्षा के अधिगम के रूप में और शिक्षक को ज्ञान के वाहक के रूप में मानने के विचार को सेल फ़ोन और इंटरनेट प्रौद्योगिकी के व्यापक उपयोग द्वारा चुनौती दी गई है। हालत तो यह है कि छोटे से छोटे नन्हे-मुन्ने बच्चे भी स्मार्टफ़ोन चालू कर सकते हैं और यूट्यूब पर लॉग ऑन करके अपना पसन्दीदा वीडियो देख सकते हैं । जैसे-जैसे विद्यार्थी इंटरनेट से जानकारी प्राप्त करने में पारंगत होते जा रहे हैं, वैसे-वैसे शिक्षकों ने *विद्यार्थी केन्द्रित फ़्लिप क्लास* की बात करनी शुरू कर दी है, जिसमें घर पर ही डिजिटल संसाधनों से सीखी गई जानकारी हासिल की जाती है। ये प्रवृत्तियाँ हमें एक बदलती दुनिया दिखाती हैं जहाँ शिक्षार्थी की विविधता आदर्श है।

क्या शिक्षक आत्म-चिन्तन इस दिशा में आगे बढ़ने का तरीक़ा हो सकता है? 1990 के दशक में अपनी कक्षा में क्रियात्मक अनुसन्धान में लगे शिक्षकों के साथ काम करने से पता चला कि अपनी भूमिका के बारे में विस्तृत समझ विकसित करने के लिए शिक्षकों को ऐसे आत्म-आलोचनात्मक परिप्रेक्ष्य की आवश्यकता थी, जिसमें अविरत चिन्तन और आत्मनिरीक्षण की प्रक्रिया शामिल हो। 1980 के दशक की शुरुआत में ही आइज़नर ने बताया कि अध्यापन के बारे में ज्ञान की रचना करने में शिक्षकों की एक अद्वितीय और केन्द्रीय भूमिका होती है (आइज़नर, 1985)। ज्ञान-सृजन में आत्म-चिन्तन की केन्द्रीय भूमिका में क्रियाओं में चिन्तन और क्रियाओं पर चिन्तन दोनों शामिल हैं । इनमें से पहला कार्य करने के दौरान सोच और क्रियाशीलता के सहज तरीक़ों पर चिन्तन है संक्षेप में, चिन्तन बेहतर क्रियाओं की ओर ले जाता है (शॉन, 1983)।

चिन्तनशील शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से शिक्षक अपने पाठ, विधियों और परिणामों का विश्लेषण करते हैं और इससे प्राप्त अन्तर्दृष्टि का उपयोग शिक्षार्थियों के अनुभव को बढ़ाने वाले अभ्यास को विकसित करने के लिए करते हैं। हॉबसन इस प्रक्रिया का वर्णन करते हुए कहते हैं, 'शिक्षक की अपनी यात्रा की कहानी'; दूसरे शब्दों में, शिक्षक के रूप में अपने जीवन के बारे में एक अनुभवात्मक अन्तर्दृष्टि (बर्नफर्ड, फिशर और हॉबसन 2001)। इस प्रकार, एक शिक्षक की आत्म-चिन्तन की प्रक्रिया चक्रीय और पुनरावर्ती होती है, जहाँ वे गम्भीर रूप से स्वयं की जाँच करते हैं और बार-बार कार्य करते हैं।

समावेशन और चिन्तनशील शिक्षक

एक समावेशी कक्षा में प्रत्येक चिन्तनशील शिक्षक अधिगम का सुगमकर्ता, पुनर्वासन परामर्शदाता, जीवन-प्रशिक्षक और प्रेरक होता है। एक सन्दर्भ बिन्दु के रूप में लगातार केन्द्र में रहने के कारण एक शिक्षक, जो एक समावेशी अभ्यासी है, को उच्च स्तर की प्रामाणिकता बनाए रखनी होती है। वह न केवल एक ऐसा रोल मॉडल है जो विद्यार्थियों के विकास का मार्गदर्शन करता है, बल्कि वह समावेशन के साथ अधिगम के सुगमीकरण के लिए भी एक नैतिक ज़िम्मेदारी साझा करता है।

यहाँ बच्चों की सफलता की कुछ कहानियाँ दी गई हैं जो भारत के एक सामान्य शहरी स्कूल में देखी गई विविधता

का प्रतिनिधित्व करती हैं। वास्तविक जीवन की इन सभी कहानियों में बच्चों को अपने शिक्षकों से प्राप्त उच्च स्तरीय स्वीकरण के बारे में तो चर्चा है ही, साथ ही यह भी बताया गया है कि उनके माता-पिता ने अपने बच्चों के उज्ज्वल भविष्य को सुनिश्चित करने के लिए किस प्रकार का साहस प्रदर्शित किया है ।

छह साल का सरोज एक नेपाली प्रवासी मज़दूर का बेटा है। वह अभी-अभी एक सरकारी सहायता प्राप्त स्कूल में यूकेजी में दाख़िल हुआ है, जहाँ उसे अंग्रेज़ी, तमिल और हिन्दी पढ़ना-लिखना सिखाया जा रहा है । उसे प्रवासी मज़दूरों के बच्चों वाली एक विशिष्ट समस्या है - इनमें से कोई भी भाषा उसके घर पर नहीं बोली जाती है, क्योंकि उसकी मातृभाषा नेपाली है । वह अपने शिक्षक को पसन्द करता है और जब वह उनका नाम लेता है तो उसके चेहरे पर एक उजली मुस्कान तैरती है।

राम और अर्जुन चार साल के जुड़वाँ बच्चे हैं। उनके माता-पिता ने उन्हें गोद लिया था। दोनों एक निजी स्कूल में पढ़ते हैं, जहाँ उन्हें अलग-अलग सेक्शन में रखा गया है। उनके माता-पिता दोनों काम करते हैं। हालाँकि ये बच्चे एक बड़े व सुरक्षित परिवार से जुड़े हुए हैं लेकिन उनकी देखभाल करने वाले लगातार बदलते रहते हैं। वे अपने माता-पिता के साथ लगाव और जुड़ने की समस्याओं से जूझते रहते हैं। ऐसे में शिक्षक उन्हें स्थायित्व प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिसकी उन्हें बहुत आवश्यकता है।

सात साल की कीर्तना को जन्म से ही प्रमस्तिष्क पक्षाघात (सेरब्रल पॉल्ज़ी) की समस्या है। जैसे ही उसने सहारा लेकर चलना शुरू किया, उसकी माँ ने उसे पहली कक्षा में भर्ती करा दिया। हालाँकि वह स्पष्ट रूप से बात नहीं कर पाती लेकिन इस बात ने उसे कक्षा की गतिविधियों में भाग लेने से नहीं रोका। अपने शिक्षक के प्रोत्साहन के साथ वह सभी पाठ्येतर गतिविधियों में भाग लेने लगी जैसे कि कला, नाटक व नृत्य। स्कूल के वार्षिकोत्सव कार्यक्रम के दौरान उसने मंच पर जाकर अपनी कक्षा का प्रतिनिधित्व भी किया। स्कूल में मिलने वाले समर्थन से वह सफलता प्राप्त कर रही है। हालाँकि उसकी पुनर्वास सम्बन्धी अपनी विशिष्ट आवश्यकताएँ हैं और उसे स्कूल के समय के बाद नियमित रूप से व्यावसायिक और फ़िज़ियोथेरेपी सत्रों में भाग लेना पड़ता है।

छह साल का सुमन्त एक बढ़ई का बेटा है। वह तीन साल का था जब उसकी माँ को स्तन कैंसर हुआ था। माँ को स्तन का ऑपरेशन करवाना पड़ा था। उसकी माँ कैंसर से बच गईं । परिवार की अल्प आय माँ के इलाज में खर्च हो जाती थी। जब वह चार साल का था तो शारीरिक विकलांगता वाले उसके पिता को स्ट्रोक हुआ। इसका असर उनकी याददाश्त पर पड़ा तथा वे और कमज़ोर हो गए । इस वजह से उन्हें किसी भी दिहाड़ी काम के योग्य नहीं माना गया। सुमन्त अब खुशी-खुशी एक सरकारी स्कूल में एलकेजी में पढ़ने जाता है और कहता है कि उसकी शिक्षिका दयालु हैं। वे उसकी पारिवारिक स्थिति को समझती हैं। सुमन्त भाग्यशाली है कि उसे उनका समर्थन मिल रहा है।

इन सभी कहानियों में वैसे यह बात स्पष्ट रूप से तो नहीं कही गई है लेकिन हम देख सकते हैं कि वहाँ एक सहयोगी टीम है जिसमें बच्चे, शिक्षक और माता-पिता मिलकर काम कर रहे हैं। इनमें से हर एक माता-पिता ने बताया कि शिक्षक उनके सरोकारों पर बड़ी गर्मजोशी और तत्परता के साथ उनसे बातें करते हैं। साथ ही वे विकास के चरण के अनुसार मुद्दों पर सलाह देने में भी बहुत सक्षम हैं। ये शिक्षक माता-पिता की बातों को सुन रहे थे और बड़े आश्वस्त भाव से उन्हें जवाब दे रहे थे।

सफलता की हर कहानी के साथ ही संघर्ष और निराशा की कहानी भी है। निशा की कहानी एक ऐसा उदाहरण है जहाँ स्कूल का समावेशन विफल रहा। हाल ही में पता चला कि छह साल की निशा को स्वलीनता (ऑटिज्म) है। उसे एक महँगे निजी स्कूल में भर्ती कराया गया था जिसमें समावेशी शिक्षा अभ्यास में थी। स्कूल उसकी व्यक्तिगत ज़रूरतों को सँभालने में असमर्थ था और चाहता था कि वह स्कूल छोड़ दे, बावजूद इसके कि उसे अपने माता-पिता और दादा-दादी से बहुत समर्थन मिलता था। अफ़सोस की बात है कि ऐसे स्कूल उन बच्चों की चुनौती का सामना करने के लिए तैयार नहीं हैं जिन्हें उच्च-समर्थन की ज़रूरत है।

सेवापूर्व शिक्षक-शिक्षा में समावेशन और आत्म-चिन्तन

क्या शिक्षक-शिक्षा के कार्यक्रमों में शिक्षक के चिन्तन और शोध को शामिल करने की आवश्यकता है? क्या हम खुले दिलो-दिमाग़ के साथ उन स्थितियों का प्रबन्धन करने के लिए तैयार हैं जिनका वर्णन शिक्षा की पाठ्यपुस्तक में कभी नहीं किया गया?

शिक्षक-शिक्षा का पारम्परिक दृष्टिकोण सेवापूर्व शिक्षक को उस विषयवस्तु का पूरा ज्ञान देता है जिसे उसे बाद में अपने विद्यार्थियों को देना है। तथापि पश्चिम में आजकल इसका उद्देश्य शिक्षकों को अधिगम के सुगमकर्ता के रूप में कार्य

करने के लिए तैयार करना है। इसे *रचनावादी दृष्टिकोण* के रूप में जाना जाता है। इसमें शिक्षक, शिक्षण करने की बजाय मार्गदर्शन के माध्यम से बच्चे को सीखने में समर्थन या *सहारा* प्रदान करते हैं (सेलर और स्क्रटिक, 1992)।

मचान बनाने यानी सहारा देने का उपयोग विभेदित कक्षा में भी किया जाता है जहाँ शिक्षार्थी विभिन्न स्तरों और क्षमताओं वाले होते हैं, लेकिन एक समान पाठ्यक्रम की पढ़ाई करते हैं। सेवापूर्व शिक्षक उन पाठयोजनाओं, अनुदेशात्मक रणनीतियों और मूल्यांकन की तकनीकों को विकसित करना सीखते हैं जो एक समावेशी कक्षा की विविध शिक्षण रूपरेखाओं पर विचार करें।

फिर भी एक सेवापूर्व प्रशिक्षु शिक्षक या किसी भी शिक्षक से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह ज्ञान की उन इकाइयों को सीखने में सुगमीकरण कर पाएगा जो उसकी विश्वास प्रणाली में मौजूद नहीं हैं (बाकर एवं अन्य, 2002)। हृदय का अधिगम पाठ्यपुस्तकों के विषय से परे है। दृष्टिकोणों, विचारों, विश्वासों और मूल्यों की खोज इसके दायरे में आती है। अपनी जागरूकता से परे प्रत्येक व्यक्ति अपने परिवार व समुदाय के मानदण्डों और सांस्कृतिक व धार्मिक मूल्यों से भी प्रभावित होता है। अकसर इन मूल्यों और आदर्शों में टकराव होता है जो चिन्तन की अमूल्य प्रक्रिया को उजागर करता है। दृश्य-कला, संगीत और नाटक का उपयोग करते हुए एक बहु-सांस्कृतिक समूह में सहयोग करने की चुनौतियों से दोस्तों और सहपाठियों के बीच अन्तर व समानताओं तथा खुशियों व संघर्षों पर चिन्तन विकसित हो सकता है। और इस तरह युवा सेवापूर्व शिक्षकों को दृश्य और अदृश्य विविधता की सराहना और सम्मान करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

इसके अलावा यह कहना उचित होगा कि सामान्य कक्षा में विकलांग विद्यार्थियों को शिक्षित करने के बारे में शिक्षकों के विश्वास और दृष्टिकोण से सम्बन्धित शोध का बहुत महत्व है। इससे न केवल शिक्षक की तैयारी से सम्बन्धित कार्यक्रमों को लाभ पहुँचेगा, बल्कि स्कूल भी वर्तमान चुनौतियों की समझ से लाभान्वित होंगे और सेवापूर्व और सेवाकालीन शिक्षा में सुधार के तरीक़े खोजेंगे। वास्तव में सेवापूर्व प्रशिक्षण शिक्षकों की चिन्ताओं को दूर करने के लिए सबसे अच्छा समय है। इसलिए इसे बढ़ावा दिया जाता है और सम्भवत: इससे विकलांग विद्यार्थियों के बारे में शिक्षकों के नकारात्मक दृष्टिकोण और समावेशी शिक्षा के बारे में उनकी धारणाओं को संशोधित किया जा सकता है। विकलांग विद्यार्थियों के साथ काम करने, स्व-अधिवक्ताओं के साथ सहयोग करने या सामाजिक सम्पर्क के माध्यम से विशेष आवश्यकताओं वाले व्यक्तियों को जानने के लिए प्रोत्साहित करने वाले नवाचारी कार्यक्रम विविधता के प्रति सेवापूर्व शिक्षकों के रवैये को कोमल करने और उनके साथ सहूलियत से काम करने में मदद करते हैं।

विद्यार्थियों की आत्म-प्रभावकारिता (Self-efficacy)

ऊपर उल्लिखित सफलता की कहानियों के अध्ययन में हमने देखा कि पहले चार बच्चों को स्कूल में अपने शिक्षकों का समर्थन और प्रोत्साहन मिलता है। प्रत्येक बच्चे ने यह महसूस किया कि उसके शिक्षक ने उसे कक्षा के एक महत्वपूर्ण सदस्य के रूप में स्वीकार किया है। ये बच्चे इस आश्वासन के साथ बड़े और परिपक्व हो रहे हैं कि वे अपने शिक्षक के मार्गदर्शन में सफल होंगे। इनमें से प्रत्येक बच्चा इस दुनिया में एक विद्यार्थी के रूप में आत्म-प्रभावकारिता की भावना प्राप्त कर रहा है। लेकिन पाँचवें बच्चे की कहानी से पता चलता है कि स्थिति इतनी सरल नहीं है और इससे यह बात उजागर होती है कि शिक्षकों को उन बच्चों के समावेशन पर भी विचार करना चाहिए जिन्हें स्वास्थ्य और पुनर्वास सम्बन्धी सहायता की आवश्यकता होती है। होम-स्कूलिंग एक विकल्प नहीं हो सकता है क्योंकि इससे बच्चे को अपने हमउम्र साथियों का साथ नहीं मिल पाएगा।

आत्म-प्रभावकारिता आत्म-सम्मान से काफ़ी अलग है। यह अन्तर इस प्रकार है- सफल होने की अपनी क्षमता पर विश्वास और ख़ुद के बारे में अपना निर्णय। आत्म-प्रभावकारिता एक चालक की तरह काम करती है व सफल होने के लिए प्रोत्साहित करती है और अन्ततः स्वयं के बारे में व्यक्ति की राय को बदल देती है।

विशिष्ट परिस्थितियों में स्वयं की प्रभावशीलता में व्यक्ति का विश्वास ही आत्म-प्रभावकारिता की परिभाषा है। यदि हम किसी कार्य को करने की अपनी क्षमता पर विश्वास करते हैं तो हम उसे करने के लिए अधिक प्रेरित होते हैं। इसके अलावा इस बात की सम्भावना अधिक है कि हम उन क्षेत्रों में प्रदर्शन करने वाले मॉडल की नक़ल करें जिनमें हमारी आत्म-प्रभावकारिता की भावना अधिक है। आत्म-प्रभावकारिता आनुवांशिकी पर आधारित न होकर, विचार का एक सीखा हुआ पैटर्न है। नक़ल करने की क्षमता बचपन में शुरू होती है और जीवन भर चलती है। बण्डुरा के अनुसार, रोल मॉडल के सम्पर्क और सफलता के अपने स्वयं के सकारात्मक अनुभव के माध्यम से बच्चों में आत्म-प्रभावकारिता विकसित होती है (बण्डुरा 1977)। इसलिए उच्च आत्म-सम्मान वाले आत्मविश्वासी शिक्षक जिनमें अपनी प्रभावशीलता को विकसित करने और उसमें विश्वास करने की क्षमता हो, वे ऐसे आत्मविश्वासी विद्यार्थियों का विकास कर सकते हैं जो अपनी प्रभावशीलता में भी विश्वास करें (लॉ और अन्य 2010)।

आत्म-प्रभावकारिता शोध उन हस्तक्षेपों के औचित्य को भी दर्शाता है जो विद्यार्थियों में आत्म-सम्मान, आत्मविश्वास और ख़ुशहाली को बढ़ावा देते हैं। आत्मसम्मान वह प्रवृत्ति है जो व्यक्ति स्वयं के प्रति रखता है। हालाँकि आत्म-सम्मान अपेक्षाकृत स्थिर है किन्तु सफलता और विफलता इसे प्रभावित कर सकती है। एक वयस्क की हैसियत से अपने अनुभवों पर चिन्तन करते हुए हमें पता चलता है कि हम अपनी उपलब्धियों के बारे में अच्छा महसूस करते हैं और अपनी असफलताओं से आहत होते हैं। एक बच्चे के लिए बहिष्कृत, निन्दित या उपेक्षित होना या दण्डित किया जाना एक बहुत ही दर्दनाक मनोवैज्ञानिक अनुभव है जो आत्म-सम्मान को कम कर सकता है।

निष्कर्ष

समावेशी शिक्षा का अभ्यास करने के लिए आवश्यक आत्म-प्रभावकारिता में प्रशिक्षु शिक्षकों को तैयार करने में सेवापूर्व शिक्षक-शिक्षा महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। जब अनुभवी शिक्षक-प्रशिक्षकों और अभ्यासकर्ताओं के मार्गदर्शन में, रचनात्मक कलाओं का उपयोग करते हुए, समर्थन मूल्य और विश्वास प्रणाली की खोज की जाती है तो गहरी सोच और चिन्तन का रास्ता खुलता है। इसके अलावा स्व-अधिवक्ताओं, विशेष रूप से विकलांग व्यक्तियों के साथ बातचीत भी सम्बन्धों और दोस्ती का निर्माण करती है जो भय और अज्ञानता पर आधारित अभिवृत्तिक अवरोधों को ख़त्म करती है। आत्म-चिन्तन में संलग्न होने से जाँच-पड़ताल का वह दृष्टिकोण विकसित होता है जो समावेशी अभ्यासों के लिए आवश्यक है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि इस तरह के समावेशी अभ्यास के लिए शिक्षक को अधिगम का सुगमकर्ता, एक प्रेरक और एक पुनर्वासन परामर्शदाता बनना होगा और इसलिए सेवापूर्व शिक्षक पाठ्यक्रम के लिए विषय ज्ञान से परे जाकर आत्म-प्रभावकारिता प्रशिक्षण पर विचार करना ज़रूरी होगा। इसमें सन्देह नहीं कि नियमित कक्षाओं में उच्च समर्थन की आवश्यकता वाले बच्चों को शामिल करने के बारे में चिन्तन प्रक्रिया के माध्यम से विचार किया जाना चाहिए जो आत्म-प्रभावकारिता की ओर ले जाता है। बण्डुरा के काम का उल्लेख करते हुए यह कहा जा सकता है कि आत्म-प्रभावकारिता की मज़बूत भावना वाले लोग जिन गतिविधियों में भाग लेते हैं, उनमें गहरी रुचि और प्रतिबद्धता विकसित करते हैं; अतः वे चुनौतीपूर्ण समस्याओं से अभिभूत नहीं होते और जल्दी ही अपनी असफलताओं से उबरने लगते हैं। व्यवहार सम्बन्धी परिवर्तन लाने के लिए आत्म-प्रभावकारिता सबसे महत्वपूर्ण शर्त है।

References

Ainscow, M.Booth, T. and Dyson, A. (2006). *Improving Schools, Developing Inclusion*, First Edition. London: Routledge.

Bakker, J.P., Aloia, G.F. and Aloia, S.F. (2002). *Preparing Teachers for All Students* in F.E. Obiakor, P.A. Grant and E.A.Dooley (eds). Educating All Learners: Refocusing on the Comprehensive Support Model, Springfield, IL: Charles C. Thomas.

Bandura, A. (1977). *Self- efficacy: toward a unifying theory of behavioural change*. Psychol Rev 84:191-215.

Burnaford, G., Fischer, J. and Hobson, D. (2001) *Teachers Doing Research, The Power of Action through Inquiry*, Second Edition, New Jersey: Lawrence Erlbaum Associates Inc.

Eisner E.W. (1985). *The Educational Imagination: On the Design and Evaluation of School Programs* (4th Edition) New York: Macmillan.

Forlin C, and Ming-Gon J.L. Ed. (2008) *Reform, Inclusion and Teacher Education*, Routledge.

Fuchs W.W. *Examining Teachers' Perceived Barriers Associated with Inclusion*, SRATE Journal Winter 2009-2010, Vol. 19, 1. https://files.eric.ed.gov/fulltext/EJ948685.pdf

Law A. Halkiopoulos C. and Brayan-Zaykov C. (2010). *Psychology*, Malaysia: Pearson Education Ltd.

Sailor, W. and Skrtic, T.M. (1996). *School/Community Partnerships and Educational Reform*, Remedial and Special Education, 17.

Schon, D. (1983). *The Reflective Practitioner*, New York: Basic Books.

Snyder C.R., Lopez S.J., and Pedrotti J.T. (2011) *Positive Psychology*, Second Edition, Sage Publications India Pvt Ltd.

UNESCO (2017) *A Guide for Ensuring Inclusion and Equity in Education*. https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000248254/PDF/248254eng.pdf.multi.nameddest=305_17%20Ensuring%20Inclusion_int_21_28_en.indd%3A.178893%3A656



अनुराधा नायडू ने 0-6 वर्ष के आयु वर्ग में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के साथ एक प्रारम्भिक हस्तक्षेपकर्ता के रूप में हांगकांग में काम किया। यह कार्य उन्होंने एक प्रारम्भिक शिक्षा केन्द्र के तत्वावधान में किया जिसे ग़ैर-चीनी भाषी आबादी की सेवा करने वाले हांगकांग सरकार के कार्यक्रम द्वारा अनुदान प्राप्त था। वे 20 साल पहले चेन्नई के विद्या सागर में एक विशेष शिक्षिका के रूप में प्रशिक्षित हुईं और वहाँ उनका परिचय अन्तर्विषयक दृष्टिकोण से हुआ। उनके अभ्यास इसी बात को प्रतिबिम्बित करते हैं क्योंकि वे लगातार अपने विद्यार्थियों के लिए अधिगम की एक मज़ेदार प्रक्रिया में थेरेपी, शिक्षा और वैकल्पिक सम्प्रेषण को एक साथ बुनने का प्रयास करती हैं। वे अंशकालिक रूप से विद्यासागर के बीएड कोर्स में समावेशी शिक्षा तथा महिला क्रिश्चियन कॉलेज, चेन्नई के मनोविज्ञान विभाग में मनोविज्ञान पढ़ाती हैं। उनसे anuradha.naidu@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

ज़रूरी है परिवार का शामिल होना

डाउन सिंड्रोम वाली एक बेटी का पालन

फाल्गुनी दोषी

मेरा जीवन बिलकुल सीधी लकीर पर चल रहा था, जैसी लकीर मैंने ख़ुद खींची थी— कम्प्यूटर की पढ़ाई, मल्टीनेशनल फर्म में नौकरी, टॉल, डार्क, हैंडसम केयरिंग पति, चार हाथों से प्यार बरसाने वाला परिवार और एक प्यारी बिटिया।

मैं जब दूसरी बार माँ बनने वाली थी तब परिवार में सब लोग सहमत थे कि हम कोई सोनोग्राफी टैस्ट नहीं करवाएँगे। बेटा या बेटी जो भी जीवन में आएगा उसे ख़ुशहाल ज़िन्दगी और अच्छी परवरिश देंगे। यह सब मुझे इसलिए बताना पड़ रहा है क्योंकि उस समय बेटे को तरजीह देने और सोनोग्राफी के ज़रिए लिंग पता करने की पुरानी विचारधारा चलन में थी। यह सब बताते हुए भी मैं अपने ग़ुस्से को क़ाबू नहीं कर पा रही हूँ। भला वो सब कैसी माँएँ होंगी जो ख़ुद या परिवार के दबाव में अपने अंश को कुचल सकती हैं...। ख़ैर छोड़ो ये सब बातें।

जिस दिन स्तुति मेरे जीवन में आई, उसी दिन भगवान ने मुझे अपनी लकीर से उठाकर एक अनजान रास्ते पर डाल दिया। नॉर्मल डिलीवरी की वजह से मैं डॉक्टर और नर्स की बातें सुन पा रही थी। जैसे ही स्तुति के रोने की आवाज़ सुनाई दी, नर्स बोली, 'डॉक्टर यह एंजेल जैसी दिख रही है, इसकी आँखें तो देखो, अलग हैं सबसे।' मुझे इतना समझ में आया कि मुझे बेटी हुई है और वो फ़रिश्ते जैसी प्यारी है। सारी बातें एक पिक्चर की तरह मेरे स्मृतिपटल में अंकित हैं, ऐसे जैसे कल ही घटित हुई हों। दूसरे दिन जब बच्चों के डॉक्टर राउंड लगाने आए तब उनकी और गाइनकोलॉजिस्ट की कुछ बातचीत मेरी समझ में नहीं आई। मेरे पूछने पर उन्होंने बताया कि स्तुति की कुछ जाँच करवानी पड़ेगी। उन्हें शक है कि बच्ची मंगोल[i] है। साइंस विषय की पढ़ाई की वजह से मुझे समझ में आ गया कि वह डाउन सिंड्रोम के बारे में बात कर रहे हैं। जाँच के लिए स्तुति का ख़ून लेने से लेकर पूरे महीने जब तक रिपोर्ट नहीं आई, मैं अपने आप को मनाती रही कि डॉक्टर को समझने में ग़लती हो सकती है। भगवान मेरे साथ कभी ऐसा नहीं करेंगे। मैंने आज तक सब के साथ अच्छा व्यवहार किया है, मेरे साथ कुछ ग़लत नहीं होगा। कभी भगवान को रिश्वत देने की भी कोशिश की कि हे भगवान! स्तुति की रिपोर्ट नॉर्मल देना मैं हर रोज़ माला करूँगी, गायत्री मन्त्र बोलूँगी।

जब रिपोर्ट हाथ में आई तो समझ में आया कि डॉक्टर का अनुमान सही था। वह ट्राइसोमी 21 के साथ ही पैदा हुई है। आँखों में पानी भर आया, बहुत तक़लीफ़ भी हुई। लेकिन फिर तुरन्त ही विचार आया कि अब तो यही सच है, अब आगे क्या करना है? बचपन में ही माँ को खो देने की वजह से अपनी तक़लीफ़ में से रास्ता ख़ुद ही ढूँढ़ने की एक आदत-सी हो गई थी। वही अब काम में आया। सबसे पहले मैं जेनेटिक्स डॉक्टर से मिलने गई। उनसे समझा कि इसकी वजह क्या-क्या हो सकती है। इसकी ताक़त और कमज़ोरी क्या है? उन्होंने बताया कि चमकदार रंग, ख़ुशनुमा माहौल, स्तुति के साथ लगातार बातें करना आदि बहुत लाभदायक रहेगा। डाउन सिंड्रोम वाले बच्चों की मांसपेशियाँ कमज़ोर होती हैं, अत: उसका भी ध्यान रखना पड़ेगा। हर काम धीरज से सीखने से आ जाएगा। साथ ही उन्होंने थेरेपी के लिए भी समझाया। मैं वहीं से एक सेंटर में गई जो स्पेशल बच्चों के लिए काम करते थे। वहाँ पहुँचकर मैं दंग रह गई। इतने सारे बच्चे। हर एक को अलग-अलग तक़लीफ़ और उनकी माँओं के परेशान चेहरे। मैंने जैसे-तैसे अपने आप को सँभाला। मैंने तब ही सोच लिया था कि मैं जी-जान से अपनी स्तुति को बड़ा करूँगी और उसे एक अच्छा जीवन देने की कोशिश करूँगी।

स्तुति की फ़िज़ियोथेरेपी तब शुरू की जब वह छह महीने की थी। मैं वहाँ के सभी थेरेपिस्ट से उसके लिए ज़रूरी हर बात सीखती। फिर घर आकर उसे दोहराती। कम्प्यूटर जिसे मैंने अपना करियर बनाने के लिए सीखा था वह डाउन सिंड्रोम की जानकारी प्राप्त करने में बड़ा लाभदायक सिद्ध हुआ। जीवन में कुछ बदलाव आए थे, 'मिशन स्तुति' पर काम चालू हो गया था। नौकरी मैंने छोड़ दी थी। मैंने अपना पूरा समय, ताक़त और अपना ज्ञान दोनों बच्चों को बड़ा करने में लगा दिया। मेरी ख़ुशकिस्मती है कि मुझे सब जगह अच्छे इन्सान ही मिले— अच्छे टीचर्स, अच्छे थेरेपिस्ट, अच्छे पड़ोसी, अच्छे सम्बन्धी, अच्छा परिवार।

आज स्तुति सत्रह साल की है। बहुत ख़ुशमिज़ाज और सुलझी हुई है। दसवीं कक्षा पास कर ली है। कम्प्यूटर, मोबाइल और सारे गैजेट आराम से उपयोग करती है। घर के काफ़ी काम जानती है। आज मैं उसकी नहीं, वह मेरी मददगार है। इस रास्ते पर चलने के दौरान मैंने कई बातें सीखी हैं। स्तुति की तुलना मैं कभी भी दूसरे बच्चों के साथ न करते हुए उसी के साथ करती हूँ। कल उसे जितना आता था उससे आज वह ज़रा-सा भी आगे बढ़ी है तो मैं ख़ुश हूँ। थेरेपिस्ट हमारी मदद कर सकते हैं, लेकिन आख़िर काम तो हमें ही करना है। इसीलिए सभी काम— चाहे प्ले थेरेपी हो, स्पीच थेरेपी या पढ़ाई में टीचर तो उसकी मदद करते ही, मैं भी इन्हें सीख लेती और उसकी मदद करती। मैं वह हर चीज़ करने की आदी हो गई थी जो स्तुति के लिए ज़रूरी थी। पूरा परिवार जब इस प्रक्रिया में जुट जाता है तो परिणाम अपने आप दिखता है। स्तुति वह सब सीख सकती है जो कोई भी इन्सान सीख सकता है। सीखने की अवधि ज़्यादा लम्बी हो सकती है या फिर सिखाने का तरीक़ा अलग हो सकता है। इस दौरान मुझे यह समझ में आ ही गया है कि रातोंरात चमत्कार नहीं होगा। यह जीवन है और जीवन का संघर्ष चलता रहता है। यदि अच्छे परिणाम चाहिए तो हमें ख़ुश रहना होगा और हरदम प्रयत्न करते रहना होगा। मैं ख़ुशनसीब हूँ कि मेरे हर क़दम पर परिवार ने एकजुट होकर साथ दिया है और जहाँ ज़रूरत पड़ी वहाँ हौंसला अफ़ज़ाई भी की है।

अनजाने रास्ते पर क़दम अभी भी चल रहे हैं, कई पड़ाव पार कर लिए, कई पड़ाव बाक़ी हैं, मज़ा मंज़िल में ही नहीं— उस राह में भी है, जो हमें मंज़िल तक ले जाती है।



[i] मंगोल शब्द अब स्वीकृत नहीं है। इसके लिए डाउन सिंड्रोम शब्द उपयोग किया जाता है।



फाल्गुनी दोषी
स्तुति दोषी की माँ

अदृश्य विकलांगताएँ

अर्पिता यादव

क्या आपको फ़िल्म तारे ज़मीन पर याद है? इस फ़िल्म ने लोगों में अधिगम की अक्षमता के बारे में जागरूकता पैदा की और इसने मुझे भी कुछ करने के लिए प्रेरित किया। कई वर्षों तक एक विशेष शिक्षक के रूप में काम करने के बाद मैंने विशिष्ट अधिगम अक्षमता (एसएलडी) पर ध्यान केन्द्रित करने का निर्णय लिया। मैंने यह कोशिश भी की है कि अधिगम की अक्षमता वाले बच्चों के साथ काम करने के अपने अनुभव का उपयोग मैं उन्हें आत्मनिर्भर बनाने और 'अपनी लड़ाई ख़ुद लड़ने' में सक्षम बनाने के लिए करूँ। विशिष्ट अधिगम अक्षमता भावनात्मक अशान्ति, बौद्धिक अक्षमता या संवेदी ख़राबी नहीं है। ये अपर्याप्त पालन-पोषण या शैक्षिक अवसर की कमी के कारण नहीं होतीं।

आइए, हम शुरुआत में यह समझने की कोशिश करें कि एसएलडी क्या हैं और उनसे जुड़े कुछ पहलू कौन-से हैं।

- यह एक तन्त्रिकाजन्य विकार है, जिसका कारण है व्यक्ति के मस्तिष्क में 'तन्त्रिकाओं के तारों के संयोजन' के तरीक़े में अन्तर होना।
- एसएलडी वाले बच्चे अपने साथियों की तरह ही या उनसे अधिक होशियार होते हैं, लेकिन यदि उन्हें चीज़ों को ख़ुद समझना पड़े या पारम्परिक तरीक़ों से सिखाया जाए तो उन्हें पढ़ने, लिखने, वर्तनी, तर्क करने, सूचना को याद करने और/या व्यवस्थित करने में कठिनाई होती है।
- एसएलडी का इलाज नहीं हो सकता या उसे ठीक नहीं किया जा सकता। लेकिन सही समर्थन और हस्तक्षेप के साथ बच्चे स्कूल में अच्छा प्रदर्शन कर सकते हैं और अपने करियर में सफल हो सकते हैं।

मोटे तौर पर इन विकारों में एक या अधिक बुनियादी मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाएँ शामिल हैं :

1. श्रवण और दृश्य संवेदन (इनपुट)
2. अनुक्रमण, अमूर्तीकरण और व्यवस्थापन (एकीकरण)
3. काम करना, अल्पावधि और दीर्घकालिक स्मरण क्षमता (स्मृति)
4. भावपूर्ण भाषा (आउटपुट) और
5. सूक्ष्म और सकल मोटर कौशल

लक्षण

- पढ़ने की धीमी गति
- जो पढ़ा है उसे समझने और याद रखने में दिक़्क़त
- दिखने/सुनने में समान शब्दों को लेकर भ्रम
- वाक्य संरचना में कठिनाई और ख़राब व्याकरण
- लिखने की धीमी गति और बहुत बड़ा-बड़ा लिखना
- बारम्बार स्पेलिंग की त्रुटियाँ
- तर्कण और अमूर्त अवधारणाओं में दिक़्क़त
- गणित के नियमों को याद रखने में दिक़्क़त
- अंकगणितीय संक्रियाओं को याद करने में कठिनाई
- पाठ के मुख्य विचारों और महत्वपूर्ण बिन्दुओं को खोजने में कठिनाई
- अक्षरों और गणित के चिह्नों को उलटना
- अच्छी तरह से नोट न ले पाना और उसकी रूपरेखा न बना पाना
- निर्देशों को समझने में कठिनाई
- समय-प्रबन्धन और व्यवस्थापन न कर पाना
- पढ़ाई की शुरुआत करने और उसमें लगे रहने में कठिनाई
- दिए गए समय में काम या असाइनमेंट को पूरा करने की असमर्थता

एसएलडी के प्रकार

श्रवण प्रसंस्करण विकार

श्रवण प्रसंस्करण विकार (एपीडी) एक ऐसी स्थिति है जिसमें कान के माध्यम से आने वाली ध्वनि को मस्तिष्क द्वारा संसाधित करने के तरीक़े पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। एपीडी वाले व्यक्ति शब्दों में ध्वनियों के बीच के सूक्ष्म अन्तर को नहीं पहचानते हैं, भले ही वे ज़ोर-से और स्पष्ट रूप से सुनाई देती हों। उन्हें यह बताने में भी मुश्किल हो सकती है कि ध्वनियाँ

कहाँ से आ रही हैं, वे ध्वनियों के क्रम की समझ नहीं बना पाते या अगर पृष्ठभूमि में शोर हो रहा हो तो वे वहाँ कही जा रही बातों को समझ नहीं पाते। उदाहरण के लिए, एक बच्चा एक शान्त स्थान पर बैठकर अपने आप पढ़ाई कर सकता है लेकिन कक्षा में पाठ को समझना या किसी निर्देश का पालन करना उसके लिए मुश्किल हो सकता है।

श्रवण प्रसंस्करण विकार के प्रकार

- *ऑडिटरी फ़िगर* ग्राउण्ड अर्थात पृष्ठभूमि में शोर होने पर ध्यान दे पाने की असमर्थता। इस केस में शोरगुल से भरी, शिथिल संरचित कक्षाएँ बहुत निराशाजनक हो सकती हैं।
- *ऑडिटरी मेमोरी* अर्थात निर्देश, सूची या अध्ययन-सामग्री जैसी जानकारी को याद रखने में कठिनाई होना। यह तत्काल हो सकता है (मैं इसे अभी याद नहीं कर सकता) और/या देर से (मैं इसे बाद में याद नहीं रख सकता)।
- *ऑडिटरी डिस्क्रिमिनेशन* यानी ऐसे शब्दों या ध्वनियों के बीच अन्तर को सुन पाने में कठिनाई जो एक समान हैं (कोट के लिए बोट, श के लिए च)।
- *ऑडिटरी अटेंशन* यानी कक्षा में ध्यान केन्द्रित करने या किसी कार्य को पूरा करने के लिए लम्बे समय तक सुनने की असमर्थता।
- *ऑडिटरी कोहेशन* यानी बातचीत से निष्कर्ष निकालने, पहेलियों को समझने या मौखिक गणित की समस्याओं को समझने की असमर्थता। इन सभी में उच्च स्तर के श्रवण प्रसंस्करण और भाषा की आवश्यकता होती है।

बच्चे की मदद करना

- जब भी सम्भव हो पृष्ठभूमि का शोर कम करें और यह सुनिश्चित करें कि जब आप बोल रहे हों तो बच्चा आपकी ओर देखे।
- सरल, अर्थवान और भावपूर्ण वाक्यों का उपयोग करें और थोड़ा धीरे-धीरे व कोमल स्वर में बोलें।
- बच्चे से कहें कि वह आपके निर्देश आपके सामने दोहराए। जब तक कार्य पूरा न हो जाए तब तक ज़ोर-ज़ोर से बोलकर उन्हें दोहराता रहे (आपके सामने या ख़ुद अपने लिए)।
- बाद में पूरे करने वाले निर्देशों के लिए नोट्स लिखने, घड़ी पहनने या एक व्यवस्थित घरेलू दिनचर्या बनाए रखने से मदद मिलती है।
- जब ध्यानपूर्वक सुनना आवश्यक हो तो शान्त स्थानों पर जाएँ। उसे घर पर पढ़ने के लिए एक शान्त जगह दें और स्कूल में बैठने की जगह बदलें जैसे कक्षा में आगे या खिड़की की ओर पीठ करके।
- अध्ययन में सहायक चीज़ें जैसे कि टेप रिकार्डर, एपीडी वाले बच्चों के लिए विशेष रूप से डिज़ाइन किए गए ऑनलाइन नोट्स आदि सीखने में मदद करेंगे।
- उसे नियमित रूप से ऐसे काम सौंपें जो उसके लिए सम्भव हों, जैसे अपने कमरे और डेस्क को साफ़-सुथरा रखना।

गणना अक्षमता (डिस्कैल्कुलिया)

गणना अक्षमता अधिगम की एक विशिष्ट अक्षमता है जो किसी व्यक्ति की संख्या को समझने और गणित के नियमों को सीखने की क्षमता को प्रभावित करती है। इस प्रकार के एसएलडी वाले लोगों में चिह्नों के बारे में अच्छी समझ नहीं होती; उन्हें संख्याओं को याद रखने और व्यवस्थित करने में मुश्किल होती है; समय बताने में कठिनाई होती है या गिनने में परेशानी होती है।

गणना अक्षमता के प्रकार

- मौखिक गणना अक्षमता एक ऐसी समस्या है जिसमें बच्चा संख्याएँ पढ़ या लिख सकता है, लेकिन मौखिक रूप से प्रस्तुत किए जाने पर उन्हें पहचानने में उसे कठिनाई होती है।
- प्रैक्टोग्नॉस्टिक गणना अक्षमता तब होती है जब बच्चा गणितीय अवधारणाओं को कुशलतापूर्वक प्रयोग करने में कठिनाई का अनुभव करता है, जैसे कि वस्तुओं की तुलना करना (बड़ा, छोटा)।
- लेक्सिकल गणना अक्षमता एक ऐसी समस्या है जिसमें बच्चे को अंक और गणितीय चिह्नों (+ और -) को पढ़ने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है।
- ग्राफिकल गणना अक्षमता तब होती है जब बच्चे को अवधारणाओं को समझने के बाद भी सही चिह्नों को पढ़ने, लिखने और उपयोग करने में कठिनाई होती है।
- आइडिओग्नॉस्टिकल गणना अक्षमता में बच्चे को गणितीय चिह्नों और उनके सम्बन्धों को जोड़ने में कठिनाई होती है।
- ऑपरेशनल गणना अक्षमता में बच्चे को अंकगणितीय संक्रियाओं को करने में कठिनाई होती है।

बच्चे की मदद करना

- एक साथ खाना बनाना : माता-पिता और बच्चे एक व्यंजन विधि चुन सकते हैं, सूची बना सकते हैं और बच्चे को आवश्यक सामग्री लाने के लिए कह सकते हैं। उदाहरण के लिए, 1 किलो फूलगोभी, 3 गाजर, 2 प्याज़, शिमला मिर्च के 6 टुकड़े या सब्ज़ियों को 5 टुकड़ों में काटना।

- घड़ी के साथ खेलना : बच्चे से कहें कि वह एक निश्चित समय होने पर आपको बताए। फिर आप उसकी प्रशंसा करते हुए उससे कहें कि उसने कितना अच्छा काम किया है और वह कितना ज़िम्मेदार और बड़ा हो गया है।
- सामान खरीदना : बच्चे को ख़ुद चीज़ें खरीदने की ज़िम्मेदारी देने और पर्स में पैसे की जाँच करने से उसे संख्याओं से सम्बन्धित कुछ अवधारणाओं को समझने में मदद मिल सकती है।
- गिनती करना : वह रास्ते में दिखाई देने वाली कारों, लोगों, सफेद (या कोई भी अन्य रंग) जूते पहने हुए लोगों या चढ़ते समय सीढ़ियों को गिन सकता है।
- टेलीफोन नम्बर याद रखना : बच्चा दादी के फोन नम्बर के पहले तीन अंकों को याद कर सकता है और बाक़ी के नम्बर घर का कोई बड़ा व्यक्ति बता सकता है। एक साथ मिलकर फोन करें और अगर वह इसे अच्छी तरह से करे तो उसकी तारीफ़ करें।
- दुकानें : बच्चा एक ऐसे स्टोर में क्लर्क के समान कार्य कर सकता है, जिसमें घर और स्कूल की चीज़ों की 'सेल' लगी है। हर चीज़ का एक निर्धारित 'मूल्य' है। शिक्षक और सहपाठी (स्कूल में) तथा माता-पिता और परिवार के अन्य सदस्य (घर पर) ग्राहक हैं। यह खेल मात्रा, जोड़, घटाव और पैसे के प्रबन्धन के लिए एक अच्छा अभ्यास है।

लेखन विकार (डिसग्राफिया)

लेखन विकार अधिगम की एक विशिष्ट अक्षमता है जो किसी व्यक्ति की लिखने की क्षमता और सूक्ष्म मोटर कौशल को प्रभावित करती है। इसकी समस्याओं में अपठनीय लिखावट, असंगत अन्तरण, काग़ज़ पर ख़राब स्थानिक योजना, ख़राब वर्तनी और लिखते समय अक्षरयोजन के अलावा एक ही समय में सोचने और लिखने में कठिनाई आदि बातें हो सकती हैं।

लक्षण

- अपर केस/लोअर केस अक्षरों का मिश्रण, अनियमित आकार और आकृतियाँ, अधूरे अक्षर, ग़लत पकड़ जिसके परिणामस्वरूप अपठनीयता।
- लेखन कार्य को पूरा करने की अनिच्छा या इन्कार, लेखन में असमर्थता या धीमेपन से हताशा के कारण रोना और तनाव, लिखते समय स्वयं से बातें करना।

एक विद्यार्थी के विचार

लिखना निश्चित रूप से सबसे बुरा काम है। मुझे उन सभी चीज़ों को याद रखने में बहुत मुश्किल होती है जिन्हें मुझे याद रखना चाहिए, जैसे पूर्ण विराम और कैपिटल लेटर्स। जब मैं कहानी के बारे में सोचने की कोशिश कर रहा होता हूँ तो फिर यह सोचना लगभग असम्भव है कि शब्दों की स्पेलिंग कैसे लिखूँ। यह याद रखना बहुत मुश्किल है कि मैं क्या लिख रहा हूँ... मैं तय करता हूँ कि सिर्फ़ कुछ वाक्य लिखना आसान है। इससे मेरे हाथ में इतना दर्द नहीं होता। पिछले स्कूल में मेरे शिक्षक शिकायत करते थे, लेकिन मैं बस बहुत छोटी कहानियाँ लिखता रहता हूँ। उन्हें यह समझ में नहीं आता कि संघर्ष करना और लिखने के लिए संघर्ष करना कैसा होता है और फिर भी काग़ज़ गन्दा और ग़लतियों से भरा हुआ होता है। वे हमेशा मुझे बताते हैं कि मेरे पेपर कितने गन्दे हैं। वे समझ ही नहीं पाते कि मैं कितनी कोशिश करता हूँ। मैं कितनी भी सावधानी से काम क्यों न करूँ, मेरे शब्द अन्य बच्चों के शब्दों के जैसे नहीं दिखते हैं। कभी-कभी मुझे पता होता है कि मैं शब्दों को कैसा देखना चाहता हूँ लेकिन ऐसा हो ही नहीं पाता है।

वैसे यह विद्यार्थी प्रतिभाशाली है : उसका बौद्धिक स्तर बहुत ऊँचा और उसकी मौखिक अभिव्यक्ति तथा पढ़ना भी उत्कृष्ट है। वह कम्प्यूटर पर कार्य करने में बहुत अच्छा है, लेकिन वह लिखने के लिए संघर्ष करता है।

लेखन विकार के प्रकार

- *डिस्लेक्सिक लेखन विकार* के कारण अनायास या बिना पूर्व तैयारी के लिखा गया लेखन अपठनीय होता है, नक़ल किया गया काम अच्छा होता है और स्पेलिंग ख़राब होती हैं।
- *मोटर लेखन विकार* सूक्ष्म मोटर कौशल की कमी, अपर्याप्त निपुणता, मांसपेशियों की ख़राब टोन और/या अनिर्दिष्ट मोटर बेढंगेपन के कारण होता है। आमतौर पर लिखित कार्य पठनीय नहीं होता, भले ही किसी अन्य लेखन को देखकर उसकी नक़ल की गई हो और एक छोटे-से अनुच्छेद को लिखने में भी अत्यधिक प्रयास की आवश्यकता होती है।
- *स्थानिक लेखन विकार* यानी स्थान की समझ में कठिनाई होना। इसमें बच्चे को दी गई रेखाओं पर लिखने और शब्दों के बीच अन्तर रखने में परेशानी होती है।
- *फोनोलॉजिकल या ध्वन्यात्मक लेखन* विकार में लिखने और स्पेलिंग की गड़बड़ियाँ होती हैं जिसमें अपरिचित शब्दों, ग़ैर-शब्दों (ग़ैर-शब्द यानी अक्षरों या ध्वनियों का ऐसा समूह जो देखने-सुनने में शब्द जैसा लगता है, पर मूलत: उस भाषा को बोलने वाले लोगों द्वारा स्वीकृत नहीं होता। हो सकता है कि किसी और भाषा में उसे सार्थक

शब्द माना जाता हो। - सम्पादक) और ध्वन्यात्मक रूप से अनियमित शब्दों की स्पेलिंग बिगड़ जाती हैं।

- लेक्सिकल लेखन विकार तब होता है जब बच्चा स्पेलिंग बता सकता है लेकिन वह अनियमित शब्दों की ग़लत स्पेलिंग के मामले में मानक 'ध्वनि-से-अक्षर' वाले पैटर्न पर निर्भर करता है। यह ध्वन्यात्मक भारतीय भाषाओं की तुलना में ग़ैर-ध्वन्यात्मक भाषाओं, जैसे अंग्रेज़ी और फ्रेंच, में अधिक आम है।

बच्चे की मदद करना

- अक्षरों को महसूस करना : बच्चे की मदद करें कि उसका ध्यान महसूस करने पर केन्द्रित हो, देखने पर नहीं। बच्चे की पीठ पर या उसकी हथेली पर किसी अक्षर को लिखकर बताएँ कि उसे कैसे बनाया जाता है। फिर देखें कि क्या वह उस अक्षर को काग़ज़ पर लिख सकता है।
- बड़ा-बड़ा लिखना : इस लेखन विकार में बच्चा यह भूल जाता है कि अक्षर कैसे बनते हैं। बहुसंवेदी सामग्रियों का उपयोग करके बड़े अक्षर बनाने से मदद मिल सकती है।
- मिट्टी का उपयोग करना : गीली मिट्टी को बेलनाकार देकर उनसे अक्षर बनाने से हाथ की ताक़त बढ़ती है और यह आकृतियों की स्मृति को मज़बूत करते हुए सूक्ष्म मोटर कौशल को बढ़ाता है।
- तोड़कर लिखना। पॉवर (acronym)! यह मुख्य शब्द है-

  P - (प्रिपेर) तैयार करें, अपने सभी विचारों को सूचीबद्ध करें

  O - (ऑर्गनाइज़) उन्हें व्यवस्थित और इकट्ठा करें

  W - (राइट) मसौदा लिखें

  E - (एडिट) सम्पादित करें, त्रुटि को तलाशें और सुधारें

  R – (रिवाइज़) संशोधित करें, अन्तिम मसौदा लिखें

यह तरीक़ा बड़े बच्चों के साथ बहुत कारगर होता है और वे इसे आसानी से सीखते हैं। कक्षा के अन्य विद्यार्थी भी इस रणनीति को क्रियान्वित करने में बच्चे की मदद करते हैं।

डिस्लेक्सिया

एक विशिष्ट अधिगम विकलांगता जो पढ़ने और सम्बन्धित भाषा-आधारित प्रसंस्करण कौशल को प्रभावित करती है। यह पढ़ने के प्रवाह, डी-कोडिंग, पढ़ने की समझ, स्मरण, लेखन, स्पेलिंग और कभी-कभी बोलने को प्रभावित कर सकती है। इसकी गम्भीरता प्रत्येक व्यक्ति में अलग-अलग हो सकती है और इसके साथ अन्य सम्बन्धित विकार (सह-अस्वस्थता) भी हो सकते हैं।

लक्षण

- बच्चा होनहार, अत्यधिक बुद्धिमान और सुवक्ता दिखाई देता है, लेकिन कक्षा के स्तर पर पढ़ने, लिखने या स्पेलिंग बताने में असमर्थ होता है और इसलिए उस पर आलसी, लापरवाह और पर्याप्त प्रयास नहीं करने वाले का लेबल लगा दिया जाता है।
- बच्चे का बौद्धिक स्तर उच्च होता है, लेकिन उसे टेस्ट और परीक्षाएँ पसन्द नहीं होतीं। इससे उसका आत्मसम्मान कम हो जाता है, भले ही बच्चे में कला, नाटक, खेल, डिज़ाइनिंग, व्यवसाय जैसी विविध प्रतिभाएँ हों।
- ध्यान लगाए रखने में कठिनाई होती है : वह अतिसक्रिय या स्वप्नदृष्टा लगता है।
- व्यावहारिक व क्रियाशील अनुभवों, प्रदर्शन, प्रयोग, अवलोकन और दृश्य सहायक सामग्री के माध्यम से वह अच्छी तरह से सीखता है।
- आकृति में समान अक्षर— d, p, q, g —उसे भ्रमित करते हैं। उसे bird शब्द drib जैसा दिख सकता है।
- ज़ोर-से पढ़ने से अत्यधिक तनाव पैदा होता है चूँकि अक्षर और उनकी ध्वनियाँ सह-सम्बन्धित नहीं हैं, इसलिए एक ही पंक्ति या अनुच्छेद को बार-बार पढ़ा जाता है।

डिस्लेक्सिया के प्रकार

- *ध्वन्यात्मक* : बच्चे को भाषा की ध्वनियों को तोड़ने और लिखित प्रतीकों के साथ उन ध्वनियों के मिलान में परेशानी होती है। ध्वन्यात्मक प्रसंस्करण की चुनौतियाँ शब्दों को डिकोड करना कठिन बनाती हैं।
- *सरफेस डिस्लेक्सिया* : बच्चा नए शब्दों को बोल सकता है, लेकिन आम शब्दों को देखकर पहचानने में जूझता है। weight या debt जैसे शब्द, जिनकी ध्वनियाँ अपनी स्पेलिंग से अलग हैं, उसके लिए मुश्किल होते हैं।
- *रैपिड-नेमिंग डेफिसिट* : डिस्लेक्सिया वाले कई बच्चों को चीज़ें देखते ही जल्दी से उनके नाम बताने में परेशानी होती है जैसे कि अक्षर, संख्याएँ और रंग।

बच्चे की मदद करना

- पढ़ना : बच्चे को ज़ोर-से पढ़कर सुनाएँ। उसे सब कुछ पढ़ने दें। एक छोटा अनुच्छेद कई बार पढ़ा जा सकता है।
- शब्दावली : बच्चे से कहें कि वह माता-पिता/शिक्षक को हर दिन एक ऐसा नया शब्द बताए जो उसने उस दिन सीखा है। उसके मतलब के बारे में बात करें, उसे शब्दकोश में देखें और उस शब्द का प्रयोग करते हुए वाक्य बनाएँ।

- खेल : एक शब्द में जितने अक्षर हैं उतनी तालियाँ बजाकर बच्चे को सुनाएँ, शब्द की ध्वनियों को तोड़ें और उन्हें वापस एक साथ मिलाएँ, गानों, कविताओं और बालगीतों में आए अनुप्रासों की ओर बच्चे का ध्यान आकर्षित करें। कम्प्यूटर के संसाधनों जैसे ऐप, डिजिटल लर्निंग गेम और लर्निंग गेम्स वाली वेबसाइट का उपयोग करें।
- पूर्व-शिक्षण को प्रोत्साहित करें : पाठ पढ़ने से पहले हर बात को वास्तविक अनुभवों से जोड़ें। दृश्य-सामग्री, खिलौने, सामान्य घरेलू सामान, फील्ड ट्रिप आदि के साथ सामान्यीकरण करें।

भाषा प्रसंस्करण विकार

एक विशिष्ट प्रकार का श्रवण प्रसंस्करण विकार (एपीडी) जिसमें शब्दों, वाक्यों और कहानियों को बनाने वाले ध्वनि समूहों को अर्थ के साथ जोड़ने में कठिनाई होती है। एलपीडी अभिव्यक्ति की भाषा और/या ग्रहणशील भाषा को प्रभावित कर सकता है।

लक्षण

- बच्चे को पाठ्य का अर्थ समझते हुए पढ़ने में कठिनाई होती है।
- विचारों को मौखिक रूप में व्यक्त करने में कठिनाई होती है।
- वस्तुओं को लेबल करने या लेबल को पहचानने में कठिनाई होती है।
- कहने को बहुत कुछ होने पर भी न कह पाने के कारण वह अकसर बहुत निराश हो जाता है।
- उसे लगता है कि शब्द उसकी ज़बान पर हैं लेकिन उन्हें कहने में वह असमर्थ होता है।
- वह निराश हो सकता है या उदासी की भावना से घिरा हो सकता है।
- चुटकुलों को समझने में कठिनाई होती है।

अभिव्यंजक या भावपूर्ण भाषा विकार

इसमें आमतौर पर आयु विशेष के हिसाब से शब्दावली का ज्ञान काफ़ी कम होता है, इसलिए बच्चे के लिए सही नाम से चीज़ों की माँग करना बहुत मुश्किल होता है। व्याकरण के नियमों का पालन करने में भी कठिनाई होती है, जिसके परिणामस्वरूप जटिल वाक्यों का उपयोग करने में असमर्थता होती है।

चुनौतियाँ

- बच्चा जिस वस्तु को पहचानने की कोशिश कर रहा होता है उस वस्तु विशेष के लिए उससे जुड़े वर्णनात्मक शब्दों का उपयोग कर सकता है, लेकिन उसका नाम बताने में उसे कठिनाई होती है।
- समान अर्थ वाले शब्दों का ग़लत उपयोग, उदाहरण के लिए I need socks in my feet के स्थान पर I need socks on my feet का प्रयोग।
- रचनात्मक या मौलिक भाषा का उपयोग करने में कठिनाई : किसी विषय पर इधर-उधर की बातें करना या घुमा-फिराकर बातें करना।
- पूरकों या फिलर्स का उपयोग करना :*हम्म्म* या *यू नो* का अत्यधिक उपयोग करना ताकि उसे थोड़ा समय मिल जाए और कोशिश करके उन शब्दों को बोल सके जिन्हें वह बोलना चाहता है।
- अनावश्यक बहुशब्द प्रयोग : सामान्य प्रश्नों के उत्तर के लिए बच्चे को दो से चार सैकेण्ड का समय लगता है। इसे *प्रतिक्रिया विलम्बता समय* कहा जाता है। 'मैं भूल गया' या 'मैं नहीं जानता' का प्रयोग करके बच्चा अकसर वाक्य को बनाने के लिए अतिरिक्त समय पाने का प्रयास करता है।
- स्वयं से बात करना, पूर्वाभ्यास करना : अपनी कमज़ोर अल्पकालिक स्मृति की क्षतिपूर्ति में मदद करने के लिए बार-बार प्राप्त जानकारी को दोहराना।
- सीखने में असंगतता : जानकारी प्राप्त करने और उसे समझने के लिए कई अलग-अलग प्रकार के इनपुट की आवश्यकता होना।
- वह त्रुटियों की पहचान कर सकता है, लेकिन उन्हें ठीक करने में सक्षम नहीं होता : यह समझना कि कोई त्रुटि हुई है, लेकिन यह पता न होना कि इसे कैसे ठीक किया जाए।
- बच्चा वाक्य या विचार समाप्त नहीं करता है : बातचीत असम्बद्ध और अपूर्ण लग सकती है, अगर सन्दर्भ न हो तो उसके सन्देश को समझना मुश्किल हो जाता है।
- सामाजिक कौशल सम्बन्धी कठिनाइयाँ और समस्याग्रस्त व्यवहार : सामाजिक कौशल को लेकर समस्याएँ क्योंकि अन्य लोग उसे नहीं समझते हैं।
- आयु-उपयुक्त बौद्धिक स्तर लेकिन अकादमिक कठिनाइयाँ : जब शैक्षिक माँग बढ़ती है तो भाषा प्रसंस्करण की कमी के कारण उसके सीखने की मात्रा और गति प्रभावित हो सकती है।

बच्चे की मदद करना

- धीरे और स्पष्ट रूप से बोलें तथा जानकारी को सम्प्रेषित करने के लिए सरल वाक्यों का उपयोग करें एवं मुख्य अवधारणाओं को बोर्ड पर लिखें।

- नोट्स लिखने के लिए टेप रिकॉर्डर का उपयोग करने दें।
- व्यक्तिगत सहायक या सहकर्मी ट्यूटर की व्यवस्था करें।
- सुनने और समझने के संवर्धन के लिए विज़ुअलाइज़ेशन तकनीकों का और नोट्स लिखने के लिए ग्राफिक आयोजकों का उपयोग करें।
- छोटे-छोटे टुकड़ों में सरल, सीधे और व्यक्तिगत निर्देश दें और निर्देश देने से पहले बच्चे का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करें और बच्चे का चेहरा देखते हुए स्पष्ट रूप से बोलें।
- सूचना को संसाधित करने और समझने के लिए अतिरिक्त समय दें।
- बच्चे को सुनी हुई बात दोहराने के लिए कहें। इससे वक्ता को त्रुटियों की पहचान करने और बच्चे को उन्हें सुधारने में मदद मिलती है।
- घर और स्कूल दोनों में ऐसी दिनचर्या रखें जिसके बारे में बच्चे को पहले से पता हो या जो उसके लिए अपेक्षित हो।

लर्निंग एस्पिरेशन की अन्य रणनीतियाँ

जब बच्चा इनमें से किसी भी चुनौती का सामना करता है तो उसे अकसर आलसी और दिलचस्पी न लेने वाला कहा जाता है, भले ही वह बच्चा किसी अन्य क्षेत्र में बहुत अच्छा हो। इसके परिणामस्वरूप उसका आत्मसम्मान कम हो सकता है।

लर्निंग एस्पिरेशन में हम उन रणनीतियों का उपयोग करते हैं जो बच्चों को दिलचस्प काम करने के अवसर दें। यह कोई खेल या नृत्य या थिएटर या कला व क्राफ्ट के रूप में हो सकती हैं जो हमारी शिक्षण की विधियों का हिस्सा हैं। उदाहरण के लिए तितली का जीवन-चक्र क्राफ्ट की गतिविधियों की मदद से सिखाया जाता है। मुगल इतिहास को रंगमंच के माध्यम से पढ़ाया जाता है। हम हिन्दी कहानी सुनाने के लिए कठपुतलियों और व्याकरण पढ़ाने के लिए गीत-संगीत का उपयोग करते हैं। बोर्ड गेम और कार्ड गेम हमारे यहाँ बहुत लोकप्रिय हैं और सफलतापूर्वक उपयोग में लाए जाते हैं। *लर्निंग एस्पिरेशन* में करके सीखना शिक्षण का आधार है।

प्रदर्शन कला और खेलकूद से बच्चे को इस प्रकार के कई फ़ायदे होते हैं। लाभ की यह सूची अन्तहीन हो सकती है। और हमने अपने विद्यार्थियों के शैक्षिक अधिगम के क्षेत्र में चमत्कारी बदलाव देखे हैं।

हमारा मानना है कि एसएलडी वाले बच्चे अपने जीवन को बढ़िया तरीक़े से आगे बढ़ा सकते हैं। उन्हें अपनी चुनौतियों पर विजय पाने के लिए अपनी ताक़त का इस्तेमाल करने के लिए एक उपयुक्त और समृद्ध वातावरण की आवश्यकता होती है।



अर्पिता यादव बहुविकलांगता वाले एक किशोर बच्चे की माँ हैं। उन्होंने दिल्ली में विशेष-शिक्षा का अध्ययन किया और वे सीखने के प्राकृतिक तथा समग्र तरीक़े में विश्वास करती हैं, जहाँ प्रत्येक बच्चा अपनी क्षमताओं और गति के अनुसार सीख सके। वे अधिगम की अक्षमता वाले बच्चों के एक विद्यालय *लर्निंग एस्पिरेशन* में शैक्षिक निदेशक हैं, जिसका उद्देश्य उन विद्यार्थियों को एक समृद्ध वातावरण प्रदान करना है जिन्हें मुख्यधारा की स्कूल प्रणाली कठिन लगती है। उनसे arpita34@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

प्रभावी रणनीतियों के माध्यम से प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा में समावेशन को बढ़ावा देना

अरुणा ज्योति

शिक्षा के क्षेत्र में आज हम पहले की तुलना में बहुत अधिक बदलाव देख रहे हैं। बहुसांस्कृतिक विविधता, विद्यार्थी विविधता, तेज़ी-से होते सामाजिक और तकनीकी परिवर्तन, माता-पिता की उच्च अपेक्षाएँ और आकांक्षाएँ, मानव अधिगम पर नए संज्ञानात्मक शोध आदि के कारण कक्षाओं की प्रकृति कहीं अधिक गतिशील हो रही है। अर्थात 'सार्वजनिक स्कूलों में विद्यार्थियों की अधिक से अधिक विविधता अपवाद के बजाय आदर्श का प्रतिनिधित्व करती है'(गोलनिक और चिन, 2009)।

अपने देश में जाति, वर्ग, पन्थ, धर्म, लिंग, बोली जाने वाली भाषाओं में अन्तर जैसी विविधता को देखते हुए, बहुत कम विद्यार्थी ऐसे हैं जो ठेठ या तथाकथित सामान्य विद्यार्थी के साँचे में फिट होते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों (जैसे कि श्रवण बाधित, दृष्टि बाधित, बौद्धिक अक्षमता, स्वलीनता, स्वास्थ्य बाधित, अधिगम की अक्षमता वाले बच्चे आदि) के अलावा स्कूलों में तेज़ी-से ऐसे बच्चे आ रहे हैं जिन पर विशेष ज़रूरतों के अलावा अन्य कारणों से भी विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पड़ रही है। 'इन सभी विविधताओं को एक साथ देखें तो हम लगभग 20-30 प्रतिशत बच्चों के बारे में निरापद रूप से यह कह सकते हैं कि कक्षा में उनकी कुछ विशेष आवश्यकताएँ या अपेक्षाएँ होंगी'(बार्र और पैरेट, 2001, टॉम ई.सी. स्मिथ, एडवर्ड ए. पोलोवे, जेम्स आर. पैटन, कैरोल ए. डॉडी)।

तो फिर कक्षा में शिक्षक के लिए इसके क्या मायने हैं? शिक्षकों को ऐसे विद्यार्थियों, जिनमें विकलांग बच्चे भी शामिल हैं, की पहचान करने में सक्षम होना चाहिए, उनकी पृष्ठभूमि को समझना चाहिए और उन्हें समायोजित करना चाहिए और इसके बाद इन सभी विद्यार्थियों को जिस तरह की सेवाएँ चाहिए उनका पता लगाना चाहिए। ज़ाहिर है कि यह सब कहना, करने की तुलना में आसान है। बावजूद इसके बहुत-से विकलांग बच्चों के लिए यह सम्भव है कि वे शिक्षा की सामान्य कक्षाओं में नियमित विषय के शिक्षकों से अपनी शिक्षा का कुछ भाग प्राप्त कर सकें। इसका अर्थ यह हुआ कि शिक्षक को तथाकथित सामान्य बच्चों के साथ-साथ विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों को भी तब तक वैसा ही अनुभव प्रदान करना चाहिए जब तक कि उनकी आवश्यकताओं को नियमित कक्षा में पूरा न किया जा सके क्योंकि आवश्यकताएँ बहुत विशिष्ट हैं या विकलांगता गम्भीर है। नियमित कक्षा के बाहर विकलांग बच्चों को पढ़ाने के लिए एक अलग व्यवस्था करने का निर्णय लेने से पहले शिक्षकों को विभिन्न सामग्रियों जैसे दृश्य सहायक सामग्री, पूरक सामग्री आदि का उपयोग करके विभिन्न विकल्पों का पता लगाना चाहिए।

भारत में समावेशी शिक्षा अभी विकासशील अवस्था में है और फिलहाल इसके अच्छे अभ्यासों की पहचान करना आसान नहीं है। अपनी विविधता के बावजूद, भारत को सांस्कृतिक, धार्मिक, लैंगिक और अन्य विभिन्नताओं को स्वीकार करने की दिशा में अभी काफ़ी प्रगति करनी है, विकलांगता का स्वीकरण तो दूर की बात है। जब स्कूलों की बात आती है तो यह बात महत्वपूर्ण हो जाती है कि सभी हितधारक यानी माता-पिता, शिक्षक और बच्चे विभिन्न आवश्यकताओं वाले बच्चों को स्वीकार करने का दृष्टिकोण विकसित करें।

'समावेशन के लिए यह ज़रूरी है कि शिक्षक इसके लिए अपेक्षित कौशल विकसित करें और सामग्री को संशोधित करने के तरीक़े सीखें, खुले दिमाग़ से विभिन्न तरीक़ों को अपनाने की कोशिश करें तथा विषयवस्तु व मूल्यांकन को बच्चों की आवश्यकताओं के अनुरूप संशोधित करें' (टॉम ई.सी. स्मिथ, एडवर्ड ए. पोलोवे, जेम्स आर. पैटन, कैरोल ए. डॉडी)।

अलग-अलग निर्देशों के पालन की सहूलियत अभी हमारे स्कूलों में नहीं है। फ़िलहाल हमारी शिक्षा-प्रणाली इसी बात में विश्वास करती है कि सभी परिस्थितियों में एक ही दृष्टिकोण को उपयुक्त मानकर उसका ही प्रयोग किया जाए। हम यह आशा और प्रार्थना करते हैं कि बेहतरीन दृष्टिकोण अपनाया जाए।

लेकिन इसकी बजाय क्या हम एक शिक्षक के रूप में ख़ुद से यह पूछ सकते हैं कि क्या हम अपनी कक्षाओं में इस तरह की विविधता को अपनाने के लिए तैयार हैं?

तैयार होना

तैयार होने का क्या मतलब है? ऐसी विविधता का सामना करने के लिए शिक्षकों को कैसे तैयार किया जाए?

प्रारम्भिक हस्तक्षेप का महत्त्व प्रारम्भिक बाल्यावस्था की शिक्षा के समान है : पार-गोलार्ध हस्तान्तरण[1] में संवेदी

[1] न्यूरोसाइंस में मस्तिष्क को दो गोलार्धों में बाँटा जाता है – दायाँ गोलार्ध व बायाँ गोलार्ध। दायाँ गोलार्ध शरीर के बाईं ओर के अंगों को नियन्त्रित करता है और बायाँ गोलार्ध शरीर के दाईं ओर के अंगों को। पार-गोलार्ध हस्तान्तरण से आशय है इन दोनों गोलार्धों के बीच हस्तान्तरण। - सम्पादक

प्रसंस्करण और उद्दीपन व अभ्यास सूचना के आदान-प्रदान की गति का ध्यान रखते हैं तथा उसे बनाए रखने में मदद करते हैं। सूचना के आदान-प्रदान की यह गति किसी भी क्रिया के लिए एक महत्वपूर्ण पैरामीटर है। इसलिए गुणवत्तापूर्ण कार्यक्रम के रूप में अर्हता प्राप्त करने के लिए कुछ बुनियादी आयु-उपयुक्त अभ्यासों को अपनाया जाना चाहिए। प्रारम्भिक वर्षों के कार्यक्रमों को विकास के सम्बन्ध में भी उपयुक्त होना चाहिए।

यह कार्यक्रम अन्तःक्रियात्मक-सक्रिय अधिगम (इंटरएक्टिव-एक्टिव लर्निंग) वाले हों : इस योजना को बच्चों की ज़रूरतों को यथासम्भव पूरा करना चाहिए और सामाजिक विकास पर ध्यान देना चाहिए। शिक्षकों को माता-पिता/परिवार के सदस्यों के साथ समन्वय और सहयोग करना चाहिए। इस तरह के अभ्यासों से बच्चों को दूसरी कक्षा तक और शायद पाँचवीं कक्षा तक भी हर तरह से फ़ायदा होगा और स्थिति के अनुसार प्राथमिक स्कूल से आगे भी इसका लाभ मिल सकता है।

कई शिक्षक गतिविधि-आधारित अधिगम का अभ्यास करते हैं, जिसमें बच्चों को खेल, एक्शन गीत और कविताओं के माध्यम से शारीरिक गतियों के बहुत सारे अभ्यास करवाए जाते हैं। यदि शिक्षक विशेष आवश्यकता वाले बच्चों (Children with Special Needs - सीडब्ल्यूएसएन) के साथ कार्य करने के ज्ञान के साथ ही उद्देश्य भी निर्धारित कर लें तो ये गतिविधियाँ सार्थक और उद्देश्यपूर्ण बन सकती हैं। फिर वे बच्चों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ध्यानपूर्वक योजना बनाने और काम करने में सक्षम होंगे।

इस दिशा में आगे बढ़ने के तरीक़ों पर कुछ विचार

यदि शिक्षकों को संवेदी उद्दीपन की आवश्यकता के बारे में पता है, विशेष रूप से स्वलीन और दृश्य बाधित बच्चों के लिए, तो वे प्रघाण उद्दीपन (vestibular stimulation) के लिए गतिविधियों की योजना बना सकते हैं। हमारे शरीर और हमारे पर्यावरण के बारे में जानकारी देने के लिए हमारी सभी इन्द्रियाँ एक साथ काम करती हैं। लेकिन जब कोई चीज़ 'ठीक' (चाहे दृष्टि या श्रवण बाधा या स्नायविक विकारों के कारण) से काम नहीं कर रही हो तो पूरे तंत्र में ख़राबी आ सकती है। इससे पता चलता कि दृष्टि दोष वाले बच्चे बैठे-बैठे अपने शरीर को आगे-पीछे क्यों झुलाते रहना चाहते हैं, जिसे अकसर स्व-उद्दीपन के रूप में सन्दर्भित किया जाता है। हो सकता है कि वे कुछ ऐसी प्रघाण जानकारी भरने की कोशिश कर रहे हों जो उनके दिमाग़ में नहीं है।

नीचे कुछ गतिविधियों के उद्देश्यों का उल्लेख किया गया है जो स्कूल के शिक्षण के दौरान हुए मेरे अनुभवों पर आधारित हैं। शिक्षकों को उन उद्देश्यों और गतिविधियों के बीच जुड़ाव/सह-सम्बन्धों का पता लगाना होगा जिनका आनन्द सभी बच्चे ले सकें और जो उनकी ज़रूरतों को पूरा कर सकें।

1. प्रघाण इनपुट बहुत ही शक्तिशाली होता है और इसके अद्भुत प्रभाव हो सकते हैं। प्रघाण प्रसंस्करण, यक़ीनन किसी भी अन्य संवेदी तंत्र की तुलना में, लगभग हमारे हर कार्य में सदा काम करते हैं और सही ढंग से उपयोग किए जाने पर प्रघाण गतिविधियों में एक बच्चे को शान्त करने और आराम पहुँचाने की क्षमता होती है और साथ ही साथ इससे विकास के कई पहलुओं जैसे समन्वयन, लिखावट, अवधान और यहाँ तक कि पढ़ने में भी सुधार होता है।

उदाहरण

- रो, रो, रो योर बोट जेंटली डाउन द स्ट्रीम, कविता का रोल प्ले करवाएँ। बच्चों से से कहें कि वे एक-दूसरे का हाथ पकड़ कर इस तरह से आगे और पीछे की ओर ले जाएँ जैसे कि वे नाव खे रहे हों- ऐसा वे बैठकर, खड़े होकर, तेज़-तेज़, धीमे या पीठ के बल लेटे हुए भी कर सकते हैं। उनसे कहें कि वे अपने घुटनों को मोड़कर उन्हें पकड़ें तथा दाएँ-बाएँ व आगे-पीछे की ओर झूलें।
- ट्रम्पोलिन, स्प्रिंग बोर्ड, जम्पिंग जैक : आज कौन जम्पिंग जैक बनना चाहता है? (बच्चों को गिरने से बचाने के लिए आप आसपास ही रहें।)
- दाएँ से बाएँ ओर झूलना : बच्चों को एक-दूसरे का हाथ पकड़कर रॉक-अ-बाय-बेबी कविता पर दाएँ से बाएँ झूलने को कहें।
- हवाई जहाज़ : उन्हें अपने हाथों को फैलाकर हवाई जहाज़ की तरह आवाज़ निकालते हुए दौड़ने को कहें। उन्हें अपने चेहरे पर हवा महसूस करने के लिए कहें।
- गर्दन और पीठ के लिए हलकी लचीली गतिविधियाँ करवाएँ ।

(ऊपर दी हुई लोकप्रिय कविताओं के स्थान पर अन्य कविताएँ भी ली जा सकती हैं।)

2. चलन या गति से सम्बन्धित अभ्यासों पर विचार करें। शिक्षक बच्चों को ऐसी गतिविधियाँ देते हैं, जिनमें बच्चों को बहुत अधिक चलना-फिरना होता है (गतिसंवेदी) जो कि उनके लिए आवश्यक है। लेकिन क्या कुछ गतिविधियाँ ऐसी हो सकती हैं जो सन्तुलन के संवेदन को बेहतर बनाएँ? जैसे कि आँखें बन्द होने पर भी यह बता सकना कि हाथ ऊपर उठाया जा रहा है या पीछे की ओर -यह स्वान्तरग्रहण (proprioception) का एक उदाहरण है, जो पर्यावरण के सम्बन्ध में अपने शरीर के अभिविन्यास (orientation) को महसूस करने की क्षमता है। यह मस्तिष्क के लिए बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह आत्म-नियमन, समन्वयन, अंग-विन्यास, शरीर सम्बन्धी

जागरूकता, उपस्थित होने और ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता और बोलने में एक बड़ी भूमिका निभाता है। ऐसे उदाहरणों या स्थितियों को याद करने की कोशिश करें जब आपको रोज़ाना या हर पल ध्यान देने की ज़रूरत नहीं पड़ती, जैसे सीढ़ियों पर चढ़ते समय या रास्ते में किसी चीज़ से बचने के लिए आदि। यदि सन्तुलन का संवेदन बिगड़ा हुआ हो तो व्यक्ति अव्यवस्थित और असमन्वित हो सकता है।

सन्तुलन में सुधार के लिए कुछ गतिविधियाँ

- बच्चों को एक पैर पर खड़ा करें (लगता है कि कई लोग ऐसा कर सकते हैं)।
- आँखें बन्द करके भी ऐसा ही करें (इसे वयस्क भी आज़मा सकते हैं)। हमें लगता है कि हममें एकाग्रता की कमी है और हम सन्तुलन खो देते हैं। इसलिए कई लोग एकाग्रता में सुधार के लिए भी ऐसा करने का सुझाव देते हैं।
- आँखें बन्द करके/आँखों पर पट्टी बाँधकर पीछे की ओर चलें।

संज्ञानात्मक क्षमता, दृश्य बोध, श्रवण कौशल विकसित करना

बोर्ड पर अलग-अलग रंगों के नाम अलग-अलग रंगों में लिखें, जैसे लाल को नीले से, नीले को पीले से आदि। बच्चों को रंग की पहचान करनी है न कि शब्द की।

कुछ लोगों को लग सकता है कि ये अभ्यास बच्चों को भ्रमित कर सकते हैं, लेकिन यहाँ बात उनके पठन का आकलन करने की नहीं है, बल्कि पार-गोलार्ध तारों को विकसित करने और तादात्म्य या तुल्यकालन (synchronisation) के अभ्यास की है- जैसे कि पियानो बजाने के लिए दोनों हाथों का उपयोग करना। मुद्दा यह है बच्चों को तरह-तरह के उद्दीपन प्रदान किए जाएँ। आगे चलकर बच्चे को विकसित दृष्टि बोध से बहुत फ़ायदा होगा क्योंकि तब वह नोट्स ले पाएगा और साधारणतया अध्ययन सम्बन्धी सामग्री को बेहतर ढंग से समझेगा।

साइमन सेज़ या साइमन कहता है- कक्षा में खेला जा सकने वाला एक ऐसा प्रभावी खेल है जिसे बच्चे बहुत चाहते हैं। यह खेल सुनने के कौशल के साथ-साथ ध्यान केन्द्रित करने में भी सुधार करता है। शिक्षक बच्चों को निर्देश देते रहते हैं और वे तदनुसार आवश्यक क्रियाएँ करते हैं। उदाहरण के लिए :

साइमन कहता है, अपनी नाक को छुओ।

साइमन कहता है, अपने पैर छुओ।

साइमन कहता है, अपना अँगूठा पकड़ो आदि।

जब 'साइमन कहता है' के बिना निर्देश दिया जाए तो बच्चों को निर्देश का पालन नहीं करना है और क्रिया नहीं करनी है। बच्चे ऐसे खेलों को बहुत पसन्द करते हैं (मुझे यकीन है कि इस खेल के अन्य प्रकार भी होंगे)।

अन्य गतिविधियाँ

लाइन बनाने का अभ्यास करें। बच्चों को रेत में बड़े-बड़े गोले बनाने के लिए कहें। क्रेयॉन का उपयोग करने से पहले आटे, हवा या फिंगर पेंट का उपयोग करें।

दो अलग-अलग थैलों में मिलती-जुलती बुनावट वाले कपड़े रखें। बच्चों से कहें कि वे एक थैले से एक बुनावट वाले कपड़े का चयन करें और दूसरे थैले में से वैसे ही कपड़े का मिलान करें।

बच्चों से इस प्रकार की विभिन्न गतिविधियाँ करने को कहें, जैसे बड़े क़दम उठाना, छोटे क़दम उठाना, बड़ी कूद लगाना, छोटी कूद लगाना, एक लाइन पर चलना, लँगड़ी टाँग खेलना, पंजों के बल चलना, फेंकना, पकड़ना, गेंद को किक मारना, टायर को घुमाते हुए चलाना आदि।

स्व-सहायता कौशल विकसित करने के लिए गतिविधियाँ

ऊपर वर्णित बातों के अलावा सीडब्ल्यूएसएन के लिए स्व-सहायता कौशल विकसित करना बहुत महत्त्वपूर्ण है, हालाँकि यह अन्य बच्चों के लिए भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक बच्चों को सरल कार्य करने के लिए दे सकते हैं, जैसे :

- अपनी-अपनी चीज़ें पैक करना
- नैपकिन या रुमाल का उपयोग करके, शारीरिक रूप से स्वच्छ रहना
- आवश्यकता पड़ने पर गुसलखाने का उपयोग करने के बारे में जानना
- अवकाश के दौरान अन्य बच्चों को फल, जूस इत्यादि परोसने जैसे सरल कार्य करना।

इस तरह के कार्यों का उद्देश्य बच्चों को आत्मनिर्भर होने, दूसरों की मदद करना सीखने और अपनी ज़रूरतों को पहचानने में मदद करना है। इस प्रकार भविष्य में वे स्वतंत्र जीवन और स्व-सहायता के मार्ग पर चल पाएँगे।

अवधान (attention) में सुधार, सीखी गई चीज़ों को याद रखने तथा आँख और हाथ के बीच समन्वय के लिए गतिविधियाँ

यहाँ कुछ गतिविधियाँ दी गई हैं जो बच्चों को इन कठिनाइयों में मदद कर सकती हैं। इनमें से कुछ गतिविधियाँ एक से अधिक उद्देश्यों की पूर्ति कर सकती हैं। (यहाँ पर इस बात को दोहराना ठीक होगा कि शिक्षकों को पता होना चाहिए कि बच्चों को

इस तरह की गतिविधियाँ क्यों दी जाएँ, सिर्फ़ इसलिए नहीं कि 'छोटी कक्षाओं में ऐसे ही पढ़ाया जाना चाहिए या क्योंकि गतिविधि-आधारित अधिगम में ऐसा ही बताया गया है')।

अवधान में सुधार के लिए

- सुई में धागा डालें (सिलाई किट में प्लास्टिक की सुइयाँ उपलब्ध होती हैं)।
- जेंगा खेल की तरह स्ट्रॉ (तरल पदार्थ पीने वाली नली) को बॉक्स में से बाहर निकालें। सारी स्ट्रॉ को एक बॉक्स में लम्बवत रूप में डालकर उन्हें एक-एक करके इस तरह से निकालें कि दूसरी स्ट्रॉ न हिलें (जो भी सबसे ज़्यादा स्ट्रा निकालता है, वह जीत जाता है और खुश होता है)।
- एक विशिष्ट अक्षर के साथ शुरू होने वाले शब्द सुनने पर ही हाथ उठाएँ।
- शिक्षक लगातार रंग कार्ड दिखाएँ और बच्चे दिखाए गए रंगों पर ध्यानपूर्वक नज़र रखें और बताएँ कि उन्होंने कितने विशिष्ट रंगों को देखा, उदाहरण के लिए लाल।

आँख और हाथ के बीच समन्वय, मांसपेशियों के विकास में सुधार के लिए

- सिलाई - कपड़े पर या चार्ट पेपर पर क्रॉस-स्टिच करें।
- मोतियों, बीजों की छँटाई, उन्हें रंग, आकार आदि के अनुसार वर्गीकृत करें।
- बिन्दीदार रेखाओं या किसी चित्र पर ट्रेस करें।
- बिन्दीदार रेखाओं पर, मुड़ी हुई रेखाओं पर या चित्र के ख़ाके को काटें।

सुनने के कौशल में सुधार के लिए

- ताली की ताल/लय को सुनें और दोहराएँ।
- 'करड़ी टेल्स' सीरीज़ (यदि अभी भी उपलब्ध हो तो यह एक अच्छा स्रोत है) देखें। वर्तमान में लोग बुकबॉक्स वीडियो का उपयोग करते हैं।
- ध्वनि/आवाज़ को सुनें और उस दिशा की ओर इंगित करें जहाँ से वह आई थी।
- आँखें बन्द करके चारों ओर की ध्वनियों (या उत्पन्न ध्वनि) को सुनें और उन्हें पहचानें।

याददाश्त बढ़ाने के लिए

बच्चों से कहें कि वे चित्र-कार्डों को एक अनुक्रम में इस तरह से व्यवस्थित करें कि एक कहानी बन जाए।

किसी कहानी को अपने स्वयं के शब्दों में लेकिन सही अनुक्रम में सुनाने को कहें।

सहपाठियों के नाम बताने को कहें।

कुछ वस्तुओं को बेतरतीब ढंग से एक ट्रे में रखें, बच्चों से एक मिनट के लिए उन्हें देखने को कहें, फिर जितना सम्भव हो उतनी वस्तुओं के नाम अपनी याददाश्त से बताने को कहें।

फिगर ग्राउंड पर्सेप्शन (पृष्ठभूमि से किसी आकृति की पहचान करना)

बच्चों को बड़ी तस्वीर में छोटी तस्वीरें खोजनी चाहिए जैसे कि सामने के पृष्ठ पर दिए गए चित्र में से। इससे उन्हें एक घनी पृष्ठभूमि में से जानकारी के एक विशिष्ट टुकड़े पर ध्यान केन्द्रित करने में मदद मिलेगी। इसी तरह ऑडियो फिगर ग्राउंड संवेदन से बच्चे को शोर भरे वातावरण से आ रही किसी एक ध्वनि या आवाज़ पर ध्यान देने में मदद मिलती है। इस तरह के अभ्यासों से बच्चे को किसी बड़ी व्यवस्था से विशिष्ट चीज़ों का पता लगाने में मदद मिलेगी। पुस्तक, श्यामपट्ट, शब्दकोश, किसी पृष्ठ/पंक्ति में ट्रैक रीडिंग आदि से जानकारी प्राप्त करने के लिए यह अच्छा अभ्यास है।

इस तरह की गतिविधियों की सूची अन्तहीन है। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इनका उद्देश्य होना चाहिए, सिर्फ़ सूची पर्याप्त नहीं है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि शिक्षक पाठ्यक्रम/कोर्स द्वारा संचालित होते हैं जिसे उन्हें पूरा करना होता है, लेकिन गुणवत्तापूर्ण शिक्षण की अलग पहचान जिस बात से होती है वह है रणनीति। बच्चों से कैसे सम्पर्क किया जाता है, उन्हें पढ़ाई जाने वाली सामग्री क्या है, बच्चों की आवश्यकताओं के अनुरूप अधिगम को लचीला कैसे बनाया जाए, इन सभी बातों से पता चलता है कि शिक्षक चाहते हैं कि बच्चे सीखें और इसके लिए वे थोड़ा अतिरिक्त काम करने के लिए तैयार हैं।

खेल

खेल एक अन्य क्षेत्र है जो शिक्षक को बच्चों को देखने और समझने के बहुत सारे अवसर प्रदान करता है। खेल बच्चों के सम्प्रेषण का सहज माध्यम है। 'बच्चों के लिए अपने अनुभव और भावनाओं को "खेल कर व्यक्त करना" सबसे स्वाभाविक, गतिशील और स्व-उपचार की प्रक्रिया है।' जब कोई बच्चा खेल रहा होता है तो वह शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक रूप से उसमें शामिल होता है। यही कारण है कि खेलने का स्थान, जहाँ तक सम्भव हो वास्तविक जीवन की जगह जैसा होना चाहिए और उन्हें हर समय निर्देशित नहीं करना चाहिए। उन्हें विभिन्न प्रकार की सामग्री या किट देना महत्वपूर्ण है ताकि वे अपने आसपास जो कुछ देखते या सीखते हैं, उन्हें इन सामग्रियों की सहायता से खेल सकें- जैसे कि रसोई सेट, डॉक्टर सेट, बढ़ईगिरी, नलसाज़ी, शिक्षक सेट



आदि। 'खेलना बच्चे के लिए वही है, जो वयस्कों के लिए शाब्दिक अभिव्यक्ति है।'

विविधता अपनाने में बच्चों की मदद करें

ध्यान देने वाली बात यह है कि ये सभी गतिविधियाँ कक्षा के सभी बच्चों के लिए समावेशी अभ्यास के रूप में आयोजित की जानी हैं क्योंकि ये सीडब्ल्यूएसएन के लिए अच्छी तरह काम करती हैं। इस तरह के अभ्यास बच्चों को एक-दूसरे को स्वीकार करने, विविधता को गले लगाने और उन्हें एक-दूसरे के प्रति संवेदनशील बनाने में मदद करेंगे।

जहाँ कहीं भी सम्भव हो वहाँ शिक्षकों को विशेष शिक्षकों के साथ मिलकर काम करना चाहिए। जिन स्कूलों में ऐसे विशेषज्ञ नहीं हैं, वे स्कूल :

- शिक्षण-अधिगम सामग्री बना सकते हैं
- बच्चे के अनुकूल पाठ्यक्रम डिज़ाइन कर सकते हैं
- शिक्षण के तरीक़ों की योजना बना सकते हैं
- आकलन को संशोधित कर सकते हैं

शिक्षकों को माता-पिता और समुदाय को उन्मुख करने, परामर्श देने और मतभेदों को स्वीकार करने के लिए बच्चों को संवेदनशील बनाने के कौशलों से लैस होना चाहिए। सामान्य विषय के शिक्षक प्रशिक्षित होते हैं, किन्तु इसके बावजूद भी दृष्टिकोण या कार्यक्रम को मज़बूत करने के लिए एक मज़बूत समर्थन प्रणाली की आवश्यकता होती है। शिक्षकों को भी चाहिए कि वे, बच्चे जो कुछ जानते हैं, उसे मान्यता देने, सराहने, स्वीकारने और पुरस्कृत करने के प्रति संवेदनशील बनें और बच्चा जहाँ है, अधिगम के जिस स्तर पर है, वहाँ से शुरू करें।

'बच्चों के अधिगम का सुगमीकरण सबसे प्रभावी ढंग से तब होता है जब शिक्षण-अभ्यास, पाठ्यक्रम और अधिगम के वातावरण की कमी पर केन्द्रित होने की बजाय क्षमता पर आधारित होते हैं और प्रत्येक बच्चे के लिए विकासात्मक, सांस्कृतिक और भाषाई रूप से उपयुक्त होते हैं।' अगर हम इस कथन पर ध्यान दें तो हम देख सकते हैं कि किसी भी उम्र के विद्यार्थी के लिए विकास की दृष्टि से उपयुक्त स्थिति का निर्माण करना कितना महत्वपूर्ण है।

पहले की तुलना में अब थोड़ी अधिक जागरूकता के साथ स्कूलों और शिक्षकों को एहसास हो रहा है कि सभी बच्चों को समावेशन का अधिकार है और इसलिए वे दैनिक जीवन की

गतिविधियों में सभी को शामिल करने के तरीक़े खोज रहे हैं। हालाँकि गतिविधियों को खोजने और ऐसे अवसर पैदा करने की चुनौती अभी भी मौजूद है जो सभी बच्चों को उपलब्ध हों और सीडब्ल्यूएसएन के लिए किन्हीं विशेष गतिविधियों को डिज़ाइन न करती हों, ख़ासकर शुरुआती वर्षों में।

'इससे पहले कि बच्चे किसी बात को समझ सकें, उन्हें उसका अनुभव करने की ज़रूरत है... वास्तविक चीजों के साथ प्रयोग करने की ज़रूरत है।'

'उन सामग्रियों को प्राप्त करने में उनकी मदद करें जिनकी उन्हें ज़रूरत है और उनके कार्य का मार्गदर्शन करें लेकिन उन्हें बहुत ज़्यादा न बताएँ...'

'बाद में, स्कूल में बच्चों के पास सिद्धान्त व व्याख्याएँ होंगी ही।' (परिचय, समझ के लिए तैयारी, यूनिसेफ)

संक्षेप में

कक्षा में सभी बच्चों के लिए गतिविधियों की योजना बनानी चाहिए। बच्चों को सीखने, गायन, नृत्य, संगीत, खेल आदि के लिए आयु-उपयुक्त कक्षाओं का हिस्सा होना चाहिए। यद्यपि गतिविधि की योजना बनाने का एक उद्देश्य होना चाहिए लेकिन उसका लक्ष्य भाग लेने वाले बच्चों का आकलन करना नहीं होना चाहिए। इसके पीछे विचार यही है कि बच्चों को भरपूर अवसर दिए जाएँ और उन्हें सीखने दिया जाए। एक संवेदनशील प्रेक्षक को पता चल जाएगा कि बच्चे आवश्यकताओं को पूरा कर रहे हैं या नहीं, और साथ ही यह भी पता चल जाएगा कि हर बच्चे की ज़रूरतें पूरी हो रही हैं या नहीं।

हमें पता होना चाहिए कि सबसे महत्वपूर्ण कौशल या क्षमता कौन-सी है जिसका विकास बच्चे में करना है, विशेष रूप से विकलांग बच्चों के मामले में। उदाहरण के लिए यदि उन्हें सामाजिक कौशल प्रदान करना है तो स्व-सहायता प्राथमिकता है। अतः कृपया यहीं से शुरू करें और इसके माध्यम से अकादमिक अधिगम होने दें। शिक्षा का उद्देश्य बच्चों को आत्मनिर्भर बनाना होना चाहिए। बच्चों को विभिन्न माध्यमों से मुख्य धारा में लाया जा सकता है, ना कि केवल अकादमिक या विषय को सीखने के माध्यम से। केवल तभी हर बच्चे की ज़रूरतों को पूरा करने का दावा किया जा सकता है। इंडिविज़ुअलाइज़्ड एजुकेशन प्रोग्राम (आईईपी) का कोई सन्दर्भ नहीं दिया गया है क्योंकि सारी बात तो सभी के समावेशन की है।

मुझे यकीन है कि यहाँ उल्लिखित खेलों के कई आधुनिक संस्करण अब उपलब्ध हैं। यहाँ उल्लिखित सामग्री व्यक्तिगत अनुभव से सम्बन्धित हैं जिनका उपयोग किया गया था।

References

Judith L. Evans, *Inclusive ECCD: A Fair Start for All Children.* Lead article in the *Coordinators' Notebook,* Issue # 22. 1998.

National Conference, "Every child's Right to Early Childhood Development: Evolving Inclusive Practices." 23-24 November 2018.

Play Therapy, The Art of the Relationship, Garry L. Landreth, Children communicate through play, pg.9).

Portage guide to early interventions/stimulation, David E. Shearer, Chair, The international Portage Association Civitan International Research Centre, University of Alabama at Birmingham, USA.

Preparation for Understanding, helping children to discover order around them – UNICEF.

Play Therapy, The Art of the Relationship, Garry L. Landreth.

Teaching Students with Special Needs in Inclusive Settings, Sixth edition, Tom E C Smith, Edward A. Polloway, James R. Patton, Carol A. Dowdy



अरुणा ज्योति अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में प्राध्यापक हैं। उन्हें स्कूल अध्यापिका के रूप में कई वर्षों का अनुभव है। परामर्श और विशेष आवश्यकताओं के विभाग के प्रमुख के रूप में उन्होंने धीमी गति से सीखने वाले शिक्षार्थियों के लिए एक गतिविधि केन्द्र स्थापित किया है। अरुणा वीएचएस अस्पताल, चेन्नई और एसएनईएचए (धीमी गति से सीखने वाले शिक्षार्थियों के लिए एक केन्द्र) में स्वयंसेवक रही हैं। अरुणा अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन स्कूलों की उस टीम में भी रही हैं, जिसने आरम्भ के छह अज़ीम प्रेमजी स्कूल स्थापित किए थे। उन्होंने इन स्कूलों में शिक्षक व्यावसायिक विकास, पाठ्यक्रम विकास, सीसीई, ईसीई, विशेष शिक्षा और किशोरावस्था से सम्बन्धित क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर काम किया है। उनसे aruna.v@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

विकलांग बच्चों में यौन भावना और यौन स्वास्थ्य शिक्षा

डॉ. गिफ्टी जोएल

मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन का एक मुख्य पहलू यौन भावना या यौनिकता है जिसमें विभिन्न शारीरिक, संज्ञानात्मक, भावनात्मक और सामाजिक पहलू सम्मिलित होते हैं। विकलांग बच्चे भी यौन प्राणी हैं। जैसे-जैसे वे बड़े होते हैं, वे यौन विकास और परिवर्तनों का अनुभव करते हैं और अपने ग़ैर-विकलांग साथियों की तरह उनकी भी यौन भावनाएँ, इच्छाएँ और आवश्यकताएँ होती हैं। दुर्भाग्य की बात है कि उनकी यौन भावनाओं को अकसर स्वीकार या सम्बोधित नहीं किया जाता जिसके कारण कई विकलांग बच्चे घर या स्कूल में यौन स्वास्थ्य शिक्षा प्राप्त नहीं करते। एक स्वस्थ यौन पहचान विकसित करने के लिए जो ज्ञान या जानकारी अपेक्षित है, वह उनमें नहीं होती, अतः नकारात्मक यौन परिणामों का अनुभव करने की सम्भावना बढ़ जाती है। शोध लगातार यही बताते हैं कि विकलांगजनों को यौन उत्पीड़न, शोषण, अवांछित गर्भधारण और यौन संचारित रोगों का अधिक ख़तरा होता है।

एक शोधकर्ता के रूप में मैंने विशेष आवश्यकताओं वाले कई बच्चों के माता-पिता और शिक्षकों के साथ यौन स्वास्थ्य शिक्षा के क्षेत्र में काम किया है, विशेषकर स्वलीन बच्चों के साथ। हालाँकि यह काफ़ी चुनौतीपूर्ण रहा है, लेकिन साथ ही यह एक ऐसे विषय को सम्बोधित करने की दृष्टि से बहुत अच्छा रहा है जिसे अभी भी कई प्रकार से वर्जित माना जाता है।

यौन भावना

यौन भावना में व्यक्ति के अस्तित्व के लगभग सभी पहलू आ जाते हैं, जैसे उसकी प्रवृत्ति, मूल्य, भावनाएँ या अनुभव। इसमें केवल यौन विकास के शारीरिक पहलू या सेक्स के भौतिक पहलू ही नहीं आते, बल्कि इसमें मुख्य बात तो यह है कि व्यक्ति यौनिक रूप से कैसा अनुभव करता है और ख़ुद को कैसे व्यक्त करता है। यह बात व्यक्ति के चयन में नज़र आती है जैसे कि वे क्या पहनना पसन्द करते हैं, दूसरों के साथ कैसे बातचीत करते हैं, किस तरह की गतिविधियों में भाग लेना पसन्द करते हैं, किसके प्रति आकर्षित होते हैं और अपना स्नेह और घनिष्ठता कैसे प्रदर्शित करते हैं। जन्म से लेकर वयस्कता तक यौन भावना मानव अनुभव का एक मुख्य हिस्सा है। यह उसके पालन-पोषण, अनुभवों, मूल्यों, आध्यात्मिकता और संस्कृति से प्रभावित होती है।

सामान्य बच्चों में यौन भावना

विकलांग बच्चों में यौन भावना को समझने के लिए यह आवश्यक है कि सामान्य बच्चों में यौन भावना को समझा जाए। जीवन के प्रारम्भिक वर्षों के दौरान बच्चे के भीतर यौन भावनाओं के लिए सूक्ष्म तरीक़ों से भावनात्मक और शारीरिक आधार विकसित होने लगता है और ऐसा दैनिक जीवन की गतिविधियों के माध्यम से होता है, जैसे जब उसे दूध पिलाते हैं, गोद में लेते हैं, गले से लगाकर प्यार करते हैं, नहलाते हैं या उसके कपड़े बदलते हैं। जब वे ख़ुद को छूते हैं या ख़ुद को दर्पण में देखते हैं तो वे अपने शरीर के बारे में जान पाते हैं। तीन साल की उम्र तक अधिकांश बच्चे लैंगिकता के बारे में जागरूकता विकसित कर लेते हैं। वे ख़ुद को और दूसरों को पुरुष या महिला के रूप में पहचान सकते हैं और कुछ व्यवहारों के बारे में इस तरह का सम्बन्ध जोड़ सकते हैं कि यह व्यवहार पुरुष वाला अधिक या महिला वाला अधिक है, और इस तरह से वे लैंगिकता से जुड़ी हुई भूमिकाओं को समझ सकते हैं।

पूर्वस्कूली वर्षों के दौरान बच्चे अपने आस-पास की हर चीज़ के बारे में बहुत उत्सुक होते हैं। वे बेशुमार सवाल पूछते हैं और ऐसे सवालों के सरल जवाब पा सकते हैं, जैसे 'बच्चे कहाँ से आते हैं?' या 'लड़कियाँ लड़कों से अलग क्यों हैं?' 'लड़कियों के पास शिश्न क्यों नहीं हैं?' इसके अतिरिक्त अपने साथियों के साथ सामाजिक सम्पर्क और *डॉक्टर-डॉक्टर* या *मम्मी-डैडी* जैसे खेल खेलने से उन्हें यौन भावना की बेहतर समझ मिलती है। शिशु काल के बाद वाली अवस्था में बच्चे सेक्स से सम्बन्धित मामलों में कम रुचि रखते हैं और अपने ही लिंग के साथियों के साथ खेलना पसन्द करते हैं। भले ही इस अवधि को अकसर बच्चों के यौन विकास में अप्रकट अवधि के रूप में जाना जाता है, लेकिन वे अभ्रद भाषा तथा गन्दे चुटकुलों के सम्पर्क में आते हैं और उन्हें अपने साथियों या भाई-बहनों से सेक्स के बारे में कुछ जानकारी मिल जाती है।

बचपन समाप्त होते-होते अधिकांश बच्चों में तरुणायी (puberty) के स्पष्ट संकेत विकसित होने लगते हैं, जैसे कि गुप्तांगों पर बालों का बढ़ना; लम्बाई, वज़न और शरीर की संरचना में परिवर्तन, चेहरे पर मुँहासे व बालों का दिखाई देना आदि। इसके बाद लड़कियों में मासिक धर्म और लड़कों में स्वप्नदोष होने लगता है। अधिकांश युवा किशोरों के लिए

यह बहुत ही भ्रमकारी और अशान्त समय होता है, क्योंकि वे अपने शरीर में होने वाले परिवर्तनों के साथ-साथ अपने मूड में भी बदलाव का अनुभव करते हैं। वे बड़ी सक्रियता के साथ ऐसे विभिन्न स्रोतों से सेक्स के बारे में अधिक जानने का प्रयास करने लगते हैं जिनके साथ वे सहजता का अनुभव करते हैं, जैसे कि दोस्त, पुस्तकें और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया। किशोरावस्था के इन विकासों के दौरान वे अपनी पहचान बनाना चाहते हैं और अपने माता-पिता से दूरी बना लेते हैं। वे अपने साथियों के साथ अधिक समय बिताते हैं और अकसर विपरीत लिंग वालों के प्रति आकर्षित होते हैं। वे एकान्तता चाहते हैं और ख़ुद को सजाने-संवारने में बहुत समय लगाते हैं। हार्मोनल परिवर्तन और द्वितीयक यौन विशेषताओं के विकास के कारण वे तीव्र यौन इच्छा और उत्तेजना का अनुभव करते हैं। अपने विकसित होते शरीर की खोज करते समय उन्हें अपने जननांगों की स्व-उत्तेजना बहुत ही सुखद और सन्तोषदायी लग सकती है। कुछ लोग अपने साथी के साथ यौन सम्बन्धों का अनुभव करने के लिए प्रेमिका या प्रेमी की तलाश कर सकते हैं।

विकलांग बच्चों में यौन भावना

यौन परिपक्वता

विकलांग बच्चे यौन विकास के शारीरिक पहलुओं से उसी तरह गुज़रते हैं जैसे कि उनके ग़ैर-विकलांग साथी। जैसे-जैसे वे यौन परिपक्वता प्राप्त करते हैं, उनके शरीर बढ़ते और बदलते हैं। कुछ विकलांग बच्चों में, अपने विकसित हो रहे अन्य सामान्य साथियों की तुलना में तरुणायी पहले शुरू होती है और उनके बाद समाप्त होती है। जैसा कि अन्य विकासात्मक पहलुओं के साथ भी होता है, उन्हें इस बात में भी अपने साथियों से थोड़ा अधिक समय लग सकता है। उनके लिए भी तरुणायी, अगर अधिक नहीं तो, उतनी ही भ्रमकारी है जितनी बाक़ी के लिए है।

माता-पिता लड़कियों में मासिक धर्म के बारे में चिन्ता करते हैं और अकसर इसे अपने और अपने बच्चे दोनों के लिए बोझ समझते हैं। लेकिन शोध से पता चलता है कि विकलांग लड़कियाँ मासिक धर्म को बहुत ही व्यावहारिक तरीक़े से स्वीकार लेती हैं। हो सकता है कि उन्हें अपनी व्यक्तिगत स्वच्छता और स्वयं की देखभाल के प्रबन्धन में अतिरिक्त मदद की आवश्यकता पड़े। अपने शरीर में बदलाव के साथ उन्हें सहज महसूस कराने का उपाय यही है कि उन्हें सही शिक्षा प्रदान की जाए, व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाए, कौशल निर्माण के विभिन्न अवसर दिए जाएँ, अपनी देखभाल करने की स्वतंत्रता दी जाए और उसे बढ़ावा देने के लिए उसका सुदृढ़ीकरण किया जाए।

यौन भावना और सामाजिक विकास

सामाजिक विकास काफ़ी हद तक अनुभवात्मक है और विकलांग बच्चों पर इसका बहुत असर पड़ता है। उनकी अपनी सीमाएँ हैं और इसलिए हो सकता है कि उनके पास अपने सामान्य विकासशील साथियों की तुलना में सामाजिक सम्पर्क के बहुत कम अवसर हों। इससे शायद उन्हें अधिगम के उतने महत्वपूर्ण अनुभव न मिल पाएँ जिनका अनुभव सभी बच्चों को करना चाहिए। हो सकता है कि यौन भावना की अभिव्यक्ति को नियंत्रित करने वाले सूक्ष्म सामाजिक नियमों के बारे में उन्होंने अपने परिवेश से कोई संकेत न लिया हो और चूँकि वे अपने साथियों और दोस्तों से सेक्स तथा यौन भावना के बारे में नहीं जान पाते, इसलिए वे इस बारे में कम जानते हों। इन सबका परिणाम यह होता है कि वे अकसर कुछ अजीब-से लगते हैं।

यही नहीं, उनके आस-पास के अन्य लोग उनकी यौन भावना की अभिव्यक्ति को अनुचित और समस्यात्मक मानते हैं क्योंकि सामाजिक निर्णय लेने में उनके द्वारा की गई त्रुटियाँ उनकी इस आकलन क्षमता में दख़लअन्दाज़ी कर सकती हैं कि उन्हें कौन-से व्यवहार सार्वजनिक स्थानों पर करने चाहिए और कौन-से निजी स्थानों पर। इसलिए स्वस्थ तरीक़े से अपनी यौन भावनाओं को व्यक्त करने के साथ जो खुशी और तृप्ति की भावना पैदा होती है, विकलांग बच्चों और युवाओं को अकसर उन्हीं बातों के लिए बुरा-भला कहा जाता है और उन्हें उनके अनुचित सामाजिक-यौन व्यवहार को लेकर शर्मिन्दा महसूस कराया जाता है।

यौन व्यवहार

जब विकलांग किशोर या किशोरी हार्मोनल परिवर्तन और यौन भावनाओं को महसूस करना या उस पर प्रतिक्रिया करना शुरू करते हैं तो माता-पिता और पेशेवर लोग अकसर उनके नए व्यवहार से परेशान, भ्रमित और यहाँ तक कि अपमानित भी होने लगते हैं। हस्तमैथुन एक सामान्य व्यवहार है जिसके माध्यम से अधिकांश किशोर अपनी स्वयं की यौन कार्य पद्धतियों के बारे में सीखते हैं और जिसमें अधिकांश ग़ैर-विकलांग बच्चे बचपन से किशोरावस्था तक अलग-अलग परिमाण में संलग्न होते हैं। लेकिन इस पर किसी का ध्यान नहीं जाता क्योंकि वे अच्छी तरह से जानते हैं कि इन सब बातों को दूसरों से कैसे छिपाना चाहिए। वे आस-पास के वयस्कों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर जल्दी ही यह बात सीख जाते हैं कि कौन-से व्यवहार स्वीकार्य हैं और समय के साथ-साथ यौन व्यवहार का प्रकटन अधिक गुप्त हो जाता है। लेकिन विकलांग बच्चों को यह सिखाना पड़ता है कि सार्वजनिक रूप से उन्हें क्या करना चाहिए और क्या नहीं। यह भी एक कारण है कि हम विकलांगों में यौन व्यवहार अधिक देखते हैं।

एकान्तता

देखरेख करने वाले कभी-कभी अति-सुरक्षात्मक हो जाते हैं और इसलिए हो सकता है कि वे उन विकलांग बच्चों को शैशवता की स्थिति में ले आएँ जिन्हें लम्बे समय तक अपनी देखभाल सम्बन्धी गतिविधियों के लिए सहायता की आवश्यकता होती है, जैसे कि शौचालय जाना, स्नान करना और कपड़े पहनना। बच्चों की फ़िक्र करने के कारण वे हमेशा बच्चे के आसपास रहते हैं, उसकी गतिविधियों की देखरेख करते हैं जिसके परिणामस्वरूप बच्चे को कभी भी व्यक्तिगत समय या एकान्त नहीं मिलता है। सेरेब्रल पॉल्ज़ी वाले एक लड़के को बोलने से सम्बन्धित समस्याएँ भी हैं; उसने मुझे एक बार मैसेज भेजा कि वह अपनी माँ से तंग आ चुका है क्योंकि वह हमेशा उसके साथ ही बनी रहती हैं। उसे अपने लिए समय सिर्फ़ तब मिलता था जब उसकी माँ बाथरूम जाती थीं क्योंकि जब वह शौचालय जाता था तो वहाँ पर भी उसकी सहायता करने के लिए माँ मौजूद रहती थीं।

> माता-पिता को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे अपने बड़े होते बच्चों को प्रतिदिन थोड़ी एकान्तता दें क्योंकि यह विकासात्मक आवश्यकता है, विशेष रूप से किशोरावस्था के दौरान। नियमित रूप से एकान्तता प्रदान करने से उन्हें निरापद वातावरण में अपनी यौन भावना का पता लगाने और सार्वजनिक रूप से अनुचित व्यवहार को कम करने में मदद मिलेगी। यदि माता-पिता बच्चे को अलग कमरा नहीं दे सकते तो बिस्तर के चारों ओर पर्दा लगाकर उसे अलग किया जा सकता है। माता-पिता के लिए यह बात महत्त्वपूर्ण है कि वे विकलांग बच्चों की आवश्यकताओं के प्रति सहज प्रतिक्रिया दिखाने के उपाय करें ताकि वे भविष्य में अधिक परिपक्वता और आत्मनिर्भरता प्राप्त कर सकें।

दैनिक जीवन में यौन अभिव्यक्ति

छोटे बच्चे तक अपनी बात को दृढ़ता से कहते हैं और अपने दैनिक जीवन में छोटे-छोटे निर्णय लेते हैं, जैसे कि वे क्या पहनना चाहते हैं या अपने बालों को कैसे संवारना चाहते हैं। विकलांग बच्चों को अकसर ऐसी ही मिलती-जुलती स्थितियों में ख़ुद चयन करने की स्वतंत्रता से वंचित कर दिया जाता है क्योंकि उनकी देखरेख करने वाले ही यह सब कर देते हैं। किशोरावस्था में भी अधिकतर विकलांग लड़कियों के बाल छोटे ही रखे जाते हैं, क्योंकि इससे उनकी देखरेख करने वालों को सुविधा होती है। इसके लिए इस तरह के कारण दिए जाते हैं जैसे कि छोटे बालों की देखभाल करना आसान है या क्योंकि यह उन्हें कम आकर्षक बनाएगा। उन्हें लगता है कि इस तरह के उपाय से उनके बच्चों पर किसी का अवांछित ध्यान नहीं जाएगा और वे सम्भावित अनुचित व्यवहार से बच जाएँगे। विकलांग बच्चों को अकसर सादे कपड़े पहनाए जाते हैं क्योंकि उनकी देखरेख करने वाले मानकर चलते हैं कि इस तरह की चीज़ें उनके लिए कोई मायने नहीं रखतीं।

लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि विकलांगता की उपस्थिति अपने आप में एक स्वस्थ यौन पहचान, विश्वास, इच्छा, कार्य और यहाँ तक कि भविष्य में, यदि वे चाहें तो, अपने लिए एक साथी खोजने की उनकी क्षमता के विकास को भी प्रभावित करती है। विकलांग बच्चों और किशोरों को यथासम्भव उन चीज़ों के बारे में निर्णय लेना सिखाना चाहिए जो उनसे सम्बन्धित हैं। माता-पिता, देखरेख करने वालों और पेशेवरों को विकलांग बच्चों के अधिकारों को सशक्त बनाने की दिशा में काम करना चाहिए, न कि उसे घटाने में।

यौन उत्पीड़न

कई अध्ययनों में बताया गया है कि सामान्य बच्चों की तुलना में विकलांग बच्चों के यौन उत्पीड़न की सम्भावना दोगुनी है। इसे निम्नलिखित कुछ कारणों से समझाया जा सकता है।

- हर रोज़ अपनी अन्तरंग देखभाल के लिए दूसरों पर निर्भर रहने के कारण वे अपने स्वयं के शरीर पर स्वामित्व की भावना खो बैठते हैं। देखरेख करने वाले नियमित रूप से उनकी अनुमति के बिना या उन्हें कोई नियंत्रण दिए बिना बहुत अन्तरंग तरीक़े से उन्हें छूने के लिए ख़ुद को स्वतंत्र महसूस करते हैं और अकसर उनके शील और गरिमा की भावनाओं के बारे में नहीं सोचते हैं। दुर्भाग्यवश, इससे बच्चों के लिए दुर्व्यवहार को पहचानना मुश्किल हो जाता है जब कोई उनका फ़ायदा उठा रहा होता है।
- ये बच्चे कई परिस्थितियों में कई देखरेख कर्ताओं के सम्पर्क में आते हैं, जिसका अर्थ है कि कई लोग कई कारणों से उन्हें अलग-अलग तरीक़ों से छूते हैं।
- उनके अपर्याप्त सामाजिक कौशल और कमज़ोर निर्णय उन्हें कभी-कभी ऐसी स्थितियों में ले जा सकते हैं जहाँ उनका शोषण होता है। माता-पिता और देखरेख करने वाले यौन उत्पीड़न की आशंकाओं के कारण इन बच्चों को असुरक्षित सामाजिक सम्पर्कों से बचाते हैं, जिससे अनजाने में ही ये बच्चे सामाजिक कौशल और उचित व्यक्तिगत सीमाओं को विकसित करने के महत्वपूर्ण अवसरों से वंचित हो जाते हैं।
- अपनी विकलांगता की वजह से वे मदद लेने या उत्पीड़न की रिपोर्ट करने में असमर्थ हो सकते हैं। अकसर बच्चे उत्पीड़न की रिपोर्ट सिर्फ़ इसलिए नहीं

करते क्योंकि वे यह नहीं जानते कि उन्हें क्या कहना है।

- उनके पास उत्पीड़न के ख़िलाफ़ ख़ुद की रक्षा करने के लिए रणनीतियों की कमी है।
- विकलांग बच्चों को बहुत कम उम्र से अनुपालन करना सिखाया जाता है। उनसे जो कुछ करने के लिए कहा जाता है, वे वैसा ही करने के आदी हो जाते हैं और उन्हें कभी ना कहना नहीं सिखाया जाता।

इन कारणों से कुछ ऐसी ख़ास बातें सामने आती हैं, जिन्हें देखरेख करने वालों को अपने बच्चों के लाभ के लिए सीखना चाहिए। साथ ही कुछ बातें ऐसी भी हैं जिन्हें भुला देना ज़रूरी है। अपनी विकलांगता की श्रेणी के आधार पर बच्चे दृढ़ता के साथ अपने स्वयं के शरीर की गोपनीयता की रक्षा करना सीख सकते हैं और अगर इसका उल्लंघन हो तो उसे पहचानकर विश्वसनीय वयस्कों से इसकी शिकायत कर सकते हैं। ये सब वे तभी सीख सकते हैं जब उन्हें ये बातें साभिप्राय सिखाई जाएँ। *बाल अधिकारों* के बारे में संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन में कहा गया है कि *सभी बच्चे* अभिगम्य और उचित शिक्षा, मार्गदर्शन, समर्थन और खेलने के अवसरों के हक़दार हैं। उन्हें अधिकार है कि उनकी बात सुनी जाए, उन्हें सम्मान मिले और उन्हें शोषण तथा उत्पीड़न से सुरक्षा मिले।

यौन स्वास्थ्य शिक्षा

विकलांग बच्चों के जीवन में महत्त्वपूर्ण हितधारक माता-पिता और शिक्षक हैं। माता-पिता अपने बच्चे को यौन भावना के बारे में पढ़ाने के लिए बेहतर स्थिति में होते हैं, लेकिन वे अकसर बच्चे की विकलांगता के अन्य पहलुओं से इतने परेशान हो गए होते हैं कि उनमें अपने बच्चे को उचित रूप से यौन स्वास्थ्य शिक्षा देने के लिए ज्ञान और कौशल की कमी हो सकती है। उन्हें अपने बच्चे के साथ यौन भावना पर बातचीत करने में अटपटा-सा लग सकता है। इसलिए वे अकसर शिक्षकों से मदद की अपेक्षा करते हैं। इसलिए शिक्षकों और स्कूलों को यौन स्वास्थ्य शिक्षा देने के लिए भली प्रकार से लैस होना चाहिए। *स्वास्थ्य एवं कल्याण के लिए शिक्षा पर यूनेस्को की रणनीति* में निर्दिष्ट किया गया है कि अच्छी गुणवत्ता वाली स्कूल-आधारित व्यापक यौन शिक्षा आवश्यक है क्योंकि यह सही ज्ञान को बढ़ाती है, सकारात्मक दृष्टिकोण और मूल्यों को बढ़ावा देती है और सोच-समझकर चयन करने के कौशल विकसित करती है। व्यापक यौन-शिक्षा की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि, 'यह वैज्ञानिक रूप से सटीक, यथार्थवादी, अनिर्णायक रूप से जानकारी प्रदान करके सेक्स और सम्बन्धों के बारे में पढ़ाने का एक आयु-उपयुक्त एवं सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक दृष्टिकोण है।'

यौन स्वास्थ्य शिक्षा देने के लिए शिक्षकों को अपने सुविधा क्षेत्र से बाहर निकलना होगा और यौन सम्बन्धों पर खुली और विस्तृत चर्चा करने में किसी भी तरह की बाधा या परेशानी को दूर करने के लिए तैयार रहना होगा। यौन अंगों, गर्भावस्था या प्रसव के बारे में बताने के लिए उन्हें जीव विज्ञान की पाठ्यपुस्तक प्रदान करना आसान हो सकता है, लेकिन दुर्भाग्य से विकलांगजन इसे समझ नहीं पाते। यौन भावना के बारे में उन्हें भी वैसी ही शिक्षा की आवश्यकता होगी जैसी उनके साथियों को दी जाती है, लेकिन इस जानकारी को संशोधित करके इस तरह से प्रस्तुत करना चाहिए कि वे अपनी सीमाओं के बावजूद इसका लाभ उठा सकें। विकलांग बच्चों के लिए एक उपयुक्त यौन स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम में इन विषयों को शामिल करना चाहिए : शरीर के अंग, युवावस्था सम्बन्धी परिवर्तन, व्यक्तिगत देखभाल और स्वच्छता, चिकित्सकीय जाँच, सामाजिक कौशल, यौन अभिव्यक्ति, उत्पीड़न की रोकथाम के कौशल और यौन व्यवहार के अधिकार और ज़िम्मेदारियाँ।

जैसे नियमित कक्षा-शिक्षण को विकलांग बच्चों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुरूप संशोधित किया जाता है, वैसे ही नियमित यौन स्वास्थ्य शिक्षा पाठ्यक्रम को भी विकलांग बच्चों के लिए संशोधित किया जा सकता है। ऐसा करने के लिए विशेष शिक्षण-सामग्री जैसे चित्र, कठपुतलियाँ, कहानियाँ, शारीरिक रूप से ठीक (दोष-रहित) गुड्डे-गुड़ियों का उपयोग किया जा सकता है और साथ ही जो पढ़ाया गया है उसका लगातार पुनरावलोकन करना और जानकारी को सरल बनाना भी लाभदायक होगा। जब शिक्षक व्यक्तिगत शिक्षा योजनाएँ (आईईपीएस) बनाएँ तो वे उसमें विकलांग बच्चों के लिए आयु तथा आवश्यकता के उपयुक्त यौन शिक्षा भी सम्मिलित कर सकते हैं। यौन स्वास्थ्य शिक्षा को शिक्षार्थियों के लिए और अधिक सार्थक बनाने के लिए एक बुनियादी सलाह यह है कि इसे जल्दी शुरू करना चाहिए। बच्चों को शरीर के सभी अंगों के नाम सिखाए जाने चाहिए, उन अंगों के भी जिन्हें हम अकसर छोड़ देना चाहते हैं, जैसे कि शिश्न, स्तन इत्यादि। शरीर के अंगों के नाम जानना यौन भावना के बारे में और अधिक जानने के लिए महत्त्वपूर्ण है।

इसके अतिरिक्त हमारे समाज में यौन स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करने के दृष्टिकोण को प्रतिक्रियाशील होने की बजाय अग्रसक्रिय होना चाहिए। अधिकांश माता-पिता और शिक्षक यौन स्वास्थ्य को केवल तभी सम्बोधित करते हैं जब बच्चे का व्यवहार समस्याग्रस्त हो जाता है या जब बच्चा कुछ अनुचित करता है। माता-पिता और शिक्षक लड़कियों से यौन स्वास्थ्य के बारे में अधिक बात करते हैं क्योंकि मासिक धर्म बच्चे के जीवन में एक अधिक स्पष्ट घटना है।

दूसरी ओर लड़कों को यौन स्वास्थ्य के बारे में अकसर नहीं सिखाया जाता है : उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे इसके बारे में विभिन्न स्रोतों से ख़ुद पता लगाएँ। विकलांग जन-समुदाय में, स्वास्थ्य में सुधार लाने और युवाओं को सशक्त बनाने के लिए यौन स्वास्थ्य पर सोच-विचार के साथ सक्रिय रूप से अनुदेशन प्रदान करना चाहिए। यह नहीं होना चाहिए कि जब कुछ ग़लत हो जाए तो उसे ठीक करने के उपाय के रूप में इसका प्रयोग किया जाए।

निष्कर्ष

जब बात यौन भावनाओं की हो तो विकलांग बच्चे ग़ैर-विकलांग बच्चों से अलग नहीं हैं। बस अपने जीवन के इस जटिल पहलू से निपटने के लिए उन्हें अतिरिक्त सहायता, समर्थन और शिक्षा की आवश्यकता है। विकलांग होने का मतलब यह नहीं है कि बच्चों और किशोरों को अपनी यौन भावना को व्यक्त करने, अपने साथ गरिमापूर्ण व्यवहार करवाने या उचित यौन स्वास्थ्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार ही न दिया जाए। माता-पिता, देखरेख करने वालों और शिक्षकों को विकलांगों के यौन स्वास्थ्य से सम्बन्धित मामलों में अपनी जागरूकता बढ़ानी चाहिए। हमें उनकी समग्र भलाई को बढ़ावा देने के लिए मिलकर काम करना चाहिए। मेरा मानना है कि शिक्षक इन बच्चों के जीवन में बदलाव ला सकते हैं। मैं पेशेवरों और परिवार के सदस्यों को इस बात के लिए दृढ़ता से प्रोत्साहित करती हूँ कि वे इस विषय पर अधिक जानकारी हासिल करें और अपने ज्ञान को दूसरों के साथ साझा करने के लिए समय निकालें।

References

Anna C. Treacy, Shanon S. Taylor, Tammy V. Abernathy. (2018) Sexual Health Education for Individuals with Disabilities: A Call to Action. American Journal of Sexuality Education 13:1, pages 65-93.

Lansdown, G. (2000). Implementing Children's Rights and Health. *Archives of disease in childhood*, 83(4), 286-288.

Moss, K., & Blaha, R. (2001). Introduction to Sexuality Education for Individuals Who Are Deaf-Blind and Significantly Developmentally Delayed.

Murphy, N., & Young, P. C. (2005). Sexuality in children and adolescents with disabilities. *Developmental medicine and child neurology*, 47(9), 640-644.

UNESCO (2016) UNESCO Strategy on Education for Health and Well-being: Contributing to the Sustainable Development Goals.



डॉ. गिफ्टी जोएल ने मानव विकास के क्षेत्र में बेंगलूरु विश्वविद्यालय से पीएचडी की है। उन्होंने स्वलीन बच्चों के माता-पिता और शिक्षकों के लिए 'गाइडबुक ऑन सेक्सुअल हेल्थ फॉर पेरेंट्स एण्ड टीचर्स ऑफ चिल्ड्रन विथ ऑटिस्म' शीर्षक पुस्तक का सह-लेखन किया है जो amazon.in पर उपलब्ध है। उन्होंने कई विशेष स्कूलों में यौन स्वास्थ्य शिक्षा पर कार्यशालाएँ आयोजित की हैं। उनसे giftyjewel@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

सम्पूर्ण स्वीकरण

कमला मुकुन्दा

यह लेख शुरू करने से पहले मैं एक ऐसा तथ्य सबके सामने रखना चाहती हूँ जो हम सबके बारे में सत्य है : हमें सदा इस बात की चिन्ता लगी रहती है कि दूसरे लोग हमें *स्वीकार* करते हैं, या नहीं। वास्तव में *स्वीकार* शब्द थोड़ा कमज़ोर है— असल में हम प्यार, अतीव प्रेम और प्रशंसा चाहते हैं... और इस सतत एवं प्रबल चाह को अत्यन्त गहरा आघात तब लगता है जब हमें सन्देह होता है या महसूस होता है कि हमारे साथी हमें उस रूप में स्वीकार नहीं करते, जैसे हम हैं, यानी हमारी कमियों आदि के साथ।

उसी तरह बच्चों की आन्तरिक ज़िन्दगी को भी काफ़ी कम उम्र से ही इस बात की ज़रूरत होती है कि उन्हें बिना किसी शर्त के स्वीकारा जाए। इस चीज़ को वे सबसे अधिक अपने साथियों से चाहते हैं, लेकिन इसके बावजूद यही साथी ऐसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाने के बहुत इच्छुक होते हैं जो समावेशी भी होते हैं और साथ ही साथ अलगाव वाले भी। इसके परिणामस्वरूप *हम-और-वे* जैसे समूह बन जाते हैं। इन रेखाओं और विभाजनों में काफ़ी बदलाव होता है जिससे बच्चों को जब-तब ऐसा महसूस होता है कि उन्हें अलग कर दिया गया है। वैसे देखा जाए तो एक तरह से यह अच्छा है, यद्यपि इससे उनमें असुरक्षा की भावना भी पैदा होती है। तथापि इसमें अपवाद वह बच्चा होता है जो कक्षा में *अलग* दिखाई देता है और बहिष्कार का अधिक स्थायी लक्ष्य बन सकता है।

कक्षा में कौन *अलग* है?

ऐसा कोई भी बच्चा अलग हो सकता है जो कुछ विशेष मानकों, कुछ अपरिभाषित संस्कृति और कुछ अनकहे मानदण्डों के अनुरूप नहीं है। ऐसा बच्चा भी अलग हो सकता है जिसका पठन या अंकगणितीय कौशल कक्षा के स्तर से काफ़ी कम है, या जिस बच्चे को कक्षा के भीतर और बाहर अपने अवधान और व्यवहार को लेकर कठिनाई होती है। यह ऐसा बच्चा भी हो सकता है जिसे किसी भी प्रकार की शारीरिक कठिनाई है, या फिर जो *स्टिमिंग* (एक दोहराव भरा व्यवहार जिसे ऑटिज़्म स्पेक्ट्रम से प्रभावित बच्चे कभी-कभी अपनी स्थिति के प्रबन्धन-तन्त्र के रूप में दर्शाते हैं) में संलग्न हो। कारण जो भी हो, इन स्थितियों में बच्चे दुगुना कष्ट सहते हैं। एक तो वे एक प्राथमिक कठिनाई से जूझ रहे होते हैं और इस बात के प्रति सचेत होते हैं कि अन्य बच्चों को चीज़ें कितनी आसान लगती हैं। और दूसरा अपने साथियों से स्वीकृति और स्नेह पाने के बजाय उन्हें अस्वीकृति, उपहास और अलगाव का सामना करना पड़ता है। इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि ये स्थूल हैं या सूक्ष्म हैं- तक़लीफ़ उतनी ही होती है जब उन्हें किसी विशेष नाम से पुकारा जाता है या दबी ज़बान में की गई बातों से उन्हें बहिष्कृत किया जाता है।

माना कि बच्चे इस तरह की प्रतिक्रियाओं पर बहस करने के लिए बहुत छोटे हैं, पर मेरे और मेरे सहयोगियों के लिए यह देखना दिलचस्पी का विषय है कि किस तरह की स्कूली संस्कृति सभी बच्चों के लिए सम्पूर्ण स्वीकरण का कारण बन सकती है, भले ही बच्चे को किसी भी तरह की कठिनाइयाँ क्यों न हों। हम एक ऐसे मॉडल से दूर जाना चाहते हैं जिसमें तथाकथित *सामान्य* विद्यार्थियों को उन लोगों को स्वीकार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जो *अलग* हैं। सम्पूर्ण स्वीकरण एक बहुत अलग चीज़ हो सकती है और इस तरह की संस्कृति सभी मानव अनुभव की अनिवार्य *सादृश्यताओं* पर ज़ोर देती है, यह दर्शाती है कि प्रश्न सम्मान को अर्जित करने या उसके योग्य होने का नहीं है और यह इस गहन धारणा पर भी सवाल उठाती है कि हम में से प्रत्येक व्यक्ति अपनी आदतों, यादों और प्रवृत्तियों से कुछ अधिक है।

सादृश्यताएँ

मनोवैज्ञानिक शोध से पता चला है कि शिशुओं में भी उन लोगों को पसन्द करने की प्रवृत्ति होती है जो किसी न किसी तरह से उनके जैसे होते हैं। शोधकर्ता बताते हैं कि एक छोटे बच्चे के साथ दो कठपुतलियाँ रखी गईं जो उसके पसन्दीदा खाद्य पदार्थ को या तो पसन्द करती हैं, या नापसन्द। बच्चा उस कठपुतली के साथ खेलना पसन्द करता है जिसे उसकी पसन्द के खाद्य पदार्थ अच्छे लगते हैं; यही नहीं वह दूसरी कठपुतली को किसी न किसी तरह की सज़ा दिए जाने के पक्ष में भी रहता है![1] कई शिशुओं के साथ किए गए इस तरह के अध्ययनों ने यह स्थापित किया है कि हम इस तीव्र इच्छा के साथ पैदा हुए हैं कि सारहीन आधारों पर *हम-और-वे* जैसे विभाजन करें। इस शोध से पता चलता है कि जब कोई *भिन्नताओं* की बजाय *सादृश्यताओं* पर ज़ोर देता है तो बच्चों के लिए एक-दूसरे के साथ समानुभूति, स्नेह और भाईचारा महसूस करना आसान होता है।

हमारी सादृश्यताएँ सबसे अधिक स्पष्ट रूप से कहाँ नज़र आती हैं? उन सभी क्षेत्रों में जहाँ अधिकांश स्कूली शिक्षा को ध्यानपूर्वक उनसे बचने के लिए डिज़ाइन किया गया है! सामाजिक सम्पर्क और भावनात्मक अभिव्यक्ति प्रत्येक स्कूल के वातावरण में मौजूद हैं, लेकिन वयस्क शायद ही कभी इन्हें शिक्षा का केन्द्र मानते हैं। क्या हो अगर सामाजिक सम्पर्क और भावनात्मक अभिव्यक्ति शिक्षा के *केन्द्र* में हों? तब बच्चों के सामने जल्द ही यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि हर किसी का अपना मूड होता है, उनके पेचीदा रिश्ते, उनकी चुनौतियाँ व सीमाएँ, खेल और मूर्खतापूर्ण चुटकुलों के लिए उनका प्यार आदि होता है।

ऐसा नहीं है कि जिस बच्चे को अधिगम सम्बन्धी कठिनाई हो, उसी को सहानुभूति और मदद की आवश्यकता होती है। इसकी ज़रूरत तो हम *सभी* को कभी न कभी पड़ती ही है। वास्तव में हमारी भावनाएँ हम सभी को, फिर चाहे वे वयस्क हों या बच्चे, आपस में जोड़ती हैं क्योंकि हम सभी के जीवन में उतार-चढ़ाव आते हैं; हम सभी की अपनी-अपनी कठिनाइयाँ हैं। और फिर जब कोई स्कूल अकादमिक विषयों से कहीं बढ़कर होता है, तो वहाँ पर ऐसे बच्चे को अलग करने का कोई कारण नहीं होता जिसे विशेष रूप से शिक्षक के आमने-सामने बैठकर पढ़ने की आवश्यकता होती है। कोई दूसरा बच्चा खेल के मैदान में शिक्षक का ध्यान चाहता है तो किसी और को कुम्हारी की कक्षा में अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता होती है या फिर किसी को अपने दोपहर का भोजन ख़त्म करने में मदद की आवश्यकता होती है! इस तरह यह सादृश्यता अपने आप ही स्पष्ट हो जाती है और हमें इस घिसी-पिटी अभिव्यक्ति की ज़रूरत नहीं पड़ती कि 'हम सभी की अपनी ताक़त और कमज़ोरियाँ हैं।'

सम्मान और स्नेह

सौ साल पहले, लेखक मैक्स एहरमन ने डेसिडेरटा लिखी थी जो एक सुन्दर गद्य कविता है, जिसकी एक पंक्ति हमेशा के लिए मेरे दिल में घर कर गई है : *तुम ब्रह्माण्ड के एक शिशु हो, जो पेड़ों और सितारों से कम नहीं है; तुम्हें यहाँ रहने का अधिकार है।* इस सरल कथन में कुछ तो ऐसा है जिसने एक शिक्षक के रूप में मेरी काफ़ी मदद की है। भारतीय समाज पर उत्कृष्ट होने का विचार इस क़दर हावी है और हम सम्मान और प्रशंसा के हाथों इस तरह से बिक गए हैं कि इन्हें कुछ प्रदर्शनकारी तरीक़े से अर्जित करना या इसके योग्य होना चाहते हैं।

इसके विपरीत मैं स्कूल की आदर्श संस्कृति का एक चित्र प्रस्तुत करना चाहती हूँ, जिसमें वयस्क अपने आप ही सभी बच्चों को सम्मान और स्नेह देते हों, भले ही वे किसी भी तरह से अलग या भिन्न हों। मैं प्रशंसा या सराहना की बात नहीं कर रही। *सम्मान* यानी बच्चे की बात को गम्भीरता के साथ सुनना, बच्चे को अपने से कम बुद्धिमान या कम महत्वपूर्ण न समझना आदि। किन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि वयस्क बच्चों से माँग नहीं कर सकते या उनके व्यवहार को चुनौती नहीं दे सकते। क्या ऐसे स्कूल में बच्चे बिना किसी सुविचारित अनुदेशन के संस्कृति को अपना लेंगे? शायद नहीं, लेकिन इससे स्वीकरण का व्यापक वातावरण बनाने में मदद मिलेगी।

यह सब कितना सुखद लगता है! मैं अपने अनुभव से कह सकती हूँ कि यद्यपि स्कूल में वयस्कों के मध्य इस तरह की संस्कृति बनाना सम्भव है, लेकिन बच्चे हमेशा अनुकरण नहीं करते हैं। कभी-कभी अपने किसी साथी को नीचा दिखाकर श्रेष्ठ महसूस करने का मोह बहुत मज़बूत होता है और यह व्यवहार दोहराया जाता है- वही निशाना, वही अपराधी। फिर भी वयस्कों का यह मज़बूत और नियमित सन्देश बड़े महत्त्व का है कि हर कोई 'ब्रह्माण्ड का शिशु' है, जिसे एक-दूसरे द्वारा स्वीकार किए जाने के लिए किसी समर्थन या कारण की आवश्यकता नहीं है। ऐसे वातावरण में, अधिगम में कठिनाई महसूस करने वाला बच्चा अपने शिक्षकों के प्यार और सम्मान में सुरक्षित महसूस कर सकता है। हालाँकि बच्चा तब भी साथियों के साथ तुलना के कारण ख़ुद को अधूरा महसूस कर सकता है।

तो फिर इसका समाधान क्या है? तुलना करने की हानिकारक प्रकृति के बारे में विद्यार्थियों और शिक्षकों के साथ हमारी बातचीत नियमित रूप से होती रहती है, जिसमें हम इस बारे में भी चर्चा करते हैं कि हम तब किस तरह प्रभावित होते हैं जब हम ख़ुद की तुलना दूसरों के साथ करते हैं और ख़ुद को हीन या बेहतर महसूस करते हैं। यद्यपि हम जानते हैं कि तुलना निरर्थक है फिर भी हम समय-समय पर ऐसा करते रहते हैं। लेकिन जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं, उन पर इस संस्कृति का प्रभाव निश्चित रूप से पड़ता है। मेरा मानना है कि वे असलियत में यह नहीं सोचते हैं कि किसी व्यक्ति का मूल्य उस कार्य से मापा जाता है जिसे वे कर सकते हैं, या नहीं कर सकते। एक-दूसरे के साथ उनके रिश्ते स्नेहपूर्ण और जटिल हैं और उनकी योग्यता या अक्षमता का सम्बन्धों के बारे में उनकी भावना से कोई लेना-देना नहीं है।

स्वयं की कहानियाँ बुनना

यह काफ़ी लुभावना होगा कि *सम्पूर्ण स्वीकरण* के साथ *आप जो हैं* का स्वीकरण भी जोड़ दिया जाए। अर्थात हम एक व्यक्तिगत प्रकार के स्वीकरण के लिए भी तरसते हैं, जैसे कि वे कहानियाँ जो बताएँ कि हम कौन हैं, हमारी विशेष पसन्द और नापसन्द क्या है : संक्षेप में, हमारे अपने बारे में सब कुछ। लेकिन मुझे लगता है कि मैं जब तक 'मैं यह हूँ'-वाली तस्वीर

से बँधी रहूँगी तब तक मुझे चोट पहुँचाना आसान रहेगा। हाँ, हो सकता है कि कोई बच्चा 'मैं लिखने में बुरा हूँ' वाली तस्वीर को 'मैं फ़ुटबॉल में अच्छा हूँ' वाली तस्वीर से बदलना चाहे। लेकिन आत्मवर्णन की कोई भी तस्वीर पुआल के उस पुतले जैसी महत्वहीन है जिसे आसानी से गिराया जा सकता है। हम अपने स्कूल में एक प्रयास यह करते हैं कि ख़ुद का वर्णन करने की इसी आवश्यकता पर ध्यान दें, हम कौन हैं और क्या बनना चाहते हैं, इसके बारे में बताएँ। इन कहानियों को बुनने से स्व की एक ऐसी भावना पैदा होती है जिसे अपमानित होने से बचाना चाहिए और प्रशंसा के ज़रिए इसका समर्थन करना चाहिए। माना कि ये भ्रामक चलन है, लेकिन यह हमारी आदत भी तो है कि हम हमेशा जीवन के प्रति ऐसी ही प्रतिक्रिया दिखाते हैं।

हर कोई यह कहता है कि अधिगम की कठिनाइयों वाले बच्चे जिस सबसे बड़ी मनोवैज्ञानिक चुनौती का सामना करते हैं वह है आत्मसम्मान की कमी। जो दुनिया उच्च आत्मसम्मान को महत्व देती है, केवल वही 'निम्न आत्मसम्मान' की समस्या खड़ी करेगी। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अधिगम की कठिनाई होना आज के शैक्षिक परिदृश्य में एक चुनौती है लेकिन इसे *समस्या* बनाने की आवश्यकता नहीं है। अब इस चुनौती में एक ऐसा व्यक्तित्व जोड़ दें जो मनोवैज्ञानिक आघात के प्रति अतिसंवेदनशील हो। ऐसा करके आप समस्या पैदा कर देते हैं : आप एक ऐसी स्थिति में फँस जाते हैं जहाँ आप सांत्वना देने लगते हैं, झूठी प्रशंसा करने लगते हैं या कुछ ऐसा खोजने लगते हैं जो बच्चे को भावनात्मक रूप से सहारा दे। मुझे याद है कि हमारे एक विद्यार्थी ने स्नातक होने के कई वर्षों बाद यह बात साझा की थी कि जब उसके पढ़ने की प्रशंसा की जाती थी तो वह बहुत असहज महसूस करता था, क्योंकि उसे पता था कि वह कठिनाई के साथ पढ़ता था, अच्छी तरह से नहीं। उसे महसूस होता था कि उसे संरक्षण दिया जा रहा है, ऐसा उसने हमें बताया। वह कौन-सी तीव्र इच्छा थी, वह कौन-सी ऐसी ज़रूरत थी कि हमने उसकी प्रशंसा की? शायद स्व की एक मज़बूत भावना को बढ़ावा देने की ज़रूरत? जब इस व्यक्तिपन को स्थापित करने की आवश्यकता नहीं होती है तो हर कोई अधिक निश्चिन्त रहता है।

इस विषय पर बहुत-से शोध हो रहे हैं कि हम उन बच्चों के सीखने का समर्थन कैसे कर सकते हैं जिन्हें विभिन्न प्रकार की कठिनाइयाँ हैं। उम्मीद है कि अगले एक दशक में इसका परिणाम हमारी कक्षाओं में देखने को मिलेगा। मनोवैज्ञानिक पक्ष को सम्बोधित करना उतना ही महत्वपूर्ण होगा जितना कि सभी के मन में उठने वाली अलग होने या भिन्नता की भावनाओं को। हालाँकि परामर्श और थैरेपी हर बच्चे के अधूरेपन की भावनाओं को सम्बोधित कर सकते हैं, लेकिन मुझे लगता है कि इसके प्रभाव कुछ सीमित हैं। क्यों न मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य को कक्षा या विद्यालय में समग्र रूप से निहित चीज़ के रूप में देखा जाए? यदि लचीलापन किसी एक व्यक्ति का गुण बनने की बजाय वातावरण और समुदाय का गुण बने तो यह अधिक समग्रतात्मक, अधिक सहानुभूतिशील होगा। व्यक्तिगत परामर्श और थैरपी कितनी भी करवाई जाए, उससे किसी स्कूल की संस्कृति में बदलाव नहीं लाया जा सकता और मेरा मानना है कि हमें यहीं पर अपनी शक्ति लगानी चाहिए। मुझे उम्मीद है कि इस लेख में मैंने जिन विचारों को रेखांकित किया है, वे सम्पूर्ण स्वीकरण वाली स्कूली संस्कृति बनाने की शिक्षकों की यात्रा में उनकी मदद करेंगे।

[1] For more such fascinating studies, see https://www.youtube.com/watch?v=FRvVFW85IcU



कमला मुकुन्दा को शिक्षण-कार्य बहुत पसन्द है। वे 1995 से सेंटर फॉर लर्निंग में कार्यरत हैं। उन्होंने दो पुस्तकें लिखी हैं- व्हाट डिड यू आस्क एट स्कूल टुडे, पुस्तक 1 और 2 (हार्पर कॉलिन्स), जो अधिगम और विकास के मनोविज्ञान के बारे में हैं। उनकी यह पुस्तक हिन्दी में 'स्कूल में आज तुमने क्या पूछा ? ' नाम से उपलब्ध है। इसे एकलव्य ने प्रकाशित किया है। उनसे kamala.mukunda@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

वह बीमार नहीं है
ऑटिज़्म वाले बेटे का पालन

गोदावरी वर्मा

गौरव का जन्म 29 सितम्बर, 2010 को भोपाल के एक अस्पताल में हुआ था। वह ऑपरेशन से पैदा हुआ था। जन्म के समय गौरव का वज़न लगभग एक किलो आठ सौ ग्राम था। अतः उसको अस्पताल में एक सप्ताह तक इन्क्यूबेटर मशीन में रखा गया था। उसे जन्म के समय से ही पीलिया था। सुबह की धूप दिखाने पर भी पीलिया ठीक नहीं हुआ, तो हमने उसे डॉक्टर को दिखाया। उसे अस्पताल में भर्ती किया गया एवं उसके कई प्रकार के टैस्ट कराए गए परन्तु उसे पीलिया क्यों है, यह डॉक्टर को भी पता नहीं चल रहा था। अन्त में डॉक्टर द्वारा कैंसर अस्पताल में हीडा स्कैन टैस्ट[i] कराया गया। तब जाकर पता चला कि गौरव को बाइलरी एट्रेसिया[ii] नामक बीमारी है, जो कि लाखों में से किसी एक बच्चे को होती है।

डॉक्टर ने हमें बताया कि गौरव का ऑपरेशन करना पड़ेगा, वो भी गौरव के जन्म की तारीख़ से साठ दिन के अन्दर। उसका ऑपरेशन किया गया और डॉक्टर ने हमें बताया कि ऑपरेशन सफल रहा। गौरव की बीमारी धीरे-धीरे ठीक होने लगी। वह लगभग चार माह तक अस्पताल में भर्ती रहा। गौरव की दवाइयाँ लगभग आठ माह तक चलती रहीं एवं उसकी बाइलरी एट्रेसिया नामक बीमारी पूरी तरह से ठीक हो गई।

समय धीरे-धीरे निकलने लगा। गौरव लगभग दो वर्ष का हो गया परन्तु वह कुछ भी बोलता नहीं था। गौरव कुछ बोलने की कोशिश भी नहीं करता था। वह घर में तो सबके पास जाता था परन्तु घर के बाहर किसी के भी पास नहीं जाता था। गौरव ट्रेन, ऑटो आदि हर तरह की मशीन की आवाज़ से डरता था। खिलौनों से भी कम ही खेलता था। उसे गोल-गोल चीज़ें बहुत ही पसन्द थीं एवं वह अपने हाथ भी गोल-गोल घुमाता रहता था। परन्तु गौरव ऐसा क्यों करता है, यह हमें समझ में नहीं आ रहा था। इसी प्रकार समय निकलता रहा। गौरव लगभग तीन वर्ष का हो गया। हमने सोचा कि गौरव को स्कूल में डालेंगे तो वह अन्य बच्चों के साथ रहेगा एवं बोलने लगेगा। हमने गौरव का एडमिशन एक प्राइवेट स्कूल में करवा दिया। गौरव तीन महीने तक स्कूल गया, फिर भी उसमें किसी भी तरह का परिवर्तन नहीं आया।

उसके बाद हमने गौरव को समर्पण संस्था में दिखाया तब हमें उसकी ऑटिज़्म बीमारी का पता चला। ऑटिज़्म क्या होता है, यह हमें पता ही नहीं था। समर्पण में हमें बताया गया कि आरुषि संस्था में थेरेपी, स्पेशल एजुकेशन व अन्य तरीक़ों के माध्यम से ऐसे बच्चों को प्रशिक्षित किया जाता है।

हम गौरव को आरुषि ले गए। तब तक वह लगभग 4 साल का हो गया था। आरुषि में जाने से उसमें धीरे-धीरे परिवर्तन आने लगा। स्पीच थेरेपी की मदद से वह थोड़ा-थोड़ा बोलने लगा। पहले वह कुछ भी समझ नहीं पाता था, परन्तु अब वह काफ़ी कुछ समझने लगा है। गौरव को स्कूल में क्या परेशानियाँ आती हैं, वह यह सब बता नहीं पाता था। वह आरुषि व स्कूल दोनों जगह जाता रहा। धीरे-धीरे वह हिन्दी-अँग्रेज़ी, लिखना व पढ़ना सीख गया।

आरुषि में उन्होंने हमें सलाह दी कि हम गौरव का एडमिशन केन्द्रीय विद्यालय में करवा दें। गौरव अब केन्द्रीय विद्यालय एवं आरुषि दोनों जगह जाता है। आरुषि में उसकी स्पेशल एजुकेशन चल रही है। वह कक्षा दो में है। गौरव का मुझे अन्य बच्चों के मुक़ाबले काफ़ी ज़्यादा ध्यान रखना पड़ता है, क्योंकि वह आज भी पूरी तरह से अपना ध्यान नहीं रख पाता है। उसके जन्म से लेकर आज तक मुझे उसका बहुत ज़्यादा ख़याल रखना पड़ता है क्योंकि वह आज भी ठीक से समझ नहीं पाता है कि किस चीज़ से उसे नुक़सान हो सकता है एवं कौन-सी चीज़ उसके फ़ायदे की है। अगर ध्यान न दिया जाए तो वह एक ही चीज़ करता रहता है। गौरव को खाना खाने के लिए, पढ़ने-लिखने आदि हर एक काम के लिए बार-बार बोलना पड़ता है।

अब वह लगभग नौ वर्ष का हो गया है। उसके पैदा होने से लेकर आज तक मैंने उसे अकेले नहीं छोड़ा है। गौरव के ठीक होने के लिए मैं जो कर सकती हूँ, कर रही हूँ। गौरव अपने कई काम स्वयं कर लेता है एवं कई काम के लिए वह आज भी मुझ पर ही निर्भर है। गौरव में पहले से काफ़ी परिवर्तन आ गया है, परन्तु अभी भी उसे काफ़ी कुछ सीखना बाक़ी है।

उसकी बीमारी के बारे में हमारे परिवार के सभी सदस्यों का पता है एवं उनका व्यवहार गौरव के प्रति बिलकुल सामान्य है। हमारे समाज में इस बीमारी के प्रति जागरूकता बहुत ही कम है। अन्य अभिभावकों एवं शिक्षकों से मेरा यह कहना है कि इस प्रकार के बच्चे आपसे केवल यह चाहते हैं कि आप उनसे 'सामान्य' बच्चों की तरह व्यवहार करें। उन्हें आपकी किसी भी प्रकार की हमदर्दी एवं दया की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार के बच्चे आपसे केवल प्यार व सामान्य व्यवहार की उम्मीद रखते हैं। उन्हें किसी भी अन्य तरह की अपेक्षा आपसे नहीं है। गौरव जैसे अन्य सभी बच्चे समाज से केवल यही चाहते हैं कि उन्हें सब जगह समानता का अधिकार मिले। समाज उन्हें हीन भावना से न देखे, उनमें कुछ कमियाँ ज़रूर हैं परन्तु उनमें किसी के प्रति कोई छल-कपट और द्वेष नहीं है।



[i] हीडा स्कैन एक हेपेटोबिलरी इमिनोडायसेटिक एसिड (HIDA) स्कैन है; यकृत, पित्ताशय और पित्त वाहिकाओं की समस्याओं के निदान के लिए उपयोग की जाने वाली एक इमेजिंग प्रक्रिया। (Mayoclinic.org)

[ii] बाइलरी एट्रेसिया एक दुर्लभ जठरान्त्रीय (गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल) विकार है। इस विकार में यकृत के बाहर स्थित पित्त वाहिका का एक हिस्सा या पूरी नली नष्ट या अनुपस्थित होती है। (Rarediseases.com)



गोदावरी वर्मा
गौरव वर्मा की मम्मी

विकासात्मक विलम्ब की प्रारम्भिक पहचान में शिक्षक की भूमिका

किन्नरी पंड्या

केस 1

ढाई साल की रमा, तीन भाई-बहनों में से दूसरी है। उसके माता-पिता बेंगलूरु के बाहर एक*

फार्म में सब्ज़ियाँ उगाते हैं। पास के वैकल्पिक स्कूल में उसने और उसकी बड़ी बहन ने दाख़िला लिया। उसके माता-पिता को एहसास होने लगा था कि रमा को सुनने में कुछ परेशानी है। वे चाहते थे कि रमा भी अन्य सभी बच्चों की तरह विकास करे। उन्हें विश्वास था कि वह शायद उन बच्चों जैसी है जो मौखिक भाषा का विकास सामान्य समय से थोड़ी देर बाद करते हैं। रमा का परिवार एक ऐसी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ वयस्कों और बच्चों के बीच बहुत कम या कोई बातचीत नहीं होती है और अगर बातचीत होती भी है तो उसकी प्रकृति कार्यात्मक ही अधिक रहती है।

जब उसने स्कूल जाना शुरू किया तो शिक्षकों ने महसूस किया कि रमा निकट या दूर से आने वाली ध्वनियों के लिए कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाती। उसका चेहरा भावशून्य ही रहता है। अवलोकनों और प्रारम्भिक जाँच से शिक्षकों को पता लगा कि रमा को 'कुल श्रवण ह्रास' (total hearing loss) की समस्या थी। इसलिए इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं थी कि वह बहुत कम बोलती या मुश्किल से ही किसी बात का जवाब देती थी।

अभिभावक समुदाय में डॉक्टरों की मदद से शिक्षकों ने यह पता लगाया कि एक कर्णावत प्रत्यारोपण (Cochlear implant) से आंशिक श्रवण-शक्ति को बहाल करने में मदद मिल सकती है और वह अन्ततः बोलने में सक्षम होगी। उसके माता-पिता की आर्थिक पृष्ठभूमि ऐसी नहीं थी कि वे प्रत्यारोपण का ख़र्चा उठा सकें। शिक्षक समूहों के सक्रिय जुड़ाव, सोशल मीडिया नेटवर्क और क्राउड-सोर्सिंग के माध्यम से उन्होंने प्रत्यारोपण के लिए छह लाख रुपए जुटाए।

आज प्रत्यारोपण के एक साल बाद रमा अपना नाम पुकारे जाने पर जवाब देती है, कुछ शब्द दोहराती है और अपने आसपास के वातावरण को समझने लगी है। उसके शिक्षकों ने बताया कि नियमित स्पीच थेरेपी ने उसे स्पष्टता के साथ ध्वनियों को बोलने में सक्षम बनाया है लेकिन उनकी चुनौती यह है कि वे इन गहन प्रयासों को जारी रखें और घर पर भी उसे लगातार एक समृद्ध मौखिक भाषा का वातावरण प्रदान करें।

केस 2

लगभग चौबीस साल की आशा, वड़ोदरा शहर के बाहर एक गाँव में रहने वाले किसान परिवार में चार भाई-बहनों में सबसे बड़ी थी। मैंने उसे पहली बार 2004 में देखा था। तब वह नौ साल की थी। उसके परिवार ने बताया कि वह 'पागल' (मानसिक रूप से मन्द) है। वह एक पालने में लेटी हुई थी। उसकी लम्बाई लगभग डेढ़ फीट थी। दिन भर में उसे क़रीब आधी रोटी ही मिलती थी जिसके सहारे वह जीवित थी। उसकी जीभ बाहर को निकली हुई थी और उसके चारों तरफ़ मक्खियाँ भिनक रही थीं... वह आवाज़ें निकाल सकती थी, लोगों को पहचान सकती थी। अपने परिवेश और घटनाओं से अच्छी तरह वाक़िफ़ थी लेकिन कोई भी शारीरिक गतिविधि नहीं कर पाती थी।*

मैंने सामाजिक रक्षा विभाग के कार्य और बच्चों तथा ग़रीबों के लिए अन्य कल्याणकारी सेवाओं के बारे में अध्ययन किया था। इसलिए मैं आशा की दादी को इस बात के लिए राज़ी कर सकी कि वे आशा को लेकर सामाजिक रक्षा कार्यालय में जाएँ और दो सौ रुपए प्रति माह का मुआवज़ा प्राप्त करें। उल्लेखनीय विकलांगता का मुआवज़ा प्राप्त करने के लिए डॉक्टर का प्रमाणपत्र प्राप्त करना आवश्यक था। इस प्रमाणपत्र के लिए एक सामान्य अस्पताल में, पहले मनोचिकित्सकों और बाद में बाल रोग विशेषज्ञ से मिलने के बाद, यह एक विशुद्ध संयोग ही था कि आशा को पूरी तरह से नया जीवन मिला। पता चला कि आशा को क्रेटिनिज़्म था यानी 'जन्मजात आयोडीन की कमी का सिंड्रोम। यह सिंड्रोम थाइरॉइड हार्मोन की अनुपचारित जन्मजात कमी के कारण गम्भीर शारीरिक और मानसिक अविकास की स्थिति पैदा करता है, (जन्मजात हाइपोथाइरॉइडिज़्म), जिसका कारण आमतौर पर मातृ हाइपोथाइरॉइडिज़्म होता है।[i]

उसका केस एक ऐसा प्रकटीकरण था जो स्थानीय मेडिकल कॉलेज के लिए अध्ययन का कारण बन गया। संक्षेप में कहें तो लगभग दस मिलीग्राम थाइरॉइड टैबलेट के उपचार से उसके चयापचय, भूख और वृद्धि के पैटर्न में महत्त्वपूर्ण बदलाव आए। आशा लम्बी हो गई, उसने चलना शुरू कर दिया, उसकी भाषा विकसित हुई और धीरे-धीरे वह ख़ुद की देखभाल करने में काफी स्वतंत्र हो गई। तेरह साल की उम्र में वह अपने

चार साल के भाई के साथ आँगनवाड़ी केन्द्र (एडब्ल्यूसी) में जाने लगी। उसने अब शायद स्कूली शिक्षा पूरी कर ली है और एक वयस्क के रूप में स्वतंत्र हो गई है।

ग्यारह साल तक आशा को बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं, पोषण और प्रेरणा से केवल इसलिए वंचित रखा गया क्योंकि इस तरह के मामलों की 'पहचान' नहीं हो पाई थी। यह स्थिति तब थी जब आसपास के क्षेत्र में एक स्कूल, आँगनवाड़ी केन्द्र और एक ग्राम स्वास्थ्य केन्द्र मौजूद थे। बेशक, मेरे लिए महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि वह बच गई! निश्चित रूप से आशा का यह केस ऐसे कई मामलों में से एक है।

हालाँकि आशा का मामला एक दशक से अधिक पुराना है लेकिन यह आज भी मुझे बच्चों के वातावरण से जुड़े उन पहलुओं के बारे में आश्चर्यचकित करता है जो एक स्वस्थ बच्चे के विकास को प्रभावित करते हैं। आशा के निकटतम वातावरण के महत्त्वपूर्ण लोगों— दादी, माता-पिता और समुदाय —ने उसे जीवित रहने में सक्षम किया। उसकी देखभाल की और इलाज की सम्भावनाओं के बारे में जानने के बाद उसे स्वास्थ्य पेशेवरों के पास ले गए। उनका मार्गदर्शन लिया और यह सुनिश्चित किया कि वह एडब्ल्यूसी और स्कूल में जाए। इसके अलावा उन्होंने आशा को सामाजिक रूप से भी प्रशिक्षित किया ताकि वह अपने जीवन को स्वतंत्र रूप से प्रबन्धित कर सके।

उपर्युक्त दोनों मामले यह बताते हैं कि बच्चे का निकटतम वातावरण उसका स्वस्थ बचपन सुनिश्चित करने में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। माता-पिता और शिक्षकों पर बच्चों की इष्टतम वृद्धि और विकास में मदद करने की सबसे बड़ी ज़िम्मेदारी है।

विभिन्न आयु समूहों तथा कक्षाओं में, विशेष रूप से बचपन के शुरुआती वर्षों में, बच्चों के समग्र स्वास्थ्य और कल्याण को सुनिश्चित करने में शिक्षकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। शुरुआती वर्षों में बच्चों की शिक्षा उनके समग्र विकास से सम्बन्धित होती है। यूँ तो प्रत्येक बच्चा अपनी ही विशिष्ट गति से विकसित होता है और उनमें वैयक्तिक रूप से अन्तर होता है, फिर भी विकास के प्रक्षेत्र में विकासात्मक विलम्ब या असामान्य व्यवहार की स्थिति में समय पर हस्तक्षेप के लिए अवलोकन करना, रिपोर्ट करना और विशेषज्ञ की सलाह का पालन करना महत्त्वपूर्ण है।

संवेदनशील, चिन्तनशील और समावेशी शिक्षक इस दिशा में निम्नलिखित क़दम उठा सकते हैं

अपने विद्यार्थियों को जानें

घर के बाद स्कूल ही वह स्थान है जहाँ बच्चे अपना अधिकतम समय व्यतीत करते हैं। शिक्षक के लिए प्रत्येक बच्चे की पृष्ठभूमि और चिकित्सा सम्बन्धी इतिहास को जानना महत्त्वपूर्ण होता है। इससे वे यह समझ सकेंगे कि बच्चे को कोई गम्भीर बीमारी/बीमारियाँ तो नहीं हैं, जन्म के बाद से उसकी क्या स्थितियाँ रही हैं और स्कूल के बाहर बच्चे के जीवन में अकसर किस तरह की घटनाएँ होती हैं। छोटे बच्चों के शिक्षक के रूप में इन बातों की जानकारी होना भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि बच्चे की पारिवारिक पृष्ठभूमि कैसी है, माता-पिता का व्यवसाय क्या है, घर पर वे बच्चों के साथ कितना समय बिताते हैं और उसकी प्रकृति कैसी है, स्कूल के बाद बच्चे की क्या दिनचर्या रहती है आदि। हालाँकि प्रत्येक कक्षा में तीस-चालीस बच्चों के लिए इन सब बातों का पता लगाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य हो सकता है लेकिन बच्चे और बच्चे के परिवार के बारे में यह जानकारी शिक्षक को बच्चे के दिन-प्रतिदिन के व्यवहार और प्रगति को परिप्रेक्ष्य में रखने में मदद करेगी। चिकित्सा सम्बन्धी इतिहास के बारे में पता होने से शिक्षक को उन असामान्य संकेतों को पहचानने में मदद मिलेगी जिन पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

अवलोकन करें

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण अभ्यास यह है कि शिक्षक कक्षा में आयोजित विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से प्रत्येक बच्चे का अवलोकन करें। अवलोकन के दौरान, सिखाई जा रही विशिष्ट 'विषयवस्तु' के लिए अनुक्रिया करने की क्षमता और शैक्षिक क्षमता के अलावा, बच्चे के समग्र विकास के महत्त्वपूर्ण संकेतक इस प्रकार हैं : बच्चे की मनोदशा; विभिन्न गतिविधियों पर ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता, निर्देशों का पालन करना, लोगों से घुलना-मिलना और आँखों से सम्पर्क करना, अपने स्वभाव का प्रबन्धन करना, अनैच्छिक क्रियाएँ, कुछ पुनरावृत्तियों के बाद समझना, स्थानिक पहलुओं को समझना, भाषा और तर्क करना आदि।

विकास प्रतिरूप (पैटर्न) में अन्तर्दृष्टि प्राप्त करें

बच्चों के साथ काम करने के अपने विशाल अनुभव और शिक्षा सिद्धान्तों का ज्ञान रखने वाले शिक्षक को विभिन्न आयु वर्ग के बच्चों के विकास के पैटर्न की उचित समझ होती है— कम से कम उन कक्षाओं के बारे में जिसमें उन्होंने कुछ वर्षों तक पढ़ाया है। विकासात्मक प्रगति और विभिन्न शारीरिक, अवधारणात्मक तथा सामाजिक जुड़ाव सम्बन्धी कार्यों को करने की बच्चों की क्षमता की इस समझ से शिक्षक, किसी भी प्रकार के विचलन— सकारात्मक और उन्नत विकास दोनों —या किसी बच्चे के विकास में ख़ास प्रकार के किसी विलम्ब को, समझने में सक्षम होंगे। बच्चे के व्यक्तिगत विकास की यह

सूक्ष्म समझ शिक्षक के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इससे वे बच्चे में किसी भी एक जैसे असामान्य पैटर्न पर ध्यान देने में सक्षम हो पाते हैं।

दस्तावेज़ीकरण

अवलोकन का अगला महत्त्वपूर्ण चरण स्कूल में बच्चों के काम का दस्तावेज़ीकरण है। उदाहरण के लिए, उपाख्यानात्मक (anecdotal) रिकॉर्ड को उन विशिष्ट पहलुओं के दस्तावेज़ीकरण का एक उपयोगी तरीक़ा माना जाता है जिन्हें शिक्षक नियमित रूप से बच्चे में देखते हैं। शिक्षक के दैनिक अवलोकन या विशिष्ट घटनाओं के नियमित नोट्स बच्चे की समस्याओं को इंगित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, किसी बच्चे का लगातार आँखों से सम्पर्क न करना या बार-बार अनैच्छिक क्रियाएँ करना या फिर उसका लेखन बच्चे में डिस्लेक्सिया के पैटर्न को दर्शा सकता है। दस्तावेज़ीकरण के अन्य रूप जैसे विकासात्मक जाँच सूची या पोर्टफोलियो—जो प्रत्येक बच्चे के कार्यों का रिकॉर्ड रखता है, बच्चे की वृद्धि और विकास के बारे में बताने के लिए उपयोगी सबूत हैं।

साझा करना और साझेदार बनना

विकास स्पेक्ट्रम में बच्चे की क्षमताओं को पहचानने के लिए एक शिक्षक का व्यक्तिगत रूप से किया गया अवलोकन एक महत्त्वपूर्ण प्रारम्भिक बिन्दु है। इस बात की सम्भावना हमेशा बनी रहती है कि जो कुछ शिक्षक देखते हैं वे उस सन्दर्भ विशेष के लिए ख़ास हों न कि बच्चे द्वारा प्रदर्शित एक सिलसिलेवार पैटर्न। बच्चों के बारे में किए गए अवलोकनों— ध्यान दिए गए विशिष्ट पहलू; चिन्ताएँ या सकारात्मकता —को शिक्षकों के बड़े समूह के साथ साझा करने से अन्य सन्दर्भों में देखे गए व्यवहार को पुष्ट करने में मदद मिलेगी। किसी घटना के प्रति बच्चे की प्रतिक्रिया या विकास के क्षेत्र में पैटर्न की सामूहिक समझ, शिक्षक समूह को कई स्तरों पर सक्षम बनाएगी, जैसे :

- बच्चे की स्थिति का सटीक निर्णय लेने में (चाहे वह एक अस्थायी घटना हो या कोई ऐसी चीज़ जिस पर सूक्ष्म रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है)।
- अपने स्वयं के स्तर पर बच्चे की मदद करने के लिए सहयोग करने में। उदाहरण के लिए शैक्षिक मदद, बच्चे को सुनना, वैयक्तिक कार्यक्रमों और अलग-अलग शैक्षणिक दृष्टिकोण की योजना बनाना।
- माता-पिता के साथ घर पर बच्चों के किसी निरन्तर पैटर्न पर चर्चा करने में।
- यदि और जहाँ आवश्यक हो, वहाँ अगले क़दम उठाने के बारे में निर्णय लेने में।

विकलांगता के सन्दर्भ में प्रत्येक कार्य के लिए सामूहिक प्रयास होना चाहिए। अपने व्यक्तिगत स्तर पर माता-पिता और शिक्षक एक निश्चित बिन्दु के बाद शायद अप्रभावी हो जाएँ। किसी बच्चे के बारे चिन्ताजनक पहलू की पहचान होने पर उसकी मदद करने के लिए माता-पिता और शिक्षक का साझेदारी के साथ काम करना बहुत ज़रूरी हो जाता है। इसके अलावा यह साझेदारी उन पेशेवरों के साथ भी होनी चाहिए जो बच्चे के उपचार और थेरेपी में सहायता देते हैं, जैसे कि बाल रोग विशेषज्ञ, फ़िज़ियोथेरेपिस्ट, स्पीच और प्रोफ़ेशनल थेरेपिस्ट, बड़े बच्चों के लिए वृत्तिक शिक्षक (vocational educators) इत्यादि। रमा का उदाहरण शिक्षक समूह के सामूहिक प्रयासों का एक अच्छा उदाहरण है, जिसमें सुनने में उसकी मदद करने के लिए सबने मिलकर प्रयास किया—समस्या की पहचान करने से लगाकर सभी सम्बन्धित लोगों के साथ भागीदारी करने तक।

नेटवर्क और उल्लेखन

विकलांगता या तत्सम्बन्धी सरोकारों को सम्बोधित करने के लिए उल्लेख या ज़िक्र करना (रेफरल) महत्त्वपूर्ण है। बच्चों के सबसे क़रीबी पर्यवेक्षकों में से एक यानी शिक्षक माता-पिता पर भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं। शिक्षकों और स्कूलों के पास ऐसे पेशेवरों का एक नेटवर्क होना चाहिए जिनके पास बच्चे को मदद के लिए ले जाया जा सके। यह नेटवर्क शिक्षकों और परिवारों को उन सभी विशिष्ट सुविधाओं और प्रावधानों का लाभ उठाने में मदद करता है जो विभिन्न प्रकार की विकलांगता वाले बच्चों के लिए उपलब्ध हैं। अगर स्थानीय स्कूल के शिक्षक, आँगनवाड़ी के कार्यकर्ता या स्वास्थ्य सेवा के कार्यकर्ता आशा की समस्या को पहचान लेते तो वह अपने जीवन के क़ीमती ग्यारह साल इस तरह से न खो बैठती।

रमा के मामले में उपर्युक्त सभी पहलुओं का योगदान साफ़ नज़र आता है, जिसकी वजह से वह बोलने और भाषा की क्षमता हासिल कर पाई, अपने आसपास की दुनिया को समझकर उसके साथ जुड़ पाई और उसके स्वतंत्र होने की सम्भावनाएँ खुल गईं। इससे आगे चलकर वह समाज के लिए एक योगदानकर्ता बन पाई।

चालीस बच्चों की कक्षा में शायद किसी एक (या शायद एक भी नहीं) विद्यार्थी में विलम्बता का कोई रूप नज़र आ सकता है, लेकिन यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि उस एक बच्चे पर सही समय पर अपेक्षित ध्यान दिया जाए। उसके परिवार को उसकी मदद करने के लिए आवश्यक मार्गदर्शन मिले।

शिक्षकों के रूप में हम प्रत्येक बच्चे के भविष्य के निर्माण, उसके विकास और उसकी प्रगति के लिए ज़िम्मेदार हैं। हमारे सन्दर्भ में विद्यार्थी-शिक्षक अनुपात बहुत उच्च होने के कारण

कक्षाओं में वैयक्तिक रूप से ध्यान देना और देखभाल करना चुनौतीपूर्ण लग सकता है, किन्तु यह असम्भव नहीं है। एक तेज़नज़र, चिन्तनशील और सक्रिय शिक्षक, अपने स्कूल के समर्थन के साथ, समय पर हस्तक्षेप प्रदान करके बच्चे के जीवन में चमत्कार कर सकते हैं। सभी रमाओं और आशाओं की मदद की जा सकती है— बशर्ते उनके वातावरण में सभी की सामूहिक इच्छा हो और हम सबको मिलकर इस प्रकार के वातावरण का निर्माण करना चाहिए।

i https://www.merriam-webster.com/dictionary/cretinism 4 नवम्बर 2019 को पुनः प्राप्त किया गया।

*पहचान के संरक्षण के लिए नाम बदल दिए गए हैं।



किन्नरी पंड्या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में बाल विकास और प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा कोर्स पढ़ाती हैं। वे सार्वजनिक तंत्र में प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा पर अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन द्वारा की जा रही कई पहलक़दमियों में योगदान देती हैं। उनसे kinnari@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

सभी के लिए एक गरिमामय जीवन
शिशु सरोथी की यात्रा

ममता घोष और नेहा दास

विश्व की कुल जनसंख्या का 15 प्रतिशत हिस्सा विकलांग जनों का (पर्सन्स विद डिसेबिलिटीज़-पीडब्ल्यूडी) है, जिनमें से 80 प्रतिशत विकासशील देशों में रहते हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 2.21 प्रतिशत लोगों में एक या एक से अधिक प्रकार की विकलांगता है। लोगों का यह समूह समाज में सबसे अधिक हाशिए पर और कमज़ोर है। दुर्गम्य वातावरण, भेदभावपूर्ण व्यवहार और समाज में ग़ैर-समावेशन आदि इसके कारण हैं।

गुवाहाटी में स्थित *शिशु सरोथी* सेंटर फॉर ट्रेनिंग एण्ड रीहैबिलिटेशन ऑफ़ पर्सन्स विद मल्टीपल डिसेबिलिटी 1987 से विकलांग बच्चों और व्यक्तियों के साथ काम कर रहा है। इसकी शुरुआत एक कमरे में दो बच्चों के साथ हुई। अपने शुरुआती दिनों में यह संगठन मुख्य रूप से प्रमस्तिष्क पक्षाघात (सेरब्रल पॉल्ज़ी — सीपी) वाले बच्चों की ज़रूरतों को सम्बोधित करने वाला एक केन्द्र था। लेकिन पिछले तीन दशकों में यह विकलांग बच्चों और व्यक्तियों को सक्षम और सशक्त बनाने वाले क्षेत्रीय स्तर के एक अग्रणी संस्थान के रूप में विकसित हुआ है ताकि वे एक ऐसे समावेशी समाज में पूर्ण और प्रभावी रूप से भागीदारी कर सकें जो उनकी अन्तर्निहित गरिमा और स्वायत्तता का सम्मान करता है।

इसका विज़न एक ऐसी समावेशी दुनिया बनाना है जहाँ विकलांग बच्चे, महिलाएँ और पुरुष सम्मान और गरिमा के साथ समान शर्तों पर रहते हैं, अपने अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता का आनन्द लेते हैं और जिन्हें मानव विविधता और मानवता का ही एक भाग मानते हुए महत्त्व दिया जाता है। पेशेवरों की एक समर्पित टीम विकलांग बच्चों और व्यक्तियों के अधिकारों को बनाए रखने तथा उनका पक्ष-समर्थन करने, उनके लिए समान अवसर सुनिश्चित करने, उनके समावेशन को बढ़ावा देने और एक भेदभावरहित, अवरोधमुक्त समाज में उनकी पूर्ण भागीदारी के द्वारा इस विज़न की प्राप्ति की दिशा में काम करती है।

हमारे मॉडल की विशिष्टता और उसका स्थायित्व इस बात में है कि हम बहुआयामी कार्य करते हैं, जैसे बहुत छोटे बच्चों के लिए शुरुआती हस्तक्षेप से लेकर तीन से अठारह वर्ष की आयु के विकलांग बच्चों और युवा वयस्कों के लिए विशेष शिक्षा की व्यवस्था करने तक का कार्य। अलग-अलग विकलांगताओं जैसे कि बौद्धिक विकलांगता, बधिरता-दृष्टिहीनता, बहुसंवेदी दुर्बलता और उच्च समर्थन की आवश्यकताओं वाले बच्चों और युवा वयस्कों को भी अधिकार आधारित ढाँचे के माध्यम से सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। हम सेवा वितरण के साथ-साथ अधिकार आधारित पक्ष-समर्थन की जुड़वाँ ट्रैक पद्धति (twin-track approach) के माध्यम से काम करते हैं। प्रमुख विषयगत क्षेत्रों में शिक्षा, स्वास्थ्य, पक्ष-समर्थन और शोध शामिल हैं।

समावेशी शिक्षा

विकलांग बच्चों के लिए शिक्षा की आवश्यकता को नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम (आरटीई), 2009 और विकलांगजनों का अधिकार अधिनियम (आरपीडब्ल्यूडी), 2016 को साथ रखते हुए शिक्षा के क्षेत्र के हमारे काम में समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देना शामिल है। यह काम कई केन्द्रों और इकाइयों (यूनिट) के माध्यम से किया जाता है। इनका विवरण आगे है।

समावेशी और व्यावसायिक शिक्षा केन्द्र (सेंटर फॉर इन्क्लूसिव एण्ड वोकेशनल एजुकेशन —सीआईवीई)

यह यूनिट विकासात्मक विकलांगता वाले बच्चों के लिए बहुमुखी शैक्षिक और उपचारात्मक इनपुट प्रदान करती है। इसमें एक रिवर्स इन्क्लूशन प्लेग्रुप, सभी साज-सामानों से लैस एक सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आईसीटी) प्रयोगशाला, ऑटिज़म स्पेक्ट्रम विकार और व्यापक विकासात्मक विकार (पर्वेसिव डेवलपमेंटल डिसऑर्डर्स) वाले बच्चों के लिए स्कूल की तैयारी का कार्यक्रम शामिल है। इस केन्द्र में विशेष शिक्षाविदों, चिकित्सकों (थेरेपिस्ट), परामर्शदाताओं और सामाजिक कार्यकर्ताओं की एक विविध टीम समावेशी शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मिलकर काम करती है। समावेशी और व्यावसायिक शिक्षा केन्द्र (सीआईवीई) के तहत कई इकाइयाँ हैं।

प्लेग्रुप यूनिट एक रिवर्स इन्क्लूसिव क्लास है जिसमें विकलांग और ग़ैर-विकलांग बच्चे दोनों एक साथ शिक्षा प्राप्त करते हैं। इसमें विकासात्मक रूप से उपयुक्त और बाल

केन्द्रित तरीक़ों के माध्यम से सीखने पर बल दिया जाता है जो सर्वांगीण विकास के अवसर प्रदान करते हैं।

फंक्शनल एकेडमिक यूनिट अपने दैनिक जीवन की गतिविधियों को सुचारू रूप से चलाने में बच्चों को समर्थन देने और न्यूनतम समर्थन के साथ स्वतंत्र जीवन जीने के लिए कार्यात्मक साक्षरता और संख्यात्मक कौशल विकसित करने पर केन्द्रित है।

फंक्शनल यूनिट पूर्व व्यावसायिक कौशल, जीवन कौशल और काम से सम्बन्धित व्यवहार पर भी ध्यान केन्द्रित करती है ताकि विद्यार्थी व्यावसायिक प्रशिक्षण की दिशा में सहज रूप से जा सकें।

विशेष शिक्षण यूनिट उच्च समर्थन की आवश्यकताओं वाले कम आयु वर्ग के बच्चों में बहुसंवेदी दृष्टिकोण के माध्यम से स्वयं और पर्यावरण के बारे में जागरूकता पैदा करती है और अवधारणात्मक कौशल का विकास करती है।

लीशर लर्निंग यूनिट में भी वे बच्चे शामिल होते हैं जिन्हें उच्च और अधिक समर्थन की आवश्यकता होती है। इस यूनिट के विद्यार्थियों को विकास के सभी क्षेत्रों में व्यापक समर्थन की आवश्यकता पड़ती है और रोज़मर्रा के जीवन के लिए बुनियादी कौशल विकसित करने में उनकी मदद की जाती है ताकि वे गौरव, आत्मसम्मान, आत्मविश्वास और स्वीकरण के साथ जीवन जी सकें।

व्यावसायिक यूनिट लम्बे समय में रोज़गार के लिए आवश्यक कौशलों से लैस करने व सशक्त बनाने के लिए विकलांग युवाओं को विभिन्न व्यावसायिक कोर्सों में प्रशिक्षित करती है।

शारीरिक पुनर्वास यूनिट उपचारात्मक सेवाएँ प्रदान करती है। इसमें आवश्यकता आधारित एप्रोच को अपनाते हुए लघु व दीर्घकालिक लक्ष्यों के माध्यम से शारीरिक और विकासात्मक पड़ावों को प्राप्त करने के लिए विद्यार्थी सप्ताह में कम से कम दो दिनों के लिए प्रशिक्षित पेशेवरों से फ़िज़ियोथेरेपी और स्पीच थेरेपी का लाभ उठाते हैं।

आईसीटी लैब (सूचना, संचार और प्रौद्योगिकी) का मूल विचार यह है कि कम्प्यूटर साक्षर बनने में विकलांगजनों की सहायता की जाए। बुनियादी कम्प्यूटर कौशल सीखने में विद्यार्थियों की सहायता करने के लिए उनकी व्यक्तिगत ज़रूरतों के अनुसार विशेष सहायक उपकरण और सॉफ्टवेयर उपयोग में लाए जाते हैं।

संगठन ने समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया है। रिवर्स इन्क्लूशन 2016 में शुरू किया गया था। इसमें एक सामान्य पूर्वस्कूली पाठ्यचर्या का अनुसरण किया जाता है जिसमें विशेष शिक्षक और मोंटेसरी प्रशिक्षित शिक्षक सहयोग करते हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सभी बच्चे अपनी क्षमताओं के अनुसार सीख रहे हैं। जिस अभिन्न तरीक़े से ग़ैर-विकलांग और विकलांग बच्चे एक-दूसरे के साथ मिल-जुलकर सहभागिता करते हैं, उसे देखकर बहुत ख़ुशी होती है।

इन वर्षों में कई बच्चों को मुख्यधारा के नियमित स्कूलों में लाया गया है। *शिशु सरोथी* के शिक्षक इन स्कूलों में शिक्षकों का लगातार समर्थन करते हैं और बच्चों द्वारा की गई प्रगति का अनुवर्तन करते हैं। मुख्यधारा के स्कूलों के लिए नामांकन से पहले होने वाले संवेदीकरण एवं अभिविन्यास के कार्यक्रमों को समावेशन की दिशा में आगे बढ़ने वाले नियमित स्कूलों के लिए आयोजित किया जाता है।

सितम्बर 2018 में, असम सरकार तथा स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मन्त्रालय के तहत राष्ट्रीय आयुष मिशन ने जीवधारा योजना शुरू की। यह एक पायलट योजना है जिसका उद्देश्य *शिशु सरोथी* के सहयोग से असम के कामरूप ज़िले में विकलांग बच्चों के लिए योग की शुरुआत करना है। यह नई पहल बहुत प्रभावी रही है क्योंकि यह केन्द्र में पहले से चल रहे अन्य उपचारों का अनुपूरण करती है और सचेतनता को बढ़ावा देने के लिए बाल सुलभ गतिविधियों के साथ-साथ मन्त्रोच्चार, प्राणायाम (साँस लेने के व्यायाम), व्यायाम और आसनों की तकनीकों का उपयोग करती है। प्रत्येक सप्ताह एक घण्टे के लिए योग के सत्र आयोजित किए जाते हैं। माता-पिता के साथ नियमित बैठकें आयोजित की जाती हैं ताकि उन्हें योग के विचार और विकलांग बच्चों के लिए इसके लाभों से परिचित कराया जा सके। दिलचस्प बात यह है कि अधिकांश माता-पिता अपने बच्चों के साथ इन योग सत्रों में भाग लेते हैं।

पूर्वोत्तर में समावेशी शिक्षा पर क्षेत्रीय कार्य (रीजनल एक्शन ऑन इनक्लूसिव एजुकेशन इन द नॉर्थ ईस्ट — आरएआईएसई-एनई)

असम, मणिपुर, मेघालय, नागालैंड और त्रिपुरा के चयनित ज़िलों में सरकारी/सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में विकलांग बच्चों के लिए शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए समावेशी शिक्षा पर सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) के कार्यक्रम के पूरक के रूप में 2016 में आरएआईएसई-एनई (पूर्वोत्तर में समावेशी शिक्षा पर क्षेत्रीय कार्य) परियोजना शुरू की गई थी। *शिशु सरोथी* वर्तमान में कामरूप (महानगर) ज़िले के पाँच एसएसए स्कूलों के साथ काम कर रहा है और भविष्य में एक अन्य ज़िले में कार्य करने के लिए तैयार है। कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य क्षमता निर्माण, संवेदीकरण, पाठ्यचर्या

अनुकूलन के बारे में शिक्षक-प्रशिक्षण, अधिगम के लिए सार्वभौमिक डिज़ाइन और वैकल्पिक मूल्यांकन पद्धति के माध्यम से गुणवत्तापूर्ण समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देना और उसका पक्ष-समर्थन करना है।

स्पर्श यूनिट

यह यूनिट बधिरता-दृष्टिहीनता (डेफ-ब्लाइंडनेस — डीबी) वाले लोगों को व्यापक आवश्यकता आधारित सेवाएँ प्रदान करती है। बधिरता-दृष्टिहीनता एक विशिष्ट विकलांगता है जिसमें दृश्य और श्रवण हानि और बहुसंवेदी विकार (मल्टीसेंसरी इम्परमेंट — एमएसआई) का संयोजन होता है और जो 0 से 40 वर्ष की आयु के लोगों में होता है। यह कार्यक्रम 2015 में असम के दो ज़िलों में शुरू किया गया था, जो सेंस इंटरनेशनल इण्डिया के समर्थन के साथ ज़्यादातर ग्रामीण क्षेत्रों में चलाया जाता है। यह गृह आधारित सेवाएँ प्रदान करता है। इसमें परामर्श, माता-पिता के प्रशिक्षण के साथ शैक्षिक सुविधाएँ और श्रवण यंत्र और ब्रेल किट जैसे सहायक उपकरणों का वितरण भी शामिल है।

मानव संसाधन विकास विभाग

यह विभाग प्रशिक्षित पुनर्वास पेशेवरों का कैडर बनाने के लिए भारतीय पुनर्वास परिषद (रीहैबिलिटेशन काउंसिल ऑफ़ इण्डिया — आरसीआई) द्वारा अनुमोदित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। विभाग ने प्रमस्तिष्क पक्षाघात वाले बच्चों के प्रबन्धन के लिए माता-पिता को अल्पकालिक प्रशिक्षण प्रदान करके अपना कार्य शुरू किया। 2003 से विभिन्न आरसीआई अनुमोदित सर्टीफिकेट कोर्स (जिसमें विभिन्न प्रकार की विकलांगता और समावेशी शिक्षा पर एडवांसड सर्टीफिकेट कोर्स शामिल हैं), डिप्लोमा (डीएड विशेष शिक्षा — प्रमस्तिष्क पक्षाघात) और डिग्री स्तर के कोर्स (बीएड विशेष शिक्षा — बौद्धिक विकलांगता) शुरू किए गए हैं। आरसीआई द्वारा अनुमोदित फाउण्डेशन कोर्स के माध्यम से क्षेत्र भर के सरकारी स्कूलों के शिक्षकों को विकलांगता के बारे में प्रशिक्षित किया गया है।

राष्ट्रीय न्यास के तहत शिक्षकों और देखरेखकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए गृह आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए गए हैं। *शिशु सरोथी* ने, पिछले कई वर्षों में, विकलांगता पर सरकारी क्षमता निर्माण की विभिन्न पहलों के माध्यम से डॉक्टर, नर्स, आरएमएसए, एसएसए, आईसीडीएस, आशा और आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं सहित 5000 से अधिक पेशेवरों तक पहुँच बनाई है।

भारती इंफ्राटेल छात्रवृत्ति कार्यक्रम (बीआईएसपी)

शिशु सरोथी ने भारती इंफ्राटेल लिमिटेड के सीएसआर विंग के साथ मिलकर भारती इंफ्राटेल स्कॉलरशिप प्रोग्राम (बीआईएसपी) के कार्यान्वयन में भी भागीदारी की है। 2016 में यह कार्यक्रम पूर्वोत्तर के सभी आठ राज्यों के विकलांग विद्यार्थियों की उच्च शिक्षा का समर्थन करने के लिए प्रत्येक राज्य के निर्धारित सहभागी संगठनों के साथ शुरू किया गया था। पूर्वोत्तर भारत में 195 से अधिक विद्यार्थियों को विभिन्न कोर्स और कार्यक्रमों के लिए छात्रवृत्ति से सम्मानित किया गया है।

अन्य हस्तक्षेप

प्रारम्भिक हस्तक्षेप

1987 में अपनी स्थापना के बाद से ही *शिशु सरोथी* प्रारम्भिक हस्तक्षेप यूनिट (अर्ली इंटरवेंशन यूनिट — ईआईयू) चला रहा है और 50,000 से अधिक उपचारात्मक सत्र प्रदान करते हुए, पूरे उत्तर भारत के हज़ारों छोटे बच्चों तक पहुँच गया है। यह यूनिट शिशुओं, उच्च जोखिम वाले शिशुओं और विलम्बित विकास एवं विकलांगता वाले छोटे बच्चों में समस्या का शीघ्र पता लगाने, स्क्रीनिंग करने और प्रबन्धन सेवाएँ प्रदान करने का कार्य करती है। इसमें बच्चे के लिए थेरेपी और गृह प्रबन्धन के ऐसे कार्यक्रम भी होते हैं जो बच्चों के लिए विशिष्ट हैं।

बाल विकास के क्षेत्र में हुए शोधों ने इस तथ्य को प्रतिपादित किया है कि शुरुआती छह साल हर बच्चे के समग्र विकास के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण होते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि ऐसी सेवाएँ उन बच्चों को प्रदान की जाएँ जिन्हें ऐसा कोई ख़तरा है या जिनमें विकलांगता के एक या अधिक रूप की पहचान की गई है। इस तरह के विलम्बित विकास के अनेक कारक हैं, जैसे कि जन्म से पूर्व होने वाली जटिलताएँ, समय से पहले जन्म होना, जन्म के समय वज़न कम होना, कुपोषण, उपेक्षा और बीमारी।

इस तरह की सेवाएँ समय पर हस्तक्षेप सुनिश्चित करती हैं और यह भी सुनिश्चित करती हैं कि संज्ञानात्मक, मोटर, सामाजिक-भावनात्मक, संचार आदि में विलम्बित विकास वाले बच्चे अपने जीवन की गुणवत्ता को बढ़ा सकें और अपनी पूरी क्षमता प्राप्त कर सकें जो बदले में मुख्यधारा के समाज में उनके शीघ्र समावेशन को प्रोत्साहन देगा। उदाहरण के लिए, प्रत्येक बच्चे के सकल और सूक्ष्म मोटर कौशल, संज्ञानात्मक कौशल, ग्रहणशील एवं अभिव्यंजक भाषा कौशल, खेल कौशल और स्वयं सहायता कौशल के विकास को समझने व पहचानने और तदनुसार कार्य करने के लिए विकलांग बच्चों और उनके परिवारों को व्यक्तिगत आकलन और मूल्यांकन प्रदान किया जाता है। फिर नियोजन और

विकास प्रबन्धन की योजनाएँ भी हैं। इनमें प्रत्येक बच्चे के लिए व्यक्तिगत लघु व दीर्घकालिक लक्ष्यों को निर्धारित करने से लेकर, माता-पिता के लिए गृह प्रबन्धन कार्यक्रमों तक का विवरण है ताकि वे इन पहचाने हुए विशिष्ट लक्ष्यों पर अपने बच्चों के साथ कार्य कर सकें।

इसके अलावा, परिवारों की सुविधा के अनुसार, बच्चों के साथ साप्ताहिक या मासिक आधार पर अनुवर्ती सत्र आयोजित किए जाते हैं। कार्यक्रमों की समीक्षा की जाती है और आवश्यकतानुसार उचित थेरेपी की व्यवस्था की जाती है जिसमें फिज़ियोथेरेपी, स्पीच थेरेपी, प्रोफेशनल थेरेपी और विशेष शिक्षा शामिल है। खेल के माध्यम से बच्चों की प्रेरणा और संलग्नता बढ़ाने के लिए साल में तीन बार फ्री प्ले स्टिमुलेशन कार्यक्रम आयोजित किया जाता है।

प्रारम्भिक हस्तक्षेप यूनिट के बच्चों को उनकी प्रगति और व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार *शिशु सरोथी* के समावेशी व व्यावसायिक यूनिट केन्द्र, स्पर्श यूनिट और पूर्व व्यावसायिक यूनिट के अन्तर्गत रेफरल सेवाएँ प्रदान की जाती हैं। सम्बन्धित स्थितियों जैसे 'दौरा पड़ना' के नियन्त्रण और बेरा (श्रवण परीक्षण) और दृष्टि परीक्षण जैसे नैदानिक परीक्षणों के लिए उन्हें चिकित्सकों के पास भी भेजा जाता है। सहायता, उपकरण और सहायक उपकरण जैसे हाथ/घुटने के गेटर, टखने-पैर के ऑर्थोसिस, कूल्हे-घुटने-टखने-पैर के ऑर्थोसिस, घुटने-टखने-पैर के ऑर्थोसिस, संशोधित जूते आदि भी अनुसंशित किए जाते हैं।

परामर्शन

परामर्शन यूनिट माता-पिता को प्राथमिक मनो-सामाजिक सहायता और परामर्शन सेवाएँ प्रदान करती है। यह यूनिट माता-पिता, जो आमतौर पर प्राथमिक देखरेखकर्ता होते हैं, को बच्चे की विकलांगता के बारे में शिक्षित करने का काम करती है ताकि अपने बच्चे की विकलांगता के कारण वे जिन भावनाओं से गुज़र रहे होते हैं, उनका सामना करने में उन्हें मदद मिल सके और उन्हें अपनी स्थिति का बेहतर प्रबन्धन करने के लिए सशक्त बनाया जा सके। हम मुख्यधारा के उन स्कूलों में समावेशी शिक्षा की आवश्यकता की समझ पैदा करने का प्रयास करते हैं, जहाँ ऐसा करना सम्भव है।

पहुँच

शिशु सरोथी असम के ग्रामीण इलाक़ों में समुदायों के बीच जागरूकता पैदा करने, विकलांग बच्चों की पहचान करने या उनकी स्क्रीनिंग करने के लिए आउटरीच कार्यक्रम आयोजित करता है। इसके अलावा प्रसव पूर्व और प्रसव के बाद बच्चों को जो ख़तरे हो सकते हैं— उनके बारे में जानकारी प्रदान करना भी इस आउटरीच कार्यक्रम का उद्देश्य होता है। गोलपारा में स्थानीय समुदाय के सदस्यों के अनुरोध पर, एक स्थानीय एनजीओ के सहयोग से 2014 में साप्ताहिक प्रारम्भिक हस्तक्षेप सेवाएँ शुरू की गई थीं, जो अभी भी जारी हैं। इन साप्ताहिक यात्राओं के माध्यम से हम गोलपारा और उसके पड़ोसी ज़िलों के साथ-साथ मेघालय के कुछ ज़िलों के 600 से अधिक बच्चों तक पहुँच चुके हैं।

पक्ष-समर्थन

शिशु सरोथी की विकलांगता क़ानून यूनिट — नॉर्थ ईस्ट (डिसेबिलिटी लॉ यूनिट — डीएलयू-एनई) जागरूकता बढ़ाने, क़ानूनी परामर्श, मुक़दमेबाज़ी और नीति को प्रभावित करने वाले कार्यक्रमों के माध्यम से विकलांगजनों के अधिकारों पर पक्ष-समर्थन, सक्रियता और क़ानूनी साक्षरता प्रदान करती है। विकलांगता क़ानून यूनिट सभी उत्तर पूर्वी राज्यों में, विकलांगजनों के अधिकार अधिनियम, 2016 के तहत विभिन्न हितधारकों— जिनमें विकलांग जन संगठन (डिसेबल्ड पीपल्स ऑर्गनाइज़ेशन — डीपीओ), नौकरशाह, न्यायतन्त्र भी शामिल हैं —के लिए जागरूकता और संवेदीकरण कार्यशालाओं या कार्यक्रमों से सम्बद्ध है। वर्तमान में हम समाज कल्याण विभाग, असम सरकार के साथ राज्य, अंचल एवं ज़िला स्तरों पर कार्यान्वयन भागीदार के रूप में विकलांगता और विकलांगजनों के अधिकार अधिनियम, 2016 पर जागरूकता पैदा करने के कार्यक्रम में शामिल हैं और साथ ही हम सूचना, शिक्षा और संचार (आईईसी) की सामग्री का विकास भी कर रहे हैं। यह पहल भारत में अपनी तरह की पहली योजना है।

शोध

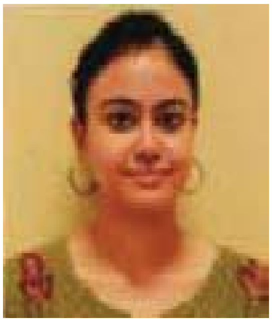
शिशु सरोथी ने हाल ही में विकलांगता के विभिन्न क्षेत्रों पर अलग-अलग आँकड़ों की अनुपलब्धता के कारण विकलांगजनों की स्थिति पर प्रमाण जुटाने के लिए समय-समय पर विकलांगता से सम्बन्धित मुद्दों पर शोध के क्षेत्र में अपना काम शुरू किया है। *शिशु सरोथी* ने असम के चिरांग और कोकराझार ज़िलों में सतत विकास लक्ष्यों (लैंगिक समानता, स्वच्छ जल व सफ़ाई व्यवस्था और सम्माननीय कार्य व आर्थिक विकास) के सन्दर्भ में विकलांग व्यक्तियों को ध्यान में रखकर विकलांगता के सतत विकास लक्ष्यों का एक ट्रैकर बनाने के लिए वॉलंटरी सर्विसेस ओवरसीज़ — वीएसओ के साथ सहयोग किया है।

इस प्रकार *शिशु सरोथी* की अब तक की यात्रा मिश्रित अनुभवों से भरपूर रही है। कई बाधाएँ आईं, लेकिन यह यात्रा

जारी है क्योंकि पेशेवरों की एक समर्पित टीम एक सामान्य लक्ष्य के लिए अथक प्रयास करने में जुटी है। यह संगठन एक ऐसे भविष्य की परिकल्पना करता है जहाँ का समाज विविधता का सम्मान करता हो, उसे सामाजिक महत्त्व देता हो और विकलांगजन हर तरह से दूसरों के साथ समरसता का जीवन जीते हों।



ममता घोष एक विशेष शिक्षिका हैं। वे 2006 से विकलांग और ग़ैर-विकलांग दोनों तरह के बच्चों के साथ काम कर रही हैं। कर्नाटक के बेंगलूरु की स्पैसिटिक सोसाइटी के साथ कुछ समय तक जुड़े रहने के बाद वे 2015 में *शिशु सरोथी* केन्द्र में सेंटर फॉर स्पेशल एजुकेशन के समन्वयक के रूप में शामिल हुईं। वर्तमान में वे आरएआईएसई–एनई (पूर्वोत्तर में समावेशी शिक्षा पर क्षेत्रीय कार्य) परियोजना में प्रमुख शिक्षक और समन्वयक हैं। उन्हें पढ़ने, लिखने और संगीत में रुचि है। उनसे mamta.ghosh@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।



नेहा दास *शिशु सरोथी*, गुवाहाटी, में शोध अधिकारी के रूप में कार्यरत हैं। उन्होंने सेंट स्टीफन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय से इतिहास में स्नातक की उपाधि प्राप्त की है। उन्होंने टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ़ सोशल साइंसेज, मुम्बई से चिल्ड्रन एण्ड फैमिलीज़ में विशेषज्ञता के साथ समाज कार्य में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। उन्हें बाल अधिकार, लिंग, गुणात्मक अनुसन्धान एवं विकलांगता के क्षेत्रों में चार साल का अनुभव है। उनसे dasneha8815@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

डिस्लेक्सिया और बहु-बुद्धिमत्ता के सिद्धान्त को समझना

मृदुला गोविन्दराजू

डिस्लेक्सिया अधिगम की सबसे आम अक्षमता है जो दस में से एक स्कूली बच्चे को होती है। वास्तव में यह संख्या अधिक भी हो सकती है, शायद 20 प्रतिशत तक, क्योंकि भारत के लिए कोई निश्चित सांख्यिकीय डेटा उपलब्ध नहीं है। अन्य अक्षमताओं के विपरीत डिस्लेक्सिया वाले बच्चों में कोई शारीरिक 'निशान' या अभिलक्षण नहीं होते। इसलिए यह एक *अदृश्य विकलांगता* है।

डिस्लेक्सिया से बच्चे की बुद्धि प्रभावित नहीं होती, लेकिन ऐसे बच्चों को अकसर 'आलसी, बेवकूफ, भोंदू' कह दिया जाता है और उन्हें स्कूल में दूसरे बच्चों की दादागिरी, माता-पिता के क्रोध और शिक्षकों के तिरस्कार का सामना करना पड़ता है। नतीजतन बच्चा कम आत्मसम्मान से ग्रस्त हो जाता है, ध्वंसात्मक व्यवहार करने लगता है और अपने से छोटे बच्चों को तंग करने लगता है।

डिस्लेक्सिया को *विशिष्ट अधिगम अक्षमता (स्पेसिफिक लर्निंग डिसेबिलिटी — एसएलडी)* भी कहा जाता। ये बच्चे औसत से लेकर उच्च औसत बुद्धि वाले होते हैं और अत्यधिक रचनात्मक होते हैं। अगर इन्हें समय पर सहायता न मिले तो हो सकता है कि वे स्कूल छोड़ दें और सामाजिक अपराधी बन जाएँ।

डिस्लेक्सिया क्या है?

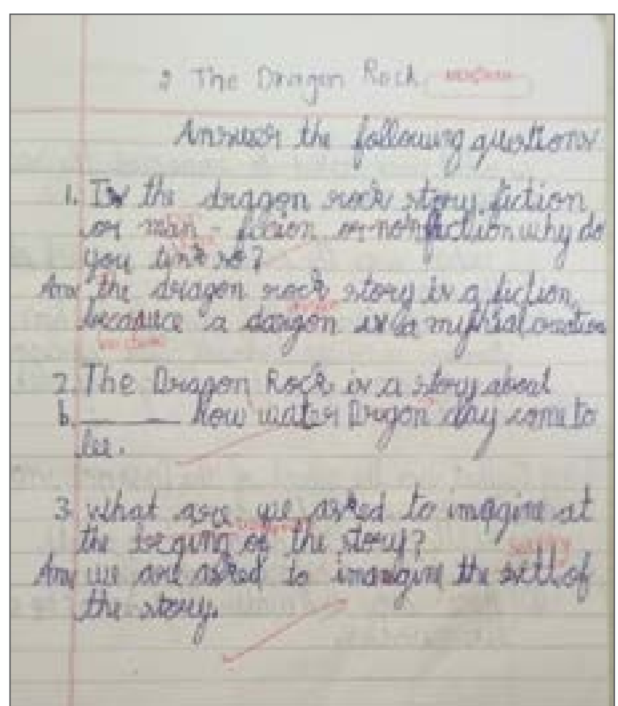
डिस्लेक्सिया कोई बीमारी नहीं है। यह तन्त्रिका सम्बन्धी एक स्थिति है जिसमें मस्तिष्क सूचनाओं को अलग तरह से संसाधित करता है। विकलांगजनों का अधिकार अधिनियम, 2016 के अनुसार (खण्ड 2 की धारा 2a, पृष्ठ 34), डिस्लेक्सिया या एसएलडी का अर्थ है, '... ऐसी अवस्थाओं का विषम समूह जिसमें बोली जाने वाली या लिखित भाषा के प्रसंस्करण की कमी होती है; इससे समझने, बोलने, पढ़ने, लिखने, वर्तनी या गणितीय गणना करने में कठिनाई होती है; साथ ही इसमें अवधारणात्मक अक्षमता, डिस्लेक्सिया, लेखन विकार (डिस्ग्राफिया), गणना अक्षमता (डिस्कैल्कुलिया), डिस्प्रैक्सिया और विकासात्मक वाचाघात (डेवलपमेंटल अफेसिया) जैसी अवस्थाएँ भी आ जाती हैं।'

'डिस्लेक्सिया मस्तिष्क आधारित अधिगम अक्षमता है जो विशेष रूप से किसी व्यक्ति की पढ़ने की क्षमता को बाधित करती है। सामान्य बुद्धि होने के बावजूद भी यह लोग आमतौर पर अपेक्षित स्तर से काफ़ी कम स्तर पर पढ़ते हैं' (नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ न्यूरोलॉजिकल डिसऑर्डर एण्ड स्ट्रोक)।

डिस्लेक्सिया के लक्षण

डिस्लेक्सिया के लक्षण हर व्यक्ति के लिए विशिष्ट होते हैं, अर्थात, डिस्लेक्सिया वाले किन्हीं भी दो व्यक्तियों में एक जैसे लक्षण नहीं होते, लेकिन कुछ लक्षण ऐसे हैं जो सभी के लिए सामान्य हैं।

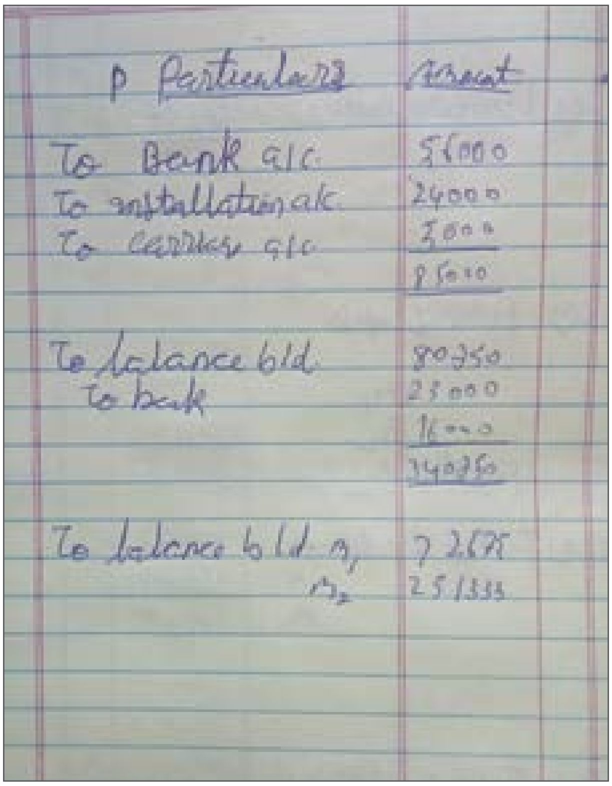
- ध्वनियों के प्रसंस्करण की समस्या — pot की बजाय pet
- स्पेलिंग न बता पाना — powder की बजाय powdr
- अक्षरों को उलटा पढ़ना; अक्षरों के क्रम में भ्रम — b और d, form-from
- लम्बे शब्द पढ़ने में परेशानी
- शब्दों को छोड़ना या ग़लत पढ़ना — playing के लिए play, earth के लिए every
- कक्षा कार्य पूरा करने में असमर्थता
- श्यामपट्ट से नक़ल करने में कठिनाई

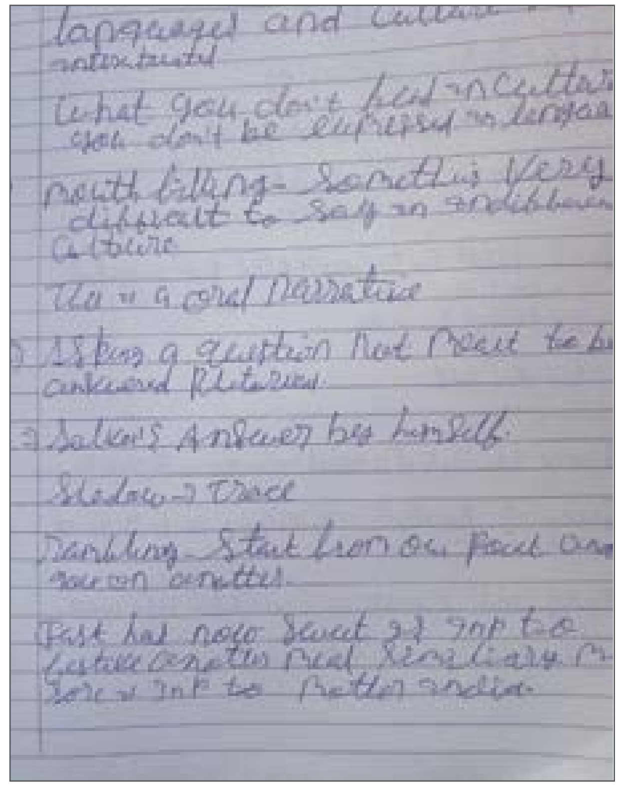


- संख्या को उलटे क्रम में पढ़ना; स्थानीय मान की जानकारी न होना
- समय का अच्छा बोध न होना
- नियोजन, प्राथमिकता देने और व्यवस्थापन में कठिनाई

पाँचवीं कक्षा के डिस्लेक्सिया वाले एक विद्यार्थी के अँग्रेज़ी के कक्षा कार्य के कुछ नमूने पिछले पेज पर दिए गए चित्र में ग़लत स्पेलिंग वाले शब्द हैं : causes, town, folk, dragon, expect, wall

ग्यारहवीं कक्षा के डिस्लेक्सिया वाले एक विद्यार्थी का हिसाब-किताब; और अँग्रेज़ी का कक्षा कार्य।





डिस्लेक्सिया वाले बच्चों का उपचार करना

छुटपन में ही पहचान करें

यह सबसे अच्छा उपाय है। जब निम्न प्राथमिक कक्षाओं में ही इस बात की पहचान हो जाए कि बच्चों को सीखने में कठिनाई हो रही है और जब उन्हें उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप उपचारात्मक सहायता दे दी जाए तो वे न केवल अकादमिक सफलता प्राप्त करते हैं, बल्कि सामाजिक रूप से भी अच्छी तरह से समायोजित हो जाते हैं।

डिस्लेक्सिया के उपचार के तरीक़ों में शिक्षकों को प्रशिक्षित करें

प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों को डिस्लेक्सिया वाले बच्चों की पहचान करने और उन्हें कक्षा में उपचारात्मक तरीक़े से पढ़ाने के लिए तैयार करना चाहिए। मद्रास डिस्लेक्सिया एसोसिएशन (एमडीए)[1] सरकारी और निजी, दोनों प्रकार के स्कूलों में शिक्षकों के लिए शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है। एमडीए द्वारा स्कूलों में संसाधन कक्ष भी स्थापित किए जाते हैं ताकि बच्चों का स्कूल परिसर में ही उपचार किया जा सके।

विशेषज्ञों द्वारा मूल्यांकन करवाएँ

मानकीकृत उपकरणों का उपयोग करके जो आकलन किए जाते हैं, वे किसी व्यक्ति में डिस्लेक्सिया की उपस्थिति की पुष्टि करते हैं। इससे बच्चे की देखभाल करने वालों को बच्चे की ताक़त और ज़रूरतों का पता लगाने में मदद मिलती है, जिससे वे कठिनाइयों से निपटने में बच्चे की मदद करने के लिए हस्तक्षेप की योजना बना पाते हैं। सभी परीक्षा बोर्ड एसएलडी वाले बच्चों को विभिन्न रियायतें देते हैं। आकलन से पता चल जाता है कि बच्चे को किस प्रकार की एसएलडी है, उदाहरण के लिए डिस्लेक्सिया, डिस्प्रैक्सिया, गणना अक्षमता, लेखन विकार आदि। साथ ही इससे विकलांगता की गम्भीरता और एसएलडी के साथ मौजूद सह-अस्वस्थताओं जैसे ध्यानाभाव एवं अतिसक्रियता विकार (अटेंशन डेफिसिट हाइपरएक्टिविटी डिसऑर्डर — एडीएचडी) के बारे में भी पता चल जाता है। इसके बाद आवश्यक उपचार और अन्य थेरेपी के बारे में स्थिति स्पष्ट हो पाती है, उदाहरण के लिए स्पीच थेरेपी और/या व्यावसायिक थेरेपी (ऑक्यूपेशनल थेरेपी — ओटी)।

उपचारात्मक हस्तक्षेप क्या है?

- यह सुव्यवस्थित होता है
- यह बच्चे की ताक़त और ज़रूरतों की पहचान करता है
- इसे व्यक्तिगत रूप से किया जाता है
- यह बहुसंवेदी है

डिस्प्रैक्सिया, गणना अक्षमता (डिस्कैल्कुलिया) व लेखन विकार (डिस्ग्राफिया)

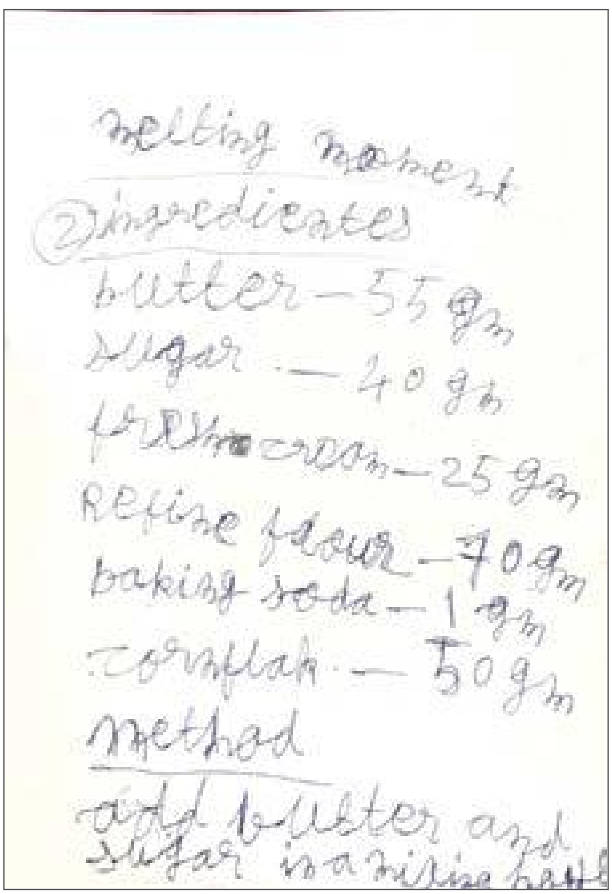
डिस्प्रैक्सिया

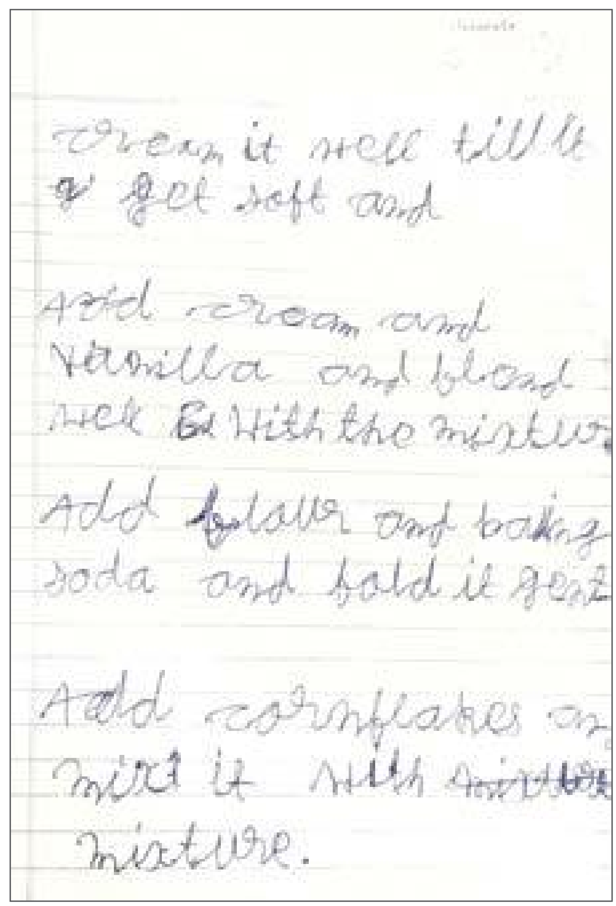
विकासात्मक डिस्प्रैक्सिया एक विकार है जिसमें संवेदी और मोटर सम्बन्धी कार्यों के नियोजन और कार्यान्वयन की अक्षमता होती है (स्रोत : नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ न्यूरोलॉजिकल डिसऑर्डर एण्ड स्ट्रोक)। जिन बच्चों को डिस्प्रैक्सिया है, उन्हें व्यावसायिक थेरेपी और विशेष शिक्षा की आवश्यकता होती है।

डिस्प्रैक्सिया के लक्षण

- कमज़ोर सन्तुलन और समन्वय — उलझकर गिरना, आसानी से गिरना, लोगों और वस्तुओं से टकरा जाना, दाएँ-बाएँ के समन्वय को लेकर समस्याएँ होना।
- अदक्षता — चीज़ों को गिराना, हाथ की पकड़ का मज़बूत न होना, ख़राब लिखावट।
- बोध सम्बन्धी कठिनाइयाँ — नक्शों को नहीं पढ़ पाना, सड़क पार करने में कठिनाई।
- भावनात्मक और व्यवहार सम्बन्धी समस्याएँ।
- पढ़ने, लिखने और बोलने में कठिनाई।
- कमज़ोर सामाजिक कौशल, शारीरिक भंगिमा और स्मृति।

दसवीं कक्षा के डिस्प्रैक्सिया और डिस्लेक्सिया वाले एक विद्यार्थी का बेकिंग और कन्फेक्शनरी कक्षा कार्य।


melting moment
2 ingredientes
butter—55 gm
sugar — 40 gm
fresh cream—25 gm
Refine flour—70 gm
baking soda—1 gm
cornflak — 50 gm
method
add butter and
sugar is a mixing bowl


Cream it well till it
get soft and
Add cream and
vanilla and blend
well with the mixture
Add flour and baking
soda and fold it gent
Add cornflakes and
mix it with mixture
mixture.

गणना अक्षमता (डिस्कैल्कुलिया)

गणना अक्षमता एक विकार है जिसमें संख्याओं के अर्थ को समझने और सवालों को हल करने के लिए गणितीय सिद्धान्तों को लागू करने में असमर्थता होती है (स्रोत : ब्रिटिश डिस्लेक्सिया एसोसिएशन)।

गणना अक्षमता के लक्षण

क. यह समझने में असमर्थता कि दो अंकों में से कौन-सा अंक बड़ा है।

ख. गिनती करने की प्रभावी रणनीतियों का अभाव।

ग. अबाध रूप से संख्या की पहचान न कर पाना।

घ. एक अंकीय सरल संख्याओं को दिमाग़ी तौर से जोड़ने में असमर्थता।

ङ. कार्यशील स्मरण क्षमता का सीमित होना।

दसवीं कक्षा के गणना अक्षमता और डिस्लेक्सिया वाले एक विद्यार्थी द्वारा किया गया गुणा।



लेखन विकार (डिसग्राफिया)

लेखन विकार तंत्रिका सम्बन्धी एक विकार है जिसमें लेखन सम्बन्धी अक्षमता होती है। विशेष रूप से यह विकार व्यक्ति के लेखन को विकृत या ग़लत बनाता है। बच्चों में यह विकार आमतौर पर तब सामने आता है जब उन्हें पहली बार लेखन से परिचित कराया जाता है। पूरी तरह से निर्देश दिए जाने के बावजूद वे अक्षरों को अनुचित आकार और फ़ासले के साथ बनाते हैं अथवा ग़लत शब्द या ग़लत स्पेलिंग लिखते हैं। ऐसे विकार वाले बच्चों में अधिगम की अन्य अक्षमताएँ भी हो सकती हैं; लेकिन उनको आमतौर पर कोई सामाजिक या अन्य अकादमिक समस्याएँ नहीं होती हैं (स्रोत: नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ न्यूरोलॉजिकल डिसऑडर्स एण्ड स्ट्रोक)।

जब किसी बच्चे को आकलन के लिए भेजा जाता है तो क्या होता है?

ये आकलन वैज्ञानिक रूप से तैयार किए गए परीक्षण/उपकरण हैं जिनका उपयोग विशेषज्ञ यह पता लगाने के लिए करते हैं कि बच्चे को किस तरह की एसएलडी है। उनके द्वारा दी गई रिपोर्ट से विशेष शिक्षक बच्चे के लिए एक व्यक्तिगत शैक्षिक योजना (इंडिविजुअल एजुकेशनल प्लान — आईईपी) तैयार कर सकते हैं। रिपोर्ट से यह भी पता चलता है कि बच्चे को स्पीच थेरेपी या व्यावसायिक थेरेपी की आवश्यकता है या नहीं।

स्कूल, माता-पिता, विशेष शिक्षक की तिकड़ी का महत्त्व

एसएलडी वाले बच्चों के साथ काम करने के शोध और अनुभव से पता चला है कि जब इन बच्चों को स्कूल, माता-पिता और विशेष शिक्षक से मज़बूत समर्थन प्राप्त होता है तो वे अकादमिक और सामाजिक जीवन में सफलता प्राप्त करते हैं। जब यह तीनों समूह मिलकर आपसी सहयोग के साथ काम करते हैं तो बच्चे ऐसा पेशा या करियर चुनने में सफल हो पाते हैं जहाँ वे उत्कृष्टता प्राप्त करते हैं। साथ ही वे ऐसे वयस्क के रूप में विकसित होते हैं जो समाज के लिए महत्त्वपूर्ण योगदानकर्ता बनते हैं।

एसएलडी वाले बच्चों के माता-पिता का परामर्शन

किसी भी माता-पिता को जब पहली बार पता चलता है कि उनके बच्चे में अधिगम की अक्षमता है तो उन्हें गहरा धक्का लगता है। प्रारम्भ में वे इसे मानने को तैयार नहीं होते लेकिन धीरे-धीरे इस सच्चाई को स्वीकार करने लगते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि माता-पिता में से कोई एक सहयोग करता है (उदाहरण के लिए माता) जबकि दूसरा (उदाहरण के लिए पिता) इससे बिलकुल असहमत होता है। स्कूल शिक्षक, विशेष शिक्षक और प्रधान शिक्षक के लिए यह ज़रूरी हो जाता है कि वे बार-बार माता-पिता को परामर्श दें ताकि उनके बच्चे को उपचारात्मक हस्तक्षेप का पूरा लाभ मिल सके।

बहु-बुद्धिमत्ता सिद्धान्त

एसएलडी वाले बच्चों को पढ़ाने के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण साधन है और हॉवर्ड गार्डनर के मल्टीपल इंटेलिजेंस (एमआई) सिद्धान्त पर आधारित है। परम्परा के अनुसार बुद्धि को बुद्धिलब्धि (आईक्यू) द्वारा मापा जाता है जिसमें किसी व्यक्ति की भाषा (भाषाई) और गणितीय (तार्किक-गणितीय) क्षमताओं की दक्षता का परीक्षण किया जाता है। लेकिन जब क्षमता के केवल इन दो क्षेत्रों का उपयोग करके किसी बच्चे का परीक्षण किया जाता है, जैसा कि भारत के स्कूलों में सामान्यतया होता है, तो हम एक सामान्य कक्षा में अन्य बच्चों के साथ अन्याय करते हैं। क्योंकि व्यक्ति अलग-अलग क्षमताओं का उपयोग करके अलग-अलग तरह से सीखते हैं। जिन बच्चों को भाषा (भाषाई) और गणित (तार्किक-गणितीय) में कठिनाई होती है, वे सीखने से चूक जाते हैं। इसके अलावा, यदि कक्षा में सभी बच्चे एक समान रूप से सीखने की क्षमता हासिल कर रहे हैं, तो जो टैस्ट और परीक्षाएँ वे लिखते हैं, उनके परिणाम भी समान होने चाहिए। लेकिन ऐसा होता नहीं है। अधिगम

हर व्यक्ति के लिए विशिष्ट होता है। इसलिए शिक्षण और आकलन को कक्षा में अधिगम की विविधताओं का ध्यान रखना चाहिए।

चूँकि व्यावहारिक रूप से ऐसी शिक्षण विधियों को विकसित करना मुश्किल है जो किसी सामान्य कक्षा में बच्चे की व्यक्तिगत ज़रूरतों को पूरा करती हों, इसलिए एमआई सिद्धान्त का उपयोग करके इस समस्या को हल किया जा सकता है। इसके उपयोग से किसी भी पाठ को विभिन्न तरीक़ों से पढ़ाया जा सकता है ताकि कक्षा में अधिक से अधिक बच्चे उसे समझ सकें। यह समस्या को समझने और उसका समाधान प्राप्त करने के कई परिप्रेक्ष्यों को बढ़ावा देता है। एमआई पद्धति से विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोण उत्पन्न होते हैं तथा समूह कार्य व अपने साथियों से सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिलता है।

एमआई क्या है?

हावर्ड गार्डनर के अनुसार आठ 'संकेत' ऐसे हैं जो बुद्धिमत्ता को दर्शाते हैं। व्यापक शोध के बाद गार्डनर ने आठ अलग-अलग प्रकार की बुद्धिमत्ताओं की पहचान की (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।

स्थानिक बुद्धिमत्ता

- 'बड़े पैमाने पर स्थानिक सरणियों (उदाहरण के लिए हवाईजहाज़ के पाइलट, नाविक) या स्थान के अधिक स्थानीय रूपों (उदाहरण वास्तुकार, शतरंज के खिलाड़ी) की संकल्पना करना और उनका कुशलतापूर्वक प्रयोग करने की क्षमता' (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- अच्छी तरह से कल्पना कर पाना, दिशाओं का अच्छा ज्ञान होना, रंग, रूप, आकृति, आकार और उनके सम्बन्धों के बीच अन्तर कर सकना।
- यह क्षमता वास्तुकारों, कलाकारों, चित्रकारों, शतरंज के खिलाड़ियों, नाविकों, शिकारियों, गाइड और खगोलविदों में देखी जाती है।

दैहिक-गतिसंवेदी बुद्धिमत्ता

- 'समस्याओं को सुलझाने या उत्पादों को बनाने के लिए अपने पूरे शरीर या शरीर के कुछ हिस्सों (जैसे हाथों या मुँह) का उपयोग करने की क्षमता' (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- अच्छा समन्वय, सन्तुलन, निपुणता, मनोहरता, लचीलापन, शरीर की हरकतों व क्रियाओं में गति।
- यह क्षमता खिलाड़ियों, नर्तक-नर्तकियों, मूर्तिकारों, शल्य चिकित्सकों और मार्शल आर्ट के अभ्यासियों में देखी जाती है।

संगीत सम्बन्धी बुद्धिमत्ता

- 'लय, स्वर, छन्द, तान, स्वर माधुर्य और स्वर विशेषता के प्रति संवेदनशीलता। यह गायन, वाद्ययन्त्र बजाने और/या संगीत रचना करने की क्षमता को बढ़ा सकती है' (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- इस बुद्धिमत्ता वाले लोग संगीत प्रेमी होते हैं, संगीत के रूपों में अन्तर कर सकते हैं और उसे आँक सकते हैं, संगीत की रचना कर सकते हैं, वाद्ययन्त्र बजा सकते हैं, गा सकते हैं।
- यह क्षमता संगीतकारों, संगीत के रचनाकारों और वादकों में देखी जाती है।

भाषाई बुद्धिमत्ता

- 'शब्दों के अर्थ, शब्दों के बीच के क्रम और शब्दों की ध्वनि, लय, विभक्ति और छन्द के बारे में संवेदनशीलता' (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- बोलने या लिखने में शब्दों को प्रभावी ढंग से नियोजित करना, पढ़ने और वर्गपहेलियों में रुचि होना।
- यह क्षमता पत्रकारों, लेखकों और कहानीकारों में देखी जाती है।

तार्किक-गणितीय बुद्धिमत्ता

- 'संक्रियाओं या प्रतीकों के बीच तार्किक सम्बन्धों का अवधारण करने की क्षमता (उदाहरण के लिए गणितज्ञ, वैज्ञानिक)' (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- छाँटने और क्रमबद्ध करने में सक्षम (विभिन्न श्रेणियों में) होना, गणितीय कथनों, प्रतिज्ञप्तियों, संक्रियाओं और जटिल प्रतिज्ञप्तियों को समझना, सम्बन्धित अमूर्तन करने में सक्षम होना।
- यह क्षमता सांख्यिकीविदों, गणितज्ञों, कम्प्यूटर प्रोग्रामर तथा वैज्ञानिकों में देखी जाती है।

अन्तर्वैयक्तिक बुद्धिमत्ता

- दूसरों के साथ प्रभावी ढंग से बातचीत करने की क्षमता। दूसरों के मूड, भावनाओं, स्वभाव और प्रेरणा के प्रति संवेदनशीलता (जैसे मध्यस्थता करने वाले लोग)। (कभी-कभी इसे सामाजिक बुद्धिमत्ता भी कहा जाता है।) (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- समानुभूति और सामाजिक कौशल होना, कई व्यक्तिगत संकेतों के बीच अन्तर कर सकना, उनके लिए प्रभावी ढंग से अनुक्रिया कर पाना, लोगों को सकारात्मक कार्यों के लिए प्रेरित करना और नकारात्मक भावनाओं पर विजय पाना।

- यह क्षमता सामाजिक कार्यकर्ताओं, परामर्शदाताओं, राजनेताओं, आस्था चिकित्सकों, प्रभावी माता-पिता और शिक्षकों में देखी जाती है।

अन्तःवैयक्तिक बुद्धिमत्ता

- ‘अपनी स्वयं की भावनाओं, लक्ष्यों और चिन्ताओं के प्रति संवेदनशीलता और अपने स्वयं के लक्षणों के अनुसार योजना बनाने और कार्य करने की क्षमता। अन्तःवैयक्तिक बुद्धिमत्ता किसी ख़ास पेशे के लिए विशेष नहीं है; बल्कि यह तो जटिल आधुनिक समाज के प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक लक्ष्य है, जहाँ उसे अपने लिए परिणामी निर्णय लेने होते हैं।’ (कभी-कभी इसे आत्मबुद्धि भी कहा जाता है।) (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- स्वयं को समझने और अनुकूल रूप से कार्य करने की क्षमता का एक ईमानदार, सटीक वर्णन (ताक़त और कमज़ोरियों के साथ); अपनी आन्तरिक मनोदशाओं और इच्छाओं और स्वस्थ आत्मसम्मान के बारे में जागरूकता।
- यह क्षमता दार्शनिकों, प्रभावी माता-पिता और शिक्षकों में देखी जाती है।

प्रकृतिवादी बुद्धिमत्ता

- प्रकृति की दुनिया में परिणामी भेद करने की क्षमता, उदाहरण के लिए, एक पौधे और दूसरे के बीच या एक बादल और दूसरे बादल के निर्माण के बीच (उदाहरण के लिए टेक्सोनोमिस्ट)। (कभी-कभी इसे प्रकृति बुद्धिमता भी कहा जाता है।) (स्रोत : कॉम्पोनेंट्स ऑफ़ एमआई)।
- पौधों और पशुओं में गहरी रुचि होना, प्रकृति के बारे में पता लगाना, पर्यावरण का प्रभावी ढंग से उपयोग करना।
- यह क्षमता किसानों, वनस्पति वैज्ञानिकों, पशु चिकित्सकों और आयुर्वेदिक चिकित्सकों में देखी जाती है।

डिस्लेक्सिया और एमआई

ऐसा देखा गया है कि एसएलडी वाले बच्चों में, आमतौर पर, एक या दो बुद्धिमत्ताओं की अनूठी क्षमता होती है। जब उस क्षमता का उपयोग किया जाता है तो बच्चे अकादमिक और सामाजिक रूप से अच्छा प्रदर्शन करते हैं। उदाहरण के लिए, यदि किसी बच्चे में दैहिक-गतिसंवेदी बुद्धिमत्ता प्रबल है तो वह अपने शरीर और उसके अंगों का उपयोग करके प्रभावी ढंग से सीखेगा। ऐसे बच्चे अपना पाठ सीखने के लिए अपने हाथों से चीज़ें बना सकते हैं और उन्हें आकार दे सकते हैं। एसएलडी वाले बच्चों को अपनी प्रधान बुद्धिमत्ता का प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि उन क्षेत्रों में वे असाधारण रूप से अच्छा कार्य करेंगे।

डिस्लेक्सिया और प्रौद्योगिकी

एमडीए ने डिस्लेक्सिया वाले बच्चों की सहायता के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करने में निवेश किया है। उन्होंने अत्याधुनिक तकनीक का उपयोग करते हुए इन्वेंशन लैब, जो आईआईटी मद्रास एलुमनी का एक उपक्रम है, के साथ मिलकर *एमडीए आवाज़ रीडर ऐप* विकसित किया है। अधिगम की अक्षमताओं वाले पाठक के लिए यह एक सहायक रीडिंग ऐप है। ऐप अत्याधुनिक तकनीक का उपयोग करता है और काफ़ी हद तक ऑफ़लाइन काम करता है। यह ऐप्पल डिवाइस और सरलतम एंड्रॉइड डिवाइस के लिए, टैबलेट या मोबाइल फोन में उपयोग के लिए उपलब्ध है, अतः काफ़ी सस्ता भी है। यह ऐप चित्र के रूप में कैप्चर किए गए मूलपाठ को पठनीय प्रारूप में बदलने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग करता है और इसका उपयोग किसी भी मुद्रित सामग्री को पढ़ने के लिए किया जा सकता है, जैसे कि समाचार पत्र, पाठ्यपुस्तकें और कहानी की पुस्तकें।

एमडीए आवाज़ रीडर ऐप पाठक केन्द्रित है और पाठक की ज़रूरतों के अनुरूप ‘अनुकूलन’ सेटिंग्स प्रदान करता है। यह एसएलडी वाले बच्चों में स्वतंत्र पठन कौशल विकसित करने के लिए बहुसंवेदी रणनीति भी प्रदान करता है। इसका उद्देश्य डिस्लेक्सिया वाले बच्चे को निरन्तर सहायता प्रदान करना है, यहाँ तक कि सहायक शिक्षक की अनुपस्थिति में यह उसकी भूमिका भी निभाता है।

ऐप में पाठक को प्रदान की जाने वाली मुख्य सहायता कुछ इस प्रकार हैं :

- पढ़े जाने वाले पाठ के विभिन्न दृश्यों (विज़ुअल) की उपस्थिति का विकल्प।
- पाठक का ध्यान आवश्यक पंक्ति पर रखने के लिए पाठ की एक विशिष्ट पंक्ति पर विंडो-फोकस और मूलपाठ का पंक्ति दर पंक्ति डिस्प्ले।
- मूलपाठ को ट्रैक करने के लिए पेंसिल टूल।
- एक परिचित लहजे में और ज़रूरत के अनुरूप गति के साथ मूलपाठ का सस्वर वाचन।
- किसी कठिन शब्द को पढ़ने के लिए आवश्यकतानुसार उपयुक्त चित्र संकेत, ऑडियो उच्चारण, शब्द परिवार और अक्षर विभाजन।
- समझ बढ़ाने के लिए वाक्य सहायता देना।

एमडीए और प्रशिक्षण

एसएलडी वाले बच्चों की मदद करने की अपनी यात्रा में, एमडीए ने अपने प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक को सशक्त बनाना जारी रखा है। तमिलनाडु राज्य सरकार के सहयोग से, एमडीए सरकारी प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों को एसएलडी के प्रति संवेदनशील बनाकर, पहचान किट प्रदान कर रहा है जिसे शिक्षक अपनी कक्षाओं में लागू कर सकते हैं और फिर उपचारात्मक तकनीकों तथा शिक्षण पद्धतियों का प्रयोग कर सकते हैं। ई-शिक्षणम प्राथमिक विद्यालय के लिए एक उपचारात्मक सामग्री है जो ऑनलाइन मुफ्त उपलब्ध है।

एमडीए स्कूलों में संसाधन कक्षों (रिसोर्स रूम) की स्थापना भी करता है, जहाँ एमडीए के विशेषज्ञ एक वर्ष की न्यूनतम अवधि के लिए स्कूल में विशेष शिक्षा प्रदान करते हैं। यह प्रयास उस बच्चे के लिए फ़ायदेमन्द है, जिसका उपचार स्कूल परिसर के भीतर ही किया जाना है।

जीवन भर के लिए डिस्लेक्सिया का प्रबन्धन

डिस्लेक्सिया कोई बीमारी नहीं है, यह तो तंत्रिका सम्बन्धी एक स्थिति है, जो जीवन भर रहेगी। जब निम्न प्राथमिक कक्षाओं में ही बच्चों का उपचार कर दिया जाता है तो वे स्थितियों का सामना करना सीखते हैं। इससे उन्हें पहले तो अपने स्कूल और कॉलेज के जीवन और बाद में अपने करियर, रिश्तों और दैनिक जीवन की अन्य गतिविधियों का मार्ग निर्देशन करने में मदद मिलती है। ऐसा व्यक्ति जिस समाज में रहता है, वह उसका गौरवान्वित और उसमें योगदान करने वाला सदस्य बन जाता है।

[1] मद्रास डिस्लेक्सिया एसोसिएशन (एमडीए) की स्थापना 1991 में माता-पिता और शिक्षकों के एक समूह द्वारा की गई थी, जो उस समय डिस्लेक्सिया वाले बच्चों की मदद करना चाहते थे जब यह शब्द बहुत सुपरिचित नहीं था।



मृदुला गोविन्दराजू अँग्रेज़ी साहित्य में एमए हैं और एक प्रशिक्षित कॉपी-एडिटर हैं। उन्होंने दस साल से अधिक समय तक प्रकाशन उद्योग में काम किया है और प्राथमिक स्कूल के बच्चों के लिए स्कूल की पाठ्यपुस्तकों का सम्पादन करने के साथ-साथ उन्हें डिज़ाइन भी किया है। उन्होंने ऑनलाइन प्रशिक्षण कोर्स सम्पादित किए हैं और प्रबन्धकीय प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए सामग्री बनाई है। मृदुला ऑनलाइन सेल्फ-लर्निंग ट्यूटोरियल के लिए स्टोरीबोर्ड और स्क्रिप्ट भी लिखती हैं। उन्होंने अधिगम की भिन्नताओं वाले बच्चों को पढ़ाया भी है। वर्तमान में वे एमडीए न्यूज़लैटर का सम्पादन करती हैं। उनसे govindaraju.mrudula@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

विकलांगता को विविधता के रूप में देखना

प्रणाली शर्मा

'...अयान[i] के पैदा होने के बाद मुझे बहुत मानसिक यातनाएँ सहनी पड़ीं। जब वह पैदा हुआ था तब उसे एस्फिक्सिया था। डॉक्टर ने मुझे बताया कि अयान जैसे-जैसे बड़ा होगा, वैसे-वैसे उसे विकास सम्बन्धी कुछ समस्याएँ होंगी। मैं इस स्थिति के लिए डॉक्टर को दोषी मानती हूँ। मैं उस समय अपने पति और सास-ससुर के साथ रहती थी। उन्होंने अयान को स्वीकार नहीं किया और उसे अपने दादा-दादी के प्यार और देखरेख से वंचित होना पड़ा। अयान की भलाई के लिए मुझे वह घर छोड़ना पड़ा और मैं अपने बच्चे और पति के साथ मेरे माता-पिता के घर रहने के लिए आ गई। मेरे पति एक कम्पनी में काम करते हैं, जहाँ नियमित रूप से पार्टियाँ होती हैं। हर बार मैं अयान को अपने साथ ले जाती लेकिन दूसरे अभिभावक अपने बच्चों को उससे दूर ही रखते। कुछ समय तक तो मैंने यह सब सहन किया, फिर मैंने इन पार्टियों में जाना बन्द कर दिया। अपने बच्चे को सामाजिक उपेक्षा और अलगाव से बचाने के लिए मैं भी अब कुछ असामाजिक हो गई हूँ...।'

यह आठ साल के अयान की केस स्टडी[ii] का एक अंश है, जिसे विकासात्मक विलम्ब की समस्या थी और जो 2012 में दिल्ली के राजकुमारी अमृत कौर (आरएके) चाइल्ड स्टडी सेंटर नामक एक समावेशी पूर्व-स्कूल में पढ़ रहा था। इस स्कूल में आने से पहले अयान ने दो अन्य स्कूलों में पढ़ाई की थी। दोनों स्कूलों के शिक्षकों ने अयान की माँ से कहा कि वे उसे स्कूल से निकाल लें क्योंकि अयान उनके स्कूल के लिए 'अनुपयुक्त' है। 2012 तक अयान ने आरएके चाइल्ड स्टडी सेंटर में तीन साल पूरे कर लिए थे। उसकी माँ ने बताया कि वह वहाँ बहुत ख़ुशी-ख़ुशी अपना समय बिता रहा था।

आरएके चाइल्ड स्टडी सेंटर के बाद के उसके भविष्य को लेकर माँ काफ़ी चिन्तित थीं। अयान आठ साल का हो चुका था। अगले साल उसे किसी औपचारिक स्कूल में प्रवेश लेना था। दुर्भाग्य की बात है कि उसकी माँ जिस भी स्कूल में गईं, वहाँ उसे प्रवेश नहीं दिया गया। वे बहुत असमंजस में थीं और काफ़ी तनाव में भी कि वे उसके लिए ऐसा स्थान कहाँ ढूँढ़ें जहाँ उसे स्वीकार करने वाला वातावरण हो। ज़ाहिर है, स्कूल केवल उन विकलांग बच्चों को चाहते थे जो अन्य बच्चों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकें।

विकलांगता क्या है?

इंटरनेशनल क्लासिफिकेशन ऑफ़ फंक्शनिंग के अनुसार विकलांगता (या स्वास्थ्य विकलांगता) एक ऐसा शब्द है जिसमें सभी प्रकार की दुर्बलताओं, गतिविधि की सीमाओं और भागीदारी की प्रतिबन्धता के साथ-साथ पर्यावरणीय कारक भी शामिल हैं। कुछ सीमाओं या किसी प्रकार की दुर्बलता के साथ पैदा होने वाले बच्चे को 'विकलांग' कहा जाता है— वह जो कि अधिकांश लोगों की तरह कार्य करने में असमर्थ है। विकलांगता वाले बच्चे के साथ रहने से परिवार और उसके कामकाज पर गहरा असर पड़ सकता है। उपर्युक्त अंश से पता चलता है कि विकलांगता वाले बच्चे और उसके परिवार को भेदभाव तथा अपमान का सामना करना पड़ता है। हालाँकि अधिकांश परिवार बच्चे और विकलांगता को जल्दी स्वीकार कर लेते हैं लेकिन उन्हें विकलांग बच्चे को बड़ा करने से जुड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है (बेनेट, डेलुका और एलन, 1995)। जब हम विकलांग बच्चों से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों के बारे में सोचते हैं तो हम विकलांगता के कारण परिवार पर पड़ने वाले निरन्तर और विस्तृत प्रभावों पर ध्यान नहीं देते हैं। जैसा कि हमने देखा उपर्युक्त मामले में अयान की माँ को अपने बच्चे की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए शारीरिक और भावनात्मक रूप से संघर्ष करना पड़ा।

इन परिवारों को कई तरह की कीमत चुकानी पड़ती है जैसे कि विभिन्न स्वास्थ्य पेशेवरों से मिलना, बच्चों की देखभाल से सम्बन्धित सेवाओं की कमी के कारण माता-पिता के काम करने की क्षमता का प्रभावित होना, जीवन कौशल के प्रभावी प्रशिक्षण या शिक्षा की कमी आदि।

विकलांगता के सामाजिक मॉडल के अनुसार, मात्र असमर्थता बच्चे को अक्षम नहीं बनाती है, बल्कि असमर्थता से विकलांगता का निर्माण करने में पर्यावरण की बड़ी भूमिका होती है। जीवन की नियमित गतिविधियों में भाग लेने की किसी व्यक्ति की अक्षमता व्यक्ति के शरीर और उस वातावरण के बीच आदान-प्रदान के कारण उत्पन्न होती है, जहाँ वह व्यक्ति रहता है।

'...मैं कभी-कभी सोचती हूँ कि अयान को लेकर किसी छोटे शहर या गाँव में रहने चली जाऊँ। वहाँ के लोग अपनी अज्ञानता या अपरिचितता के कारण कम से कम संवेदनशील

और स्वीकार करने वाले तो हैं। वहाँ कम से कम अयान के दोस्त तो बनेंगे। हो सकता है कि दूरदराज़ गाँवों के लोग उसे नासमझ कहकर पुकारें, लेकिन वे उसे शहरी लोगों की तरह पराया तो नहीं करेंगे...'

हाशियाकरण की प्रवृत्ति के कारण अधिकांश विकलांग बच्चों की संस्थागत देखभाल करने की बजाय उन्हें घर पर ही बड़ा किया जा रहा है (एपलबी, 2014)। क्या विकलांगता एक धारणा है? लोग विकलांगता को कैसे देखते हैं? इसी तरह के और भी सवाल तब उठते हैं जब हम एक ग़ैर-विकलांग व्यक्ति के दृष्टिकोण से विकलांगता के पूरे मुद्दे की खोजबीन करने की कोशिश करते हैं। विकलांगता आमतौर पर भय, जिज्ञासा, चिन्ता आदि भावनाओं को जगाती है। हममें से कई लोग आमतौर पर यह तय नहीं कर पाते कि किसी विकलांग व्यक्ति के साथ कैसा व्यवहार किया जाए। उदाहरण के लिए अगर हम किसी ऐसे दृष्टि बाधित बच्चे को देखते हैं जो किसी निर्दिष्ट स्थान तक पहुँचने की कोशिश कर रहा है तो हमें क्या करना चाहिए? क्या हमें बच्चे की मदद करके उसका ध्यान रखना चाहिए या क्या हमें विकलांगता को अनदेखा करना चाहिए? क्या परवाह करने की भावना को ग़लत समझा जाएगा? क्या मदद करने की कोशिश करके या विकलांगता के मौजूद न होने का अभिनय करके हम बच्चे को हाशिए पर डाल रहे हैं? जब हम किसी विकलांग बच्चे को देखते हैं और उसकी सहायता करते हैं तो यह संकेत देते हैं कि हम श्रेष्ठ हैं, जिसके फलस्वरूप विकलांग बच्चे के साथ भेदभाव होता है। अनजाने में हम विकलांग व्यक्तियों को बाक़ी की तुलना में कमतर मानते हैं।

विकलांगता और सामाजिक पूर्वाग्रह

एक नवजात शिशु को हमेशा भगवान के उपहार के रूप में देखा जाता है जिसे वयस्कों द्वारा निरन्तर देखभाल की आवश्यकता होती है। अगर कोई बच्चा किसी प्रत्यक्ष नज़र आने वाली विकृति या जन्मजात 'दोष' के साथ पैदा होता है तो उसका स्वागत उतनी गर्मजोशी से नहीं होता या उसे उस तरह से नहीं स्वीकारा जाता जिस तरह से 'शारीरिक रूप से सुडौल' किसी बच्चे का स्वागत या स्वीकरण होता है। इसके अतिरिक्त, भारतीय लोग कर्म के सिद्धान्त में विश्वास करते हैं, अर्थात यह माना जाता है कि अगर बच्चा किसी प्रत्यक्ष नज़र आने वाली कमज़ोरी के साथ पैदा हुआ है तो पिछले जन्म में उसने या उसके माता-पिता ने ग़लत कर्म किए होंगे। इसके कारण वह बच्चा और उसके माता-पिता रूढ़िबद्धता और हाशिएकरण का शिकार हो जाते हैं। परिवार और बच्चे को इन परिस्थितियों के अनुरूप बनना पड़ता है, लचीलापन विकसित करना पड़ता है।

अपेक्षित समर्थन देने में एक बड़ी बाधा आर्थिक अक्षमता की है। कई उदाहरण हैं जहाँ माता-पिता में किसी एक को, अधिकतर माँ को, अपनी नौकरी छोड़नी पड़ती है ताकि पूरे समय बच्चे का ध्यान रखा जा सके। जब ऐसे बच्चे दूसरे बच्चों को अलग तरह से जीवन जीते हुए, स्कूल जाते हुए, साथियों के साथ खेलते हुए, दोस्त बनाते हुए देखते हैं तो इन बातों से उनका आत्मसम्मान प्रभावित हो सकता है।

स्कूल के सन्दर्भ में विकलांगता

विकलांग बच्चा अगर स्कूल चला भर जाए तो इससे उसमें आत्मसम्मान, आत्मविश्वास और ख़ुशहाली की भावना विकसित हो सकती है। अन्य बच्चों के साथ स्कूल जाना, हर किसी की तरह कक्षा में बैठना, स्कूल के अन्य बच्चों जैसा व्यवहार उसके साथ भी किया जाना— इन सब बातों से विकलांग बच्चों में ख़ुशहाली की भावना बढ़ती है (शर्मा और सेन 2012)। हमारे पास विकलांग बच्चों के लिए विशेष स्कूलों का ऐतिहासिक प्रमाण है। हालाँकि नीतियों में यह बात मानी गई थी कि विकलांग बच्चों को भी शिक्षित होना चाहिए और समाज में अपना योगदान देना चाहिए, फिर भी इन बच्चों को मुख्यधारा की शिक्षा से बाहर रखा गया। लेकिन इससे मामला और अधिक हाशिएकरण पर चला गया क्योंकि इन बच्चों को ऐसे बच्चों की एक अलग श्रेणी के रूप में देखा गया जो 'सामान्य' नहीं हैं।

बाद में *विकलांग बच्चों हेतु समेकित शिक्षा* (1974) और *विकलांगों के लिए समेकित शिक्षा परियोजना* (1987), जैसी योजनाओं ने विकलांग बच्चों को मुख्यधारा में शामिल करने की कोशिश की। इन योजनाओं ने बहुत सारे बच्चों को शिक्षा के क्षेत्र की ओर आकर्षित किया जिसमें बौद्धिक विकलांगता की बजाय शारीरिक रूप से विकलांग बच्चे अधिक थे। 1997 में, ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में 'समावेशी शिक्षा' शब्द का प्रयोग किया गया। इसके बाद, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम (1992), विकलांगजन (समान अवसर, अधिकार का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम (1995) और राष्ट्रीय न्यास अधिनियम (नेशनल ट्रस्ट फॉर द वेलफेयर ऑफ़ ऑटिज़्म, सेरेब्रल पॉल्ज़ी, मेंटल रिटार्डेशन एण्ड मल्टीपल डिसएबिलिटी 1999) ने विकलांगता वाले बच्चों को सहायक अधिगम वातावरण प्रदान करने पर बल दिया। ये नीतियाँ, योजनाएँ और अधिनियम स्कूलों तक पहुँच को सक्षम बनाने और मुख्यधारा की शिक्षा में विकलांगता वाले बच्चों को एकीकृत करने के महत्व के बारे में जागरूकता पैदा करने में सफल रहे हैं। शिक्षा का अधिकार अधिनियम (आरटीई) 2009 के लागू होने के बाद से विकलांग बच्चों सहित प्रत्येक बच्चे को स्कूलों में प्रवेश का अधिकार है।

विकलांग बच्चों के लिए प्रभावी समावेशी व्यवस्था करने में स्कूल अब तक कितने सफल रहे हैं— यह अभी भी एक सवाल बना हुआ है। मुख्यधारा के स्कूलों में विकलांग बच्चों के लिए समावेशी अधिगम का माहौल बनाने में काफ़ी समय लग सकता है। विकलांग बच्चों के लिए स्कूल अब शारीरिक-भौतिक रूप से उनकी पहुँच में हैं, उन्हें औपचारिक शिक्षा मिलने लगी है, लेकिन शिक्षकों, साथियों और अन्य विद्यार्थियों की नकारात्मक सामाजिक धारणा अभी भी उनके शिक्षा के अधिकार में बाधा बनती है। जब बच्चे किसी स्कूल की औपचारिक व्यवस्था में प्रवेश करते हैं, तो अधिगम की अक्षमता जैसी कई अक्षमताएँ उभरती हैं। अधिगम या बौद्धिक अक्षमता वाले बच्चों को शारीरिक विकलांगता वाले बच्चों की तुलना में उचित शिक्षा नहीं मिलने का ख़तरा अधिक होता है। स्कूलों में उपयुक्त रूप से प्रशिक्षित पेशेवरों तथा भविष्य के विकल्पों के बारे में संसाधन और जागरूकता की कमी आदि स्कूलों से बौद्धिक विकलांग बच्चों की अनुपस्थिति के कुछ कारण हैं।

जब मैंने अज़ीम प्रेमजी स्कूल, मातली, उत्तरकाशी का दौरा किया तो मैंने एलकेजी कक्षा में डाउन सिंड्रोम वाले नौ वर्षीय बच्चे अक्षत[iii] को देखा। जब मैंने उसके बारे में पूछा तो शिक्षक ने बताया कि उसने पहली बार स्कूल आना शुरू किया है। इससे पहले वह कभी किसी स्कूल में नहीं गया था। अयान की तरह ही उसे भी आस-पास के किसी स्कूल में प्रवेश नहीं दिया गया था। माता-पिता जानते थे कि उनका बच्चा विशेष था लेकिन इस बात से अनजान थे कि इसका परिणाम क्या होगा। उसकी माँ शिक्षक से पूछतीं, 'मैडम जी, यह पढ़ना-लिखना कब शुरू करेगा? कविताएँ और गीत गाना कब शुरू करेगा?'

यह देखकर मुझे लगा कि एक ओर जहाँ अयान के माता-पिता उम्मीद खो चुके थे और सामाजिक कलंक से परेशान थे, वहीं दूसरी ओर अक्षत के माता-पिता को अन्य अभिभावकों की तरह उससे सकारात्मक उम्मीदें थीं। शिक्षक के साथ बातचीत से यह भी पता चला कि अक्षत की माँ उसे घर पर पढ़ने-लिखने के लिए मजबूर करती थीं। जागरूकता की कमी के कारण वे यह नहीं जानती थीं कि अक्षत के साथ शैक्षिक रूप से कैसे जुड़ना चाहिए। भले ही उनकी उम्मीदें अवास्तविक हों, लेकिन अक्षत की माँ यह मानती थीं कि उसमें क्षमता है। अक्षत पूर्व-स्कूल के छोटे-छोटे बच्चों के साथ खेलता, अपने दोस्तों के प्रति प्यार दिखाता और उनकी परवाह करता था, जबकि अयान बच्चों से बचता था। दोनों स्थितियों की तुलना करते हुए अयान की माँ का यह कथन सत्य लगता है :

'.. मैं कभी-कभी सोचती हूँ कि अयान को लेकर किसी छोटे शहर या गाँव में रहने चली जाऊँ। वहाँ के लोग अपनी अज्ञानता या अपरिचितता के कारण कम से कम संवेदनशील और स्वीकार करने वाले तो हैं...'

तेज़ी से बढ़ते ध्रुवीकरण और घृणा सम्बन्धी अपराधों में वृद्धि के इस युग में इस बात की सख़्त आवश्यकता है कि कम उम्र से ही सभी में संवेदनशीलता, सहानुभूति और देखभाल की भावना को बढ़ावा दिया जाए। स्कूल विकलांग बच्चों के लिए सशक्तीकरण और समावेशी स्थान के रूप में कार्य कर सकते हैं और इसके लिए बच्चों और माता-पिता को अच्छी तरह से तैयार करना होगा, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात है शिक्षकों को तैयार करने की आवश्यकता। कक्षाओं में कम या मध्यम विकलांगता वाले बच्चों को प्रबन्धित करने के लिए शिक्षकों को पूरी तरह से तैयार करने के लिए शिक्षकों के लिए सेवापूर्व प्रशिक्षण कार्यक्रम पर्याप्त प्रभावी नहीं हैं (संजीव और कुमार, 2007)। हालाँकि इस तरह के प्रशिक्षण/कोर्सों/कार्यशालाओं के पाठ्यक्रमों में समावेशन, विकलांगता के प्रकार आदि के महत्त्व को शामिल किया गया है, लेकिन वे विकलांग बच्चों को लेकर व्याप्त रूढ़िवादिता, कलंक और उनके हाशिएकरण जैसी सामाजिक धारणाओं को शायद ही सम्बोधित करते हैं। शिक्षकों को इस तरह के पूर्वाग्रहों और रूढ़ियों के बारे में पता होना ज़रूरी है क्योंकि शिक्षकों का दृष्टिकोण न केवल शिक्षक के पढ़ाने के तरीक़े को प्रभावित करता है, बल्कि दूसरे विद्यार्थियों के दृष्टिकोण को भी प्रभावित कर सकता है।

स्कूलों को ऐसे वातावरण का निर्माण करना चाहिए जो लचीलेपन को बढ़ावा दे और सहानुभूति विकसित करे। ख़ुशहाली बनाए रखने के लिए संसाधनों के माध्यम से आगे बढ़ने और बातचीत करने के कौशल का पोषण करने की आवश्यकता है (उंगर, 2006), जैसे कि आवश्यकता पड़ने पर मनोवैज्ञानिक, सामाजिक या भौतिक संसाधनों की पहचान करने की क्षमता और साथ ही संसाधनों का उपयोग करने की प्रेरणा जैसे दुखी होने पर लोगों से बात करना आदि। प्रत्येक स्थान को विकलांगजनों के अनुकूल बनाने में काफ़ी अधिक समय लगेगा और तभी समाज समावेशी बन पाएगा लेकिन स्कूल के वातावरण को ऐसा बनाना सम्भव है, जहाँ हर कोई सचेतन रूप से एक-दूसरे के दृष्टिकोण को सुनता और समझता है।

क्या हम विकलांगता को विविधता के रूप में देख सकते हैं? क्या विविधता का मतलब केवल सांस्कृतिक, धार्मिक या भाषाई विविधता है? भले ही भारत बहुसंस्कृतिवाद का एक गौरवपूर्ण दूत है, जिसमें विभिन्न संस्कृतियाँ, धर्म, भाषाएँ, प्रथाएँ, जातीयता आदि शामिल हैं, लेकिन साथ ही हमें जातीय व भाषा संघर्ष और दंगों के भी कई उदाहरण मिलते हैं। भारतीय संविधान धार्मिक और सांस्कृतिक विविधता को

मान्यता देता है और उसकी रक्षा करता है। विविधता को केवल सांस्कृतिक प्रथाओं और विश्वासों के सन्दर्भ में परिभाषित करने के विचार पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है। सभी रूपों में विविधता को स्वीकार करने की आवश्यकता है। इससे प्रत्येक मनुष्य के लिए स्वीकरणीय, सम्माननीय और पोषणीय वातावरण का निर्माण होगा। हम इस बात को मानते हैं और इसकी क़द्र करते हैं कि सभी बच्चे एक अलग गति से विकास करते हैं और सभी बच्चे अलग होते हैं। विकलांग बच्चे भी अलग तरह से विकास करते हैं, कौशल प्राप्त करते हैं, संवाद करते हैं, कार्य करते हैं और एक अलग गति से विकास करते हैं। कक्षाओं और स्कूलों में विकलांग बच्चों को सकारात्मक रूप से स्वीकार करने से लोगों के दिमाग़ से सामाजिक पूर्वाग्रह और कलंक का भाव कम हो सकता है।

References

Appleby, J.M. (2014). *Resilience in families of children who have disabilities*. (Unpublished doctoral dissertation, University of Texas at Arlington). Retrieved from https://pdfs.semanticscholar.org/5668/268d9e7d49a7ad211c795a66638f6e633292.pdf

Bennett, T., Deluca, D. A., & Allen, R. W. (1995). Religion and children with disabilities. *Journal of Religion and Health*, 34(4), 301–312. doi: 10.1007/bf02248739

Sanjeev, K., & Kumar, K. (2007). Inclusive Education in India. *Electronic Journal for Inclusive Education*, 2(2).

Sharma, N., & Sen, R. S. (2012). Children with Disabilities and Supportive School Ecologies. *The Social Ecology of Resilience*, 281–295. doi: 10.1007/978-1-4614-0586-3_22

Ungar, M. (2006). Resilience across Cultures. *British Journal of Social Work*, 38(2), 218–235. doi: 10.1093/bjsw/bcl343

[i] पहचान की रक्षा के लिए नाम बदला गया है।

[ii] 2012 में एमएससी के कोर्स में मानव विकास और बाल्यावस्था विषय पर की गई केस स्टडी।

[iii] पहचान की रक्षा के लिए नाम बदला गया है।



प्रणाली शर्मा इंस्टीट्यूट फॉर असेसमेंट एण्ड एक्रेडिटेशन, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में कार्यरत हैं। वे बड़े पैमाने पर किए जाने वाले आकलन, बाल्यावस्था अध्ययन पर पाठ्यक्रम का विकास, सामाजिक-भावनात्मक अधिगम और प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा पर शिक्षकों के लिए क्षमता-निर्माण कार्यक्रमों में संलग्न हैं। इससे पहले उन्होंने वैष्णव मठों के बच्चों पर शोधकार्य भी किया है। उनसे pranalee.sharma@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

अभिभावकों को बिना देर किए मदद लेना चाहिए

सेरब्रल पॉल्ज़ी वाले बच्चे का पालन

नीता एवं नितिन नायक

निर्मित का जन्म 12 जुलाई, 2011 में भोपाल में हुआ था। जन्म के वक्त उसका वज़न 1.4 किलोग्राम ही था। उस वक्त हम यह जानकर बहुत डर गए थे। पूरा हफ़्ता हमने रात भर जाग-जागकर निकाला। मन में यही डर लगा रहता था कि क्या होगा। डॉक्टर भी सही जवाब नहीं दे पा रहे थे। 20 दिन अस्पताल में रहने के बाद हम निर्मित को घर ले आए। तब हमें यह नहीं पता था कि भविष्य में क्या परेशानी आने वाली है। हम सिर्फ़ उसे कमज़ोर समझते थे। हमने बहुत सारे डॉक्टरों को दिखाया पर कुछ सुधार नहीं हो पा रहा था और वह अभी भी अपनी उम्र के हिसाब से होने वाले विकास से पीछे था। 10 महीने बाद डॉ. टिक्कस से हमारी मुलाक़ात हुई जो हमीदिया अस्पताल,भोपाल के शिशु रोग विशेषज्ञ हैं। उन्होंने हमें बताया कि निर्मित को सेरब्रल पॉल्ज़ी (सीपी) है और उसे कई तरह की थेरेपी की आवश्यकता है। उन्होंने हमें सीआरसी[1] जाने की सलाह दी। तब हमें बेटे के भविष्य की बहुत चिन्ता हुई। फिर हम उसे नियमित रूप से सीआरसी ले जाने लगे जो कि हमारे घर से 15 किलोमीटर दूर था। हम घर में भी वो सभी थेरेपी करने लगे जो सेंटर में थेरेपिस्ट करते थे। पर कुछ ख़ास फ़र्क़ नहीं पड़ा। लगभग तीन साल तक हम उसे सीआरसी में ले जाते रहे। बीच में कुछ पारिवारिक परेशानी भी आई जिसकी वजह से हम निर्मित पर बराबर ध्यान नहीं दे पाए। उसका विकास और धीमा हो गया था। इसी बीच डॉक्टर टिक्कस से डॉ. विकास कदम का पता चला जो प्रोफ़ेशनल थेरेपिस्ट हैं। उनकी थेरेपी से निर्मित को उठने-बैठने और चलने में मदद मिली।

हमने डॉक्टर विकास से थेरेपी करवाना जारी रखा। जब निर्मित साढ़े तीन साल का हुआ तो हमने उसे प्ले स्कूल में भर्ती करवाने के बारे में सोचा। कुछ स्कूल वालों ने उसे एडमिशन देने से मना कर दिया। काफ़ी सारे स्कूलों में घूमने के बाद अन्ततः निर्मित का एडमिशन द *लर्निंग ट्री* में हो गया। उस स्कूल के शिक्षकों ने निर्मित की बहुत मदद की। वहाँ उसने दूसरे बच्चों के साथ रहना सीखा। पर हमारी परेशानी यहाँ ख़त्म नहीं हुई। निर्मित थोड़ा-थोड़ा चलने लगा था, परन्तु वह पढ़-लिख नहीं पा रहा था। तब हमने महसूस किया कि उसे विशेष शिक्षा की ज़रूरत है। कई लोगों से चर्चा की, तो एक परिचित ने भोपाल की *आरुषि* संस्था के बारे में बताया जहाँ विकलांग बच्चों को थेरेपी, विशेष शिक्षा व अन्य विधियों के माध्यम से प्रशिक्षित किया जाता है। तब हम निर्मित को लेकर *आरुषि* गए। उन्होंने बहुत अच्छे-से हमारी बात समझी और निर्मित की विशेष शिक्षा शुरू हो गई। धीरे-धीरे उसकी स्थिति में बदलाव आना शुरू हुए। वह चीज़ों को समझने और पहचानने लगा। निर्मित को लेकर हमारा आत्मविश्वास भी और बढ़ गया।

आरुषि की विशेष शिक्षक रमा मैडम निर्मित को पढ़ाने लगीं। उन्हीं की मेहनत से निर्मित थोड़ा लिखना और पढ़ना सीख गया है। बीच में आर्थिक समस्या की वजह से निर्मित को *आरुषि* में भेजना मुश्किल हो रहा था। पर रमा मैडम, सपना मैडम और *आरुषि* के कुछ और लोगों की मदद से निर्मित फिर से वहाँ जाने लगा। फिर निर्मित का एडमिशन केन्द्रीय विद्यालय में हुआ, जहाँ वह सामान्य बच्चों के साथ रहता है, पढ़ता है। लेकिन वहाँ उसे कुछ परेशानियों का सामना भी करना पड़ता है। वहाँ के सामान्य बच्चे उससे दूरी बनाकर रखते हैं। कई बार उसे अपने पास नहीं बिठाते। लेकिन इन सब परेशानियों के बाद भी कुछ अच्छी चीज़ें हैं—कई बच्चे प्रार्थना के लिए जाने या वॉशरूम ले जाने में निर्मित की मदद करते हैं। उसके होमवर्क के बारे में उसे बताते हैं और उसका क्लासवर्क उसकी कॉपी में कर देते हैं। यही सब बातें हैं जिसकी वजह से निर्मित बिना डरे स्कूल चला जाता है।

आरुषि में जाने से ही निर्मित में यह आत्मविश्वास आया है कि वह सामान्य बच्चों के साथ रहना सीख गया है। अब वह *आरुषि* के बच्चों के साथ नाटकों में भी आत्मविश्वास के साथ अभिनय करने लगा है। इसके लिए हम *आरुषि* संस्थान एवं वहाँ के शिक्षकों के आभारी हैं।

निर्मित की शिक्षा और थेरेपी के कारण हमारी पूरी दिनचर्या ही बदल गई है। सुबह जल्दी उठकर उसे स्कूल छोड़ना। फिर

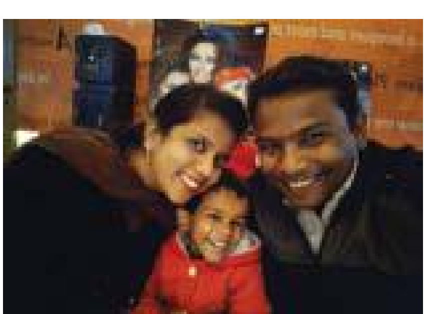
सुबह 11 बजे स्कूल से आरुषि ले जाना। वहाँ से दोपहर 1 बजे वापिस घर लाना। फिर शाम को 5 बजे थेरेपी के लिए जाना। वहाँ से आकर होमवर्क कराना। सुबह-दोपहर और रात को उसकी ख़ुराक का बराबर ध्यान रखना। उसके साथ खेलने के लिए समय निकालना। उसकी यह सारी ज़रूरतें हम दोनों पति-पत्नी मिल-जुलकर पूर्ण करते हैं।

हम विकलांग बच्चों के अभिभावकों से एक ही बात कहना चाहेंगे कि वह इन बच्चों के भविष्य की ज़्यादा चिन्ता ना करते हुए, इनके वर्तमान पर ध्यान केन्द्रित करें और हँसते-खेलते हुए इन बच्चों के साथ ज़्यादा से ज़्यादा समय बिताएँ। बच्चों को उनकी कमज़ोरियों का एहसास न कराते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहें। हमें सबसे बड़ी तक़लीफ़ इस बात की है कि निर्मित की बीमारी एवं इलाज के बारे में सही वक्त पर पता नहीं चल पाया। इस वजह से उसका इलाज देर से शुरू हो पाया। इसलिए हम डॉक्टर, अभिभावक, शिक्षक, थेरेपिस्ट आदि से यह कहना चाहेंगे कि वो सेरब्रल पॉल्ज़ी वाले बच्चों के अभिभावकों को इस बीमारी के बारे में पूर्ण जानकारी दें— जैसे कि इलाज के लिए क्या-क्या और कैसे करना चाहिए, कहाँ-कहाँ इलाज हो सकता है। बच्चे के बड़े होने पर विकलांगता में वृद्धि या इसके प्रभावों के बारे में भी उन्हें जागरूक करना चाहिए। यह हमें अपने बच्चों की मदद के लिए आवश्यक क़दम उठाने के लिए तैयार करेगा।

आरुषि संस्थान को दिल से शुक्रिया, जिसने इन बच्चों को एक नई दुनिया दी है। *आरुषि* में ये बच्चे विभिन्न गतिविधियों और कार्यों को बहुत ही मन लगाकर, आनन्दपूर्वक करते हैं।



[i] भारत सरकार के सामाजिक न्याय और अधिकारिता मन्त्रालय ने विकलांग व्यक्तियों के लिए देश भर में कई समग्र क्षेत्रीय केन्द्र (composite regional center) स्थापित किए हैं। ये केन्द्र श्रीनगर (जम्मू-कश्मीर), सुन्दर नगर (हिमाचल प्रदेश), लखनऊ (उत्तर प्रदेश), भोपाल (मध्य प्रदेश), गोहाटी (आसाम), पटना (बिहार), अहमदाबाद (गुजरात) एवं कोझीकोड (केरल) तथा कई अन्य जगहों पर हैं। इनका काम है— विकलांग व्यक्तियों के पुनर्वास के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, रोज़गार और व्यावसायिक प्रशिक्षण, अनुसंधान व जनशक्ति विकास जैसे पहलुओं पर निवारक और प्रचारक, दोनों तरह की सेवाएँ प्रदान करना।



नीता एवं नितिन नायक
निर्मित नायक के माता-पिता

अक्षमताओं के बजाय क्षमताओं के साथ कार्य करना

विशेष शिक्षक के रूप में मेरे अनुभव

पुष्पलता पाण्डेय

जब भी विकलांग बच्चों को लेकर बात होती है, तो एक अलग-सा माहौल बनता है— जहाँ कुछ लोगों में इनके लिए दया और सहानुभूति दिखाई देती है, वहीं कुछ लोग इन्हें समझना ही नहीं चाहते हैं। शिक्षक होने के नाते यह हमारा दायित्व है कि हम उनकी भावनाओं, व्यवहार, आवश्यकता का आदर करते हुए उन्हें अपने तक आने दें। हम उनकी समस्याओं, अधिगम की आवश्यकताओं को जानें। विकलांग बच्चों को सीखने का समान अवसर सुनिश्चित कराएँ। शिक्षक से जुड़ाव बनाने के पर्याप्त अवसर दें।

अक्षमताएँ, चाहे शारीरिक हों या बौद्धिक, अधिगम की प्रक्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। हमें विकलांगता वाले प्रत्येक बच्चे की विशेष आवश्यकताओं की जानकारी होनी चाहिए। मुझे ऐसा लगता है कि कुछ कारक बच्चों की समस्याओं को स्पष्ट रूप से प्रभावित करते हैं। इनमें से कुछ कारक सभी बच्चों के लिए समान हैं, लेकिन बाक़ी बच्चों के लिए अन्य बातों के साथ इन्हें भी ध्यान में रखना शिक्षक के लिए लाभदायक हो सकता है, जैसे :

- व्यक्तिगत भिन्नताएँ
- बच्चे की कार्यात्मक योग्यताओं को बढ़ाने के लिए उपलब्ध सहायक सामग्रियाँ
- सहपाठी समूह व विद्यालय प्रशासन द्वारा विकलांग बच्चों की स्वीकार्यता
- व्यक्तिगत प्रवृत्ति एवं अभिरुचियाँ
- शाला व समुदाय का समग्र वातावरण

ये सभी कारक सभी बच्चों के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावनात्मक विकास को प्रभावित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। विकलांग बच्चों को और अधिक दिक़्क़त होती है, क्योंकि वे अपनी आवश्यकता को ठीक से बता भी नहीं पाते हैं। ऐसे में एक शिक्षक होने के नाते हमारी भूमिका और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

मेरा अनुभव है कि ऐसे बहुत-से शिक्षक होते हैं जो इन बच्चों की मदद के लिए कुछ करना तो चाहते हैं, पर यह नहीं जानते कि इसके लिए कहाँ से और कैसे समर्थन प्राप्त किया जा सकता है। धीरे-धीरे समय बीतता जाता है और विकलांग बच्चा एक कक्षा से दूसरी में चला जाता है तो शिक्षक सोचने लगता है कि वह कब अपनी पढ़ाई पूरी करेगा और स्कूल से निकलेगा ताकि वह उसके बारे में सोचना बन्द कर सके। कुछ विद्यालय भर्ती प्रक्रिया में ही तमाम तरह के अवरोध पैदा करके इन बच्चों के निष्कासन की एक परिष्कृत प्रक्रिया का अभ्यास करते हैं ताकि वे अपना उच्च शैक्षणिक रिकॉर्ड बनाए रख सकें। लेकिन यह भी सच है कि कई शिक्षक इन बच्चों की कक्षागत चुनौतियों को स्वीकारते हैं और इनके साथ कार्य भी करते हैं।

बच्चों को पहचानने की प्रक्रिया

विकलांग बच्चे के साथ जितनी जल्दी हम क़दम उठाते हैं, उसका परिणाम उतना ही सकारात्मक होता है। सूची काफ़ी लम्बी है— सबसे पहले बच्चे का अवलोकन करना; माता-पिता से मिलकर बच्चे की केस स्टडी तैयार करना। चिकित्सकीय प्रमाणपत्र लेना। शिक्षक से बच्चे से जुड़ी गतिविधि पर जानकारी लेना। कक्षा में अवलोकन करना, सहपाठियों के साथ और खेल के मैदान पर उनके व्यवहार आदि बातों को ध्यान में रखना। जाँच सूची का उपयोग करना उसके माध्यम से व्यक्तिगत शैक्षिक योजना (आईईपी) तैयार करना। क्रियात्मक मूल्यांकन करना। चिकित्सकीय मूल्यांकन करवाना। अभिभावकों को समय-समय पर बच्चों के साथ किए गए कार्यों में शामिल करना। वार्षिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए छोटे-छोटे तिमाही लक्ष्य तैयार करना। कार्यपुस्तिका तैयार करना। बौद्धिक, शारीरिक क्षमता विकास के लिए गतिविधि सुनिश्चित कराना। सामाजिक, भावनात्मक विकास के लिए आयोजित गतिविधि में स्थान देना और ज़िम्मेदारी देना।

अभिभावकों की प्रतिक्रिया

माता-पिता के साथ एक अच्छा रिश्ता बनाया जा सकता है यदि वे अपने बच्चे की शारीरिक आवश्यकताओं को स्वीकार करते हैं और विशेष शिक्षक से यथार्थवादी उम्मीदें रखते हैं। कुछ माता-पिता अपने बच्चों पर बहुत अधिक ध्यान देते हैं, तो कुछ माता-पिता उनसे अपना पीछा छुड़ाना चाहते हैं। वे उनकी बौद्धिक आवश्यकता को समझ नहीं पाते या स्वीकार नहीं पाते और न ही जल्दी सहयोग कर पाते हैं। इसका ख़ामियाज़ा बच्चों को उठाना पड़ता है। यहाँ तक कि

विद्यालय में कभी-कभी एक विशेष शिक्षक की छवि ऐसी हो जाती है कि जिन्हें पढ़ने में दिक़्क़त है, केवल वही बच्चे उसकी कक्षा में आते हैं। एक बच्चे को व्यवहार सम्बन्धी दिक़्क़तें थीं। उसके माता-पिता को जैसे ही यह पता चला कि वह विशेष शिक्षक की कक्षा में जा रहा है तो उन्हें यह स्वीकार्य नहीं हुआ। आज भी विशेष शिक्षा को लेकर जानकारी का अभाव व्याप्त है। यह शिक्षकों के प्रयास से ही दूर होगा। शिक्षकों को बच्चों में होने वाले परिवर्तनों पर पालकों के साथ चर्चा करनी चाहिए और उनकी आवश्यकता से परिचित कराना चाहिए।

मूल्यांकन और विकलांग बच्चे

प्रत्येक बच्चे की सीखने की गति और शैली अलग होती है। हमें कई तरह से अपने बच्चों का मूल्यांकन करना चाहिए, जैसे कि सामूहिक कार्य मूल्यांकन, सतत मूल्यांकन, खुली पुस्तक परीक्षा। साथ ही बच्चों की क्षमता के अनुरूप परीक्षा तैयार करें। यदि इसमें विशेष शिक्षक भी शामिल हों तो सभी बच्चों और शिक्षकों को इसका लाभ मिलेगा। कुछ शिक्षक साथियों का सोचना है कि बच्चों के नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा अधिनियम (आरटीई) के कार्यान्वयन के बाद अनुत्तीर्ण न करने का मतलब अधिगम के परिणामों का आकलन न करना है। यह एक व्यापक मान्यता है कि इन प्रावधानों ने अधिगम के परिणाम कमज़ोर कर दिए हैं। हमें लगता है कि सिर्फ़ लिखित परीक्षा का परिणाम ही मुख्य होता है। लेकिन ऐसा नहीं है। एनसीएफ 2005 में परीक्षा मूल्यांकन के अन्तर्गत सुधारों को सुझाया गया है। मूल्यांकन से बच्चों की ताक़त और कमज़ोरियों को पहचान सकते हैं और उसके अनुसार सुधार ला सकते हैं। विकलांग बच्चों के लिए उपचारात्मक शिक्षण योजना बना सकते हैं।

हमेशा याद रहने वाली — प्रभा

विशेष शिक्षक होने के नाते मेरे बहुत सारे अनुभव ऐसे हैं जिन्हें मैं कभी नहीं भूल सकती हूँ। आज मुझे अपने पुराने दिनों के पन्नों से प्रभा की याद आई। एक अलग-सा जुड़ाव हो गया था मेरे और प्रभा के बीच। बहुत कम दिनों में हमारे बीच दोस्ती हो गई थी। प्रभा शासकीय प्राथमिक शाला, देवपुर में कक्षा 4 में पढ़ रही थी। कक्षा के अवलोकन के दौरान हमने देखा कि प्रभा को दृष्टि सम्बन्धित कुछ तक़लीफ़ थी जिसकी वजह से उसे कक्षा में दिक़्क़त हो रही थी। इसलिए उसका नेत्र परीक्षण किया गया। पता चला कि उसकी दृष्टि क्षमता बहुत तेज़ी-से कम हो रही थी। अभिभावकों से मिलकर चिकित्सीय जाँच के लिए कहा गया। इस सारी प्रक्रिया में एक वर्ष बीत गया। उसकी अल्प दृष्टि अक्षमता को ध्यान में रखकर शैक्षणिक कार्ययोजना बनाई गई। उस समय सहायक उपकरण (10+डोम मैग्निफायर) की मदद से किताबों को पढ़ने, लिखने के लिए कार्ययोजना बन रही थी। रिपोर्ट के अनुसार ऑप्टिक नर्व से जुड़ी बीमारी के कारण वह बहुत जल्दी अपनी बची हुई दृष्टि भी खोने वाली थी। प्रभा को इस बारे में नहीं बताया गया था। सप्ताह में दो दिन घर पर हमारी मुलाक़ात होती थी। एक दिन स्कूल में प्रभा ने कहा कि मैडमजी मुझे आपका चेहरा साफ़ नहीं दिख रहा है। उसने यह बात मुझे छूकर बताई। यह सुनकर बहुत दुख हुआ क्योंकि कुछ स्थितियों में हम कुछ नहीं कर सकते हैं। धीरे-धीरे प्रभा को दिखना और भी कम हो गया, लेकिन अच्छी बात यह रही कि परिवार के सदस्यों ने उसकी परेशानी को समझा और उसका साथ दिया। विशेष शिक्षक के नाते मैंने उसे ब्रेल लिपि पढ़ाने का निर्णय लिया और उसने अपनी पढ़ाई जारी रखी।

माता-पिता की भूमिका

माता-पिता हमारे जीवन में अहम भूमिका निभाते हैं। वे हमारी अच्छाइयों को, हमारी कमज़ोरियों को समझते और स्वीकारते हैं। हर बच्चे की आवश्यकता अलग होती है। माता-पिता से यही अपेक्षा है कि विकलांग बच्चों की व्यक्तिगत आवश्यकता के प्रति शीघ्र हस्तक्षेप करें। उनकी अक्षमता को उनके विकास के रास्ते में नहीं आने दें। उन्हें स्वीकारें। दूसरों के सामने भी अपनाएँ। उनके लिए शिक्षा समावेशी हो। शिक्षक और माता-पिता के सहयोग से सभी बाधाओं को दूर किया जा सकता है, ख़ासतौर पर यदि विशेषज्ञों का सहयोग भी लिया जाए।

एक विशेष शिक्षक की भूमिका

एक शिक्षक के रूप में आपका सम्बन्ध उस क्षण शुरू होता है जब आप विद्यार्थी से मिलते हैं। कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कोई विद्यार्थी कितना मुश्किल हो सकता है, आपको उसे जानने की चुनौती को गले लगाने की ज़रूरत है। आपकी कक्षा में सीखने-सिखाने का सकारात्मक वातावरण होना चाहिए। शिक्षकों को बच्चों की शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक और सामाजिक आवश्यकताओं के बारे में पता होना चाहिए। आपकी कक्षा समूह के काम के लिए अनुकूल होनी चाहिए। आपको शिक्षण प्रक्रिया में कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है। विकलांग बच्चे को न केवल अपनी विकास सम्बन्धी दिक़्क़तों से जूझना होता है, बल्कि अपने प्रति कभी सहपाठी तो कभी परिवार से मिलने वाली नकारात्मक धारणा का सामना भी करना होता है। कक्षा में उसकी अक्षमताओं के बजाय उसकी क्षमताओं के साथ चलें।

इस बारे में सोचें कि बच्चे अपने कौशल के साथ नियमित रूप से कैसे आगे बढ़ सकते हैं। जब कक्षा में सभी गतिविधियाँ उनकी आवश्यकता के अनुसार होंगी और वे उनमें भाग लेंगे तो धीरे-धीरे उनका विकास होगा। व्यवहार सम्बन्धी समस्या में व्यक्तिगत रूप से कार्यवाही करने से पूर्व समझें कि ऐसा व्यवहार किसलिए है। ऐसी सफल कहानियाँ दिखानी, सुनानी चाहिए जो बच्चों से जुड़ी हों। हर एक बच्चा अलग होता है और शिक्षक का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण होता है।

सभी को अपनी शिक्षा पूरी करने का अधिकार है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य एक अच्छा नागरिक तैयार करना है। विद्यालय इस दिशा में एक अच्छी पहल कर सकता है। वह समुदाय के सामने उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है और अभिभावकों को जानकारी देकर सजग कर सकता है।



पुष्पलता पाण्डेय वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी स्कूल धमतरी, छत्तीसगढ़ में विशेष शिक्षक के पद पर कार्यरत हैं। उन्होंने विशेष बच्चों के साथ शासकीय विभाग में 5 वर्ष तक काम किया है। वे कई अन्य स्वयंसेवी संस्थाओं से भी जुड़ी रही हैं। उन्हें विशेष बच्चों के साथ काम करने का कुल 12 वर्षों का अनुभव है। उनसे pushplata.pandey@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

सहानुभूति नहीं अवसर चाहिए

विकलांग बच्चों के लिए बाल मेला

शंकर बडगा, अनवर और वेंकटेश के साथ

प्रतिदिन की तरह उस दिन भी मैं स्कूल के नियमित दौरे पर था, लेकिन उस दिन मैंने जिस स्कूल का दौरा किया वह विशेष इसलिए था क्योंकि उसने मुझे एक नई अन्तर्दृष्टि दी। मैं जिस स्कूल की बात कर रहा हूँ, वह शोरापुर तालुक (ज़िला यादगीर) के कुपगल गाँव का शासकीय उच्चतर प्राथमिक स्कूल है। मैं कक्षा 6 और 7 के बच्चों से बातें कर रहा था। लेकिन उनमें से एक बच्ची कोई जवाब नहीं दे रही थी क्योंकि वह मेरी बातों को समझ नहीं पा रही थी। फिर उसके दोस्तों ने हाथ से संकेत करके उसकी मदद की और तब वह मेरी बातें समझ सकी। मुझे पता चला कि उसे ठीक से सुनाई नहीं देता और उसके भाई-बहनों की भी यही हालत थी। हालाँकि मैं उसके साथ सामान्य रूप से बातचीत नहीं कर सका, लेकिन उसके दोस्तों को उसके साथ बातें करने में कोई परेशानी नहीं हुई। इस घटना ने मुझे यह सोचने पर मजबूर कर दिया कि इन बच्चों में भी विशेष योग्यताएँ हैं और यदि हम इन्हें बेहतर रूप से समझ सकें और इन्हें विविध अवसर प्रदान करें तो ये भी पढ़ाई में सफल हो सकते हैं। मैंने महसूस किया कि इन्हें अवसरों की आवश्यकता है, सहानुभूति की नहीं ताकि इनके भीतर की उन दक्षताओं को बाहर लाया जा सके जो उजागर होना चाहती हैं।

ध्यान से देखने पर हमें पता चला कि हर स्कूल में कम से कम तीन से चार ऐसे बच्चे होते हैं। शोरापुर ब्लॉक की प्राथमिक कक्षाओं में 573 विकलांग बच्चे पढ़ते हैं और हमने उनके साथ कभी भी अन्य बच्चों जैसा बराबरी का व्यवहार नहीं किया है, बल्कि हम विकलांगता के लिए सहानुभूति दिखाते हैं, दुर्भाग्य के लिए सृष्टिकर्ता को श्राप देते हैं और इन बच्चों को ऐसे अवसर देने के तरीक़े कभी नहीं तलाशते जिससे इनके अन्दर छिपी हुई दक्षताओं को बाहर लाया जा सके। अपने हर प्रयास में हम संवैधानिक मूल्यों जैसे समानता, निष्पक्षता और स्वतन्त्रता के बारे में बात तो करते हैं, लेकिन विकलांग बच्चों के लिए इन्हीं बातों को सुनिश्चित करने के विचार को अकसर अनदेखा कर देते हैं।

शिक्षा हर बच्चे का एक मौलिक अधिकार है। इसे सुनिश्चित करना समाज, सरकार और स्कूल की ज़िम्मेदारी है। प्रत्येक स्कूल सभी बच्चों के लिए सुलभ होना चाहिए और इन बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना उसका परम सिद्धान्त होना चाहिए। यह केवल हमारी इच्छा नहीं है, बल्कि यह तो एक संवैधानिक जनादेश है कि विकलांग बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा दी जाए ताकि उन्हें मुख्यधारा के समाज में लाया जा सके। उन्हें किसी भी अन्य बच्चे की तरह अपने जीवन की गरिमा को बनाए रखने में सक्षम होना चाहिए और इसके लिए समान अवसरों की आवश्यकता है। शिक्षा विभाग में विकलांग बच्चों की समावेशी शिक्षा के प्रशिक्षण के लिए एक विशेष सेल है।

समावेशी शिक्षा के उद्देश्य

समावेशी शिक्षा 2018-19 की पुस्तिका, समन्वय शिक्षण कइपिडी 2018-19 के अनुसार ये उद्देश्य इस प्रकार हैं :

- नियमित स्कूलों में प्रवेश के लिए अवसर उपलब्ध कराना।
- विकलांग और ग़ैर-विकलांग बच्चों के बीच सामाजिक सम्बन्धों का निर्माण करना।
- अधिगम की बेहतर प्रक्रियाओं के लिए विशेष शिक्षण-अधिगम सामग्री (टीएलएम) और संसाधनों को काम में लेना।
- विकलांग बच्चों के प्रति नकारात्मक रवैये को दूर करना।

पिछले एक दशक से हम विभिन्न मंचों पर सार्वजनिक शिक्षा क्षेत्र के बच्चों और शिक्षकों के साथ जुड़ रहे हैं, लेकिन विकलांग बच्चों को शामिल करने की कोई पहल कभी भी नहीं हुई और न ही उनके लिए कोई विशेष कार्यक्रम किया गया है।

आख़िरकार अदिवेप्पा, तत्कालीन ब्लॉक समन्वयक, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन द्वारा एक पहल की गई और शिक्षा विभाग के अधिकारियों के साथ एक चर्चा हुई जिसमें उन्होंने विकलांग बच्चों के लिए विशेष कार्यक्रम आयोजित करने के लिए रचनात्मक प्रतिक्रिया दिखाई। इसकी तैयारी के लिए फाउण्डेशन और शिक्षा विभाग के

सहयोग से एक बैठक का आयोजन किया गया। इसमें हमने विशेष रूप से विकलांग बच्चों के लिए बाल मेले की अवधारणा पर चर्चा की और कार्यक्रम के उद्देश्यों पर एक दस्तावेज़ तैयार किया। चर्चा के दौरान, कुछ महत्वपूर्ण बातें सूचीबद्ध की गईं जो इस प्रकार थीं :

- माता-पिता और समुदाय के मन में इन बच्चों की क्षमताओं के बारे में ग़लत धारणाएँ हैं।
- इन बच्चों को अतीत के पापों का फल माना जाता है।
- चिकित्सा सम्बन्धी जागरूकता की कमी है।
- स्कूल का माहौल भी इन्हें अन्य बच्चों से अलग करता है।

इस तरह की भ्रान्तियों को दूर करने और विकलांग बच्चों की क्षमताओं को सामने लाने का प्रयास करना ही इस मेले का मुख्य उद्देश्य था।

मेले के उद्देश्य

- माता-पिता और समुदाय के लोगों में जागरूकता पैदा करना और विकलांग बच्चों की क्षमताओं को मान्यता और सम्मान देने के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करना।
- बाल अधिकारों और संवैधानिक मूल्यों के बारे में जागरूकता पैदा करना।
- विकलांग बच्चों के कल्याण के लिए विभिन्न सरकारी नीतियों के बारे में जागरूकता फैलाना और इनका लाभ उठाने में उनकी मदद करना।

मेले की तैयारी

यह मेला हमारे लिए भी काफ़ी चुनौतियाँ लेकर आया। पहली अड़चन थी— शिक्षकों की मदद से इन बच्चों के अधिगम के लिए उपयुक्त शिक्षण-विधियों का उपयोग करना। इसे दूर करना ज़रूरी था। दूसरे, हमने विभिन्न विभागों जैसे कि शिक्षा, तालुक पंचायत, समाज कल्याण, महिला और बाल कल्याण, स्वास्थ्य, परिवहन, विकलांग कल्याण, नगर निगम और विकलांग बच्चों के संघ आदि के साथ इन बच्चों के कल्याण के प्रावधानों और योजनाओं के बारे में पूछताछ करने के लिए विचार-विमर्श किया था। इन सभी विभागों से यह भी कहा गया था कि वे अपनी स्वयं की गतिविधि के साथ इस मेले में भाग लें।

फाउण्डेशन के सदस्यों के लिए एक योजना बनाई गई जिसमें उनसे 30 ऐसे स्कूलों की पहचान करने के लिए कहा गया जिसमें विकलांग बच्चे हों। साथ ही उन्हें विभाग के स्रोत व्यक्तियों और सम्बन्धित शिक्षकों के साथ मिलकर काम करना था, ताकि उन स्कूलों को एक महीने के लिए अधिगम की प्रक्रिया में शामिल किया जा सके। हमने सरल गणित और भाषा के क्षेत्र में विभिन्न गतिविधियों के माध्यम से उन बच्चों के साथ कार्य किया। उन्हें अपनी आवश्यकताओं और प्रतिभाओं को साझा करने के लिए प्रोत्साहित किया। इस प्रक्रिया ने शिक्षकों और अभिभावकों को उन बच्चों की क्षमताओं को बेहतर ढंग से समझने में सक्षम बनाया और जिससे हमें माता-पिता और शिक्षकों के साथ मिलकर काम करने में मदद मिली।

मेले का दिन (8 फरवरी, 2018)

इस मेले का उद्घाटन विधानसभा के पूर्व सदस्य (एम.एल.ए.), श्री मदनगोपाल नाइक ने किया और विभिन्न विभागों के अधिकारियों ने इसमें भाग लिया। लगभग सौ विकलांग बच्चों ने सरल गणित, सामाजिक विज्ञान, भाषा और दैनिक जीवन प्रबन्धन कौशल की पचास विभिन्न गतिविधियों में भाग लिया। विभिन्न विभागों (शिक्षा, तालुक पंचायत, समाज कल्याण, महिला और बाल कल्याण, स्वास्थ्य, परिवहन, विकलांग कल्याण, नगर निगम) और विकलांग बच्चों के संघों ने भी अपने-अपने स्टॉल्स में प्रावधानों और कल्याणकारी योजनाओं के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिए इसमें भाग लिया।

जश्न का माहौल था। अन्य मेलों की तुलना में यह एक अलग अनुभव था। ब्लॉक के कार्यकर्ताओं ने इस विशेष कार्यक्रम का आयोजन करने में सन्तोष और गर्व की भावना व्यक्त की। बच्चों ने अपने चुने हुए विषयों पर अपनी क्षमता के अनुसार दर्शकों के साथ चर्चा की।

दोपहर के भोजन के बाद, विशेष क्षमताओं वाले सफल लोगों को अपने विचार साझा करने के लिए आमन्त्रित किया गया था। श्री बसवराज उम्ब्रानी और डॉ. शिवराज शास्त्री ने अपने रास्ते में आई चुनौतियों और अपनी सफलता की कहानियों के बारे में बताया। श्री बासवराज उम्ब्रानी दृष्टि बाधित हैं और उन्हें राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ है। उन्होंने कहा कि विकलांगता केवल भौतिक दुनिया के सन्दर्भ में है, मानसिक सन्दर्भ में नहीं। कर्नाटक राज्य में शोरापुर ने विकलांग बच्चों को अवसर प्रदान करने में अग्रणी भूमिका निभाई है। वे बिना किसी सहायता के कुछ ही पलों में जोड़, भाग और गुणा जैसी गणितीय संक्रियाओं को छठे स्थानीय मान तक हल कर सकते थे। इस बात ने दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया। उन्होंने यह भी कहा कि विकलांग बच्चों में विशेष क्षमता होती है और हमें उनकी प्रतिभा

को सामने लाने के लिए उन्हें पहचानने और उनका समर्थन करने की आवश्यकता है। दूसरे वक्ता, डॉ. शिवराज शास्त्री, जो दृष्टि बाधित हैं और शरण बसप्पा कॉलेज में कन्नड़ के व्याख्याता हैं, ने कहा कि मानव प्रजाति बहुत ख़ास है और हमारे पास जो भी है उसका पूरा उपयोग करना चाहिए; 'यदि आपके पास एक हाथ नहीं है, तो दूसरे का उपयोग करें।' समारोह में लगभग दो हज़ार लोगों ने भाग लिया, जिनमें बच्चे, माता-पिता और समुदाय के सदस्य शामिल थे।







मेले की-कुछ झलकियाँ

मेले से प्राप्त अन्तर्दृष्टि

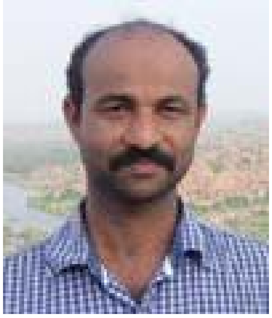
- यह समझ बनी कि विकलांग बच्चे दूसरे बच्चों के बराबर ही सीख सकते हैं। अपने स्कूल के दौरों के दौरान हमने देखा कि शिक्षक सक्रिय रूप से उन बच्चों के साथियों की मदद से उन्हें सीखने की प्रक्रिया में शामिल कर रहे थे।
- यदि शिक्षक में विकलांग बच्चों को पढ़ाने के लिए दृढ़ विश्वास हो तो बच्चे सफल होंगे।
- 'सहानुभूति नहीं अवसर चाहिए' इस नारे ने सभी के मन में एक विवेचनात्मक विचार प्रक्रिया शुरू की है।
- विकलांग बच्चों को सफल होने के लिए सहानुभूति की नहीं, बल्कि अवसरों के साथ धैर्य, प्यार और सम्मान की आवश्यकता होती है।
- माता-पिता ने महसूस किया कि उनका विकलांग बच्चा बोझ नहीं है। वह भी बाक़ी लोगों की तरह सामान्य जीवन जी सकता है।

जब मेला समाप्त हुआ तो उस दिन हमारे सदस्यों के मन में सन्तुष्टि का भाव था, क्योंकि उन्होंने कुछ असाधारण हासिल किया था और बच्चों के चेहरे पर ख़ुशी और गर्व की जो मुस्कुराहट थी, वह अनमोल थी। इस मेले ने संवैधानिक जनादेश सुनिश्चित करने के साथ-साथ विकलांग बच्चों की क्षमताओं को पहचानने और उनका सम्मान करने के लिए एक मंच प्रदान किया।

'समावेशन की नीति को हर स्कूल और सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की ज़रूरत है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में, वह चाहे स्कूल में हो या बाहर, सभी बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की ज़रूरत है। स्कूलों को ऐसे केन्द्र बनाए जाने की आवश्यकता है जहाँ बच्चों को जीवन की तैयारी कराई जाए। यह सुनिश्चित किया जाए कि सभी बच्चों, ख़ासकर शारीरिक या मानसिक रूप से असमर्थ बच्चों, समाज के हाशिए पर जीने वाले बच्चों और कठिन परिस्थितियों में जीने वाले बच्चों को शिक्षा के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र के सबसे अधिक फ़ायदे मिलें। अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने के मौक़े और सहपाठियों के साथ बाँटने के मौक़े देना बच्चों में प्रोत्साहन और जुड़ाव को पोषण देने के शक्तिशाली तरीक़े हैं।' एन.सी.एफ. 2005 (4.3.2. *समावेशन की नीति*)



शंकर बडगा वर्तमान में ब्लॉक संसाधन केन्द्र, शोरापुर, यादगीर, कर्नाटक में समावेशी शिक्षा के स्रोत प्रशिक्षक हैं। इससे पहले वे शिक्षा विभाग में क्लस्टर रिसोर्स पर्सन (सी.आर.पी.) और कन्नड़ तथा सामाजिक विज्ञान के सहायक शिक्षक की विभिन्न भूमिकाओं में कार्य करते रहे हैं। उन्हें इस क्षेत्र में 25 साल का लम्बा अनुभव है। उनसे shankrappabbadaga@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।



अनवर, कर्नाटक के यादगीर के शोरापुर में कन्नड़ भाषा के स्रोत व्यक्ति हैं और 2008 से अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ हैं। वे लर्निंग गारंटी प्रोग्राम और चाइल्ड-फ्रेंडली स्कूल इनिशिएटिव जैसे विभिन्न कार्यक्रमों का हिस्सा रहे हैं। उन्होंने सेदाम, कलबुर्गी में फाउण्डेशन की ब्लॉक स्तर की गतिविधियों के समन्वय की ज़िम्मेदारी भी सँभाली है। उनसे anwar.m@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।



वेंकटेश वर्तमान में शोरापुर, यादगीर, कर्नाटक में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन फेलो हैं और उन्हें स्टील औद्योगिक परियोजना प्रबन्धन का अनुभव है। उन्होंने कर्नाटक के राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान से मैकेनिकल इंजीनियरिंग में बैचलर ऑफ़ टेक्नोलॉजी की उपाधि प्राप्त की है। उनसे venkatesh.k@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

स्वीकरण का लम्बा रास्ता

सीता कृष्णमूर्ति

इस दुनिया में लगभग हम सभी का पालन-पोषण इस तरह से किया जाता है कि हम आराम, धन और प्रतिष्ठा के साथ-साथ एक ऐसा पेशा या करियर चाहते हैं जो दूसरों के लिए भी अभीष्ट हो। जब हम इन चीज़ों के लिए योजनाएँ बनाते हैं तो माता-पिता, भाई-बहन यहाँ तक कि शिक्षक होने के नाते भी हम विशेष आवश्यकता वाले व्यक्ति के बारे में ज़रा भी नहीं सोचते। इसलिए जब कोई 'विकलांग' बच्चा पैदा होता है तो माता-पिता को यह बात स्वीकार करने में बहुत कठिनाई होती है क्योंकि विशेष आवश्यकता वाले बच्चे की बात तो उनके जीवन की योजनाओं में कभी थी ही नहीं। आँकड़े बताते हैं कि जन्म लेने वाले 59 जीवित बच्चों में से एक बच्चे को स्वलीनता स्पेक्ट्रम विकार (एएसडी) होता है। अन्य अक्षमताएँ जैसे कि बौद्धिक चुनौतियाँ, स्पास्टिसिटी, अधिगम विकलांगता (जैसा कि भारत में कहा जाता है), डाउन सिंड्रोम (डीएस) और अतिसक्रियता विकार की घटनाएँ तुलनात्मक रूप से कम हैं।

विकलांग बच्चों (सीडब्ल्यूडीएस) की ज़रूरतों से निपटने के लिए माता-पिता पर्याप्त रूप से तैयार नहीं होते। उन्हें अपने शुभचिन्तक मित्रों और रिश्तेदारों से ढेर सारी 'सलाह' मिलती है। जो लोग शिक्षित हैं वे गूगल का सहारा लेते हैं लेकिन अच्छी, सार्थक जानकारी और समर्थन प्रणाली का पूरी तरह से अभाव है।

बड़े शहरों में भी, उपलब्ध अपर्याप्त बुनियादी ढाँचे की हालत को देखते हुए विकलांग बच्चों (सभी प्रकार के) को विशेष स्कूलों में दाख़िला दिलाया जाता है जो थेरेपी और प्रशिक्षण के लिए आवश्यक विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकते हैं। मुख्यधारा के जो स्कूल समावेशन का पालन करते हैं, उन्हें भी बहुत कठिनाई होती है क्योंकि शिक्षकों को न तो पर्याप्त ज्ञान दिया जाता है और न ही यथेष्ट प्रशिक्षण। इन सबके अलावा विशेष स्कूलों और विकलांग बच्चों के माता-पिता के लिए सबसे बड़ी चिन्ता की बात यह है कि समाज में जागरूकता की कमी है।

मेरा विचार यह है कि समाज ने विकलांग बच्चों को अस्वीकार करके उनके लिए तय हमारे लक्ष्यों को अवरुद्ध कर दिया है। पिछले कुछ वर्षों में, हमें विकलांग बच्चों को न्यूरो-टिपिकल[1] आबादी की यथासम्भव बराबरी पर लाने के लिए अपने पाठ्यक्रम को नया रूप देना पड़ा है। ऐसी कौन-सी बात है जिसके कारण लोग विशेष आवश्यकताओं वाले व्यक्तियों को तुच्छ समझते हैं, उनसे डरते हैं, उन्हें नापसन्द करते हैं यहाँ तक कि उन्हें अस्वीकृत करते हैं?

शैक्षिक योग्यता, विशेष कौशल और आर्थिक स्थिति उतनी मायने नहीं रखती है, जितनी विकलांग बच्चों के समाजीकरण और संवाद करने की क्षमता। दीपिका स्कूल में हम इन कौशलों को बेहतर बनाने और विकलांग बच्चों को समाज की मुख्यधारा में लाने का प्रयास कर रहे हैं। जैसा कि कहा जाता है कि पहले घर में चिराग़ जलाओ, फिर मस्ज़िद में, तो इसके लिए सबसे पहले हमें अपने स्कूल के शिक्षकों को सशक्त बनाना है ताकि वे अपने स्वयं के व्यक्तित्व और क्षमता को विकसित और मज़बूत कर सकें। सभी विशेष शिक्षकों को शिक्षण और व्यवहार कौशल दोनों में सुविस्तृत प्रशिक्षण दिया जाए। सभी सहायक कर्मचारियों जैसे स्कूल का वाहन चलाने वालों तथा अन्य प्रशासनिक कर्मचारियों को इस बात के लिए प्रशिक्षित किया जाए कि वे बच्चों को प्यार करें और उन्हें स्वीकारें जिससे कि स्कूल को अपने लक्ष्य प्राप्त करने में समर्थन मिले।

हमारी यात्रा

जब मैं मुख्यधारा के एक स्कूल में पढ़ाया करती थी तो मैं यह समझ नहीं पा रही थी कि ममता* कक्षा में पढ़ाई जाने वाली विषयवस्तु को कुछ सैकेण्ड से ज़्यादा समय तक याद रखने या समझने में असमर्थ थी। दिनेश* की मुस्कान फ़रिश्तों जैसी थी लेकिन वह न तो बात करता था और न ही किसी गतिविधि में भाग लेता था, हालाँकि वही गतिविधि अन्य बच्चों को बहुत रोमांचक लगती थी। मेरे मन में लगातार उठ रहे इस 'क्यों' ने मुझे एक नई दुनिया की खोज करने के लिए प्रेरित किया, जिसने मुझे असीम आनन्द और अपार सन्तुष्टि प्रदान की।

जब हमने विशेष बच्चों के साथ काम करना शुरू किया तो हमारे सामने केवल एक मुद्दा था - धीमी गति वाला अधिगम। बच्चे शान्ति से बैठ सकते थे, ध्यान दे सकते थे और उत्साह के साथ सीख सकते थे। उन्हें पढ़ाना बहुत आसान था। उनका सामाजिक और सम्प्रेषण कौशल बहुत बढ़िया था। उन्हें केवल अकादमिक शिक्षा को लेकर समस्या थी।

तो ज़ाहिर है कि हम इस बात के लिए ही तैयार नहीं थे कि एक साल में तीन विद्यार्थियों को लेने से हमें किस तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ेगा और हमने बारह विद्यार्थी ले लिए। अब, विद्यार्थियों को अतिसक्रियता विकार से लेकर एस्पर्गरस सिंड्रोम तक की विभिन्न समस्याएँ थीं! और यह उस समय की बात है जब एस्पर्गरस सिंड्रोम का नाम तक किसी ने नहीं सुना था। हम बिलकुल दिशाहीन थे, गूगल-हीन थे और स्वलीनता वाले बच्चों के साथ काम करने का कोई अनुभव हमें नहीं था।

अतिसक्रिय अरविन्द* को पढ़ने और लिखने से नफ़रत थी और वह जैसे ही अपनी डेस्क पर बैठता, वैसे ही डेस्क के नीचे अपने पैरों से ताल देने लगता और अपने हाथों से डेस्क बजाने लगता था। अन्य बच्चों के लिए यह एक संकेत था कि वे जो कुछ भी कर रहे हों, उसे छोड़कर उसका अनुकरण करें! उसके पीछे भाग-भागकर हमने अपने कई कीमती घण्टे बर्बाद कर दिए। विशाल*, स्वलीनता वाला बच्चा था और उसके पास शब्दों का जो एकमात्र भण्डार था, वह था टीवी चैनल के नामों की एक लम्बी सूची, जिसे वह लगातार दोहराता था। उस समय अपनी अज्ञानता के कारण हम यह नहीं जान पाए कि वह सम्प्रेषण करने की कोशिश कर रहा है। हम नहीं जान पाए कि स्नेहा* अपने कानों में उँगलियाँ डालकर इसलिए बैठती थी क्योंकि वह ध्वनि के प्रति अपनी अतिसंवेदनशीलता से जूझ रही थी। ज़ाहिर है कि हमारे पास सीखने को बहुत कुछ था। हमने विकलांगता के क्षेत्र में वरिष्ठ विशेष शिक्षकों, डॉक्टरों और यथासम्भव विशेषज्ञों से मुलाक़ात की। अपने ज्ञान को व्यापक करने के लिए हमने भारत भर के सेमिनारों और सम्मेलनों में भाग लिया। दुर्भाग्य से हमने केवल इसकी व्यापकता, क्या और क्यों के बारे में सीखा, पर कैसे के बारे में कुछ नहीं।

हमें सिर्फ़ अरविन्द, विशाल और स्नेहा ही नहीं, बल्कि मुख्यधारा के स्कूलों द्वारा नकारे गए कई बच्चों की मदद करनी थी। हम मुख्यधारा के स्कूलों को दोष नहीं दे रहे थे। उन्हें तो यह पता ही नहीं था कि क्या करना है, कैसे मदद करें की तो बात ही जाने दीजिए। लेकिन यह बात भी हम समझ गए क्योंकि हम ख़ुद भी तो उस वक़्त यह सब नहीं जानते थे!

हमने जो सबक़ सीखे

हमने विभिन्न प्रकार की विकलांगताओं पर किताबें ख़रीदीं लेकिन उनमें से कोई भी भारतीय बच्चों पर लागू नहीं होती थी। तब हमने प्रेक्षण के महत्व को महसूस किया। बच्चों के निष्पक्ष और सूक्ष्म प्रेक्षण और वस्तुनिष्ठ विश्लेषण ने हमें विकलांग बच्चों की दुनिया के बारे में कई महत्वपूर्ण जानकारियाँ दीं, विशेष रूप से स्वलीन बच्चों के बारे में।

हमने महसूस किया कि शारीरिक गतिविधि और नियमित अभ्यास ने न केवल उनके गत्यात्मक विकास में मदद की, बल्कि उनकी कुछ संवेदी समस्याओं को दूर करने में भी मदद की। उन्हें स्व-सहायता कौशल और व्यक्तिगत स्वच्छता, जिन्हें अभी तक माता-पिता की ज़िम्मेदारी माना जाता था, के बारे में सिखाने और नज़र रखने की आवश्यकता होती है। बच्चों को अँग्रेज़ी समझना और बोलना सिखाना एक बड़ी चुनौती बन गया था, क्योंकि विद्यार्थी कई अलग-अलग राज्यों के थे और उन्हें अपनी मातृभाषा में भी कठिनाई होती थी। हमें ख़ुद उनकी भाषा या बोली नहीं आती थी, इसलिए उनकी बातें समझने के लिए हमें मूकाभिनय और सांकेतिक भाषा का सहारा लेना पड़ा। उन बच्चों में कौशिक* भी था, जिसे जब भी बोलना होता था, तब धाराप्रवाह रूप से बोलता; लेकिन शुक्र है कि हम कुछ समझ नहीं पाते थे क्योंकि हमें बाद में पता चला कि वह केवल अभ्रद शब्द बोलता था!

अगली चुनौती यह थी कि किसी बात को समझने, याद करने, उसका विश्लेषण करने, अनुप्रयोग करने और सामान्यीकरण करने में बच्चों की मदद कैसे की जाए। अधिगम प्रक्रिया के प्रत्येक कार्यों का विश्लेषण और अनुक्रमण करना था। सभी शैक्षिक अधिगम और व्यावसायिक प्रशिक्षण काफ़ी हद तक संज्ञानात्मक कौशलों पर निर्भर करते हैं। हमें अपने बच्चों के संज्ञान को बेहतर बनाने के लिए बहुत सारी योजनाएँ और गतिविधियाँ बनाने की आवश्यकता होती है। हमने पाया कि उचित प्रशिक्षण से बच्चों की समझ को कुछ हद तक बेहतर बनाया जा सकता है और उन्हें उपलब्धि का एहसास दिलाया जा सकता है।

लेकिन अगर हम उनके सामाजिक और सम्प्रेषण कौशल पर काम न कर पाएँ तो इनमें से कुछ भी करना सम्भव नहीं था, ख़ासकर तब जब विद्यार्थी किशोरावस्था में पहुँचते हैं क्योंकि तब व्यवहार में एक बड़ा बदलाव होता है और केवल संज्ञान काफ़ी नहीं होता। यदि विद्यार्थी नकारात्मक व्यवहार विकसित कर लें और उन्हें एक समूह में प्रशिक्षित न किया जा सके तो वर्षों के हमारे प्रयास बेकार हो जाएँगे। स्वीकरण हो इसके लिए हमें व्यवहार-कौशल पर ध्यान केन्द्रित करना था।

हमारी सफलता

जब हम बड़े परिसर में चले गए तो हमने धीरे-धीरे आवश्यक थेरेपी शुरू की। ग़ैर-मौखिक और बोलने में कठिनाइयों वाले बच्चों के लिए बोलने से सम्बन्धित थेरेपी। एक बहुत ही भले और दयालु बाल-चिकित्सा फिज़ियोथेरेपिस्ट ने एक यूनिट की स्थापना की और मोटर आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों की मदद की। साथ ही जो विद्यार्थी प्रकाश, ध्वनि, स्पर्श, गन्ध और स्वाद के लिए अल्प या अतिसंवेदनशील थे, उनके लिए संवेदी एकीकरण थेरेपी की व्यवस्था की। माता-पिता

की सहायता और समर्थन के साथ आवश्यक साज-सामान से लैस एक भली-भाँति सुसज्जित व्यावसायिक थेरेपी यूनिट भी स्थापित की गई।

इन सब चीज़ों ने उनकी शारीरिक ज़रूरतों का ख्याल रखा। अब ज़रूरत इस बात की थी कि विद्यार्थी स्वीकरण और साझा करना, जीवन जीने की ख़ुशी, उपयुक्त और स्वीकार्य समाजीकरण, संस्कृति और आत्म-अभिव्यक्ति जैसी बहुत-सी अन्य बातें सीखें। संगीत, नृत्य, कला, शिल्प और खाना बनाना अधिगम का अभिन्न अंग बन गया। कला-आधारित थेरेपी को विशिष्ट उद्देश्यों के लिए एक उपचारात्मक प्रक्रिया के रूप में शुरू किया गया था।



कला-आधारित थेरेपी सत्र

बच्चों के साथ हमने आन्ध्र प्रदेश की बेलम गुफाओं की यात्रा की जो हमारी प्रमुख शिक्षण प्रक्रियाओं का एक आधार बनी। इस यात्रा ने कई शिक्षण तकनीकों के लिए विशाल सम्भावनाएँ खोल दीं। बच्चों ने ट्रेनों की खोज करना, टिकट बुक करना, यात्रा और आवास के लिए आवश्यक धन का हिसाब लगाना आदि सीखा। समाजीकरण और सम्प्रेषण स्वाभाविक रूप से हुआ। स्व-सहायता कौशल और व्यक्तिगत देखभाल का विकास हुआ। इससे उनका इतिहास, भूगोल और गणित का ज्ञान भी बढ़ा। हर साल विद्यार्थी भ्रमण करने गए— पहले तैयारी के रूप में छोटे भ्रमण पर, फिर दो सप्ताह या उससे अधिक समय के लम्बे भ्रमण पर।

बेशक, यह सब आसान नहीं रहा। कई बच्चे अभी भी बिस्तर गीला करते थे, उन्हें पता नहीं था कि स्नान कैसे करना है या उन्हें शौचालय का उपयोग करने के बुनियादी शिष्टाचारों की जानकारी नहीं थी। कुछ भोजन को लेकर असन्तुष्ट थे, उसमें मीन-मेख निकालते तो कुछ पूरी रात जागते रहते थे ...समस्याएँ असंख्य थीं। एक बार एक लम्बी यात्रा के दौरान पन्द्रह वर्षीय राजीव पूरी रात फूट-फूटकर रोया और कहने लगा कि वह अपनी माँ के पास वापस जाना चाहता है और वह भी तब जब हम सब उसकी माँ से 2000 किलोमीटर दूर थे!

उनमें से कुछ ने अप्रत्याशित रूप से अद्भुत कौशलों का प्रदर्शन किया। एस्पर्गरस सिंड्रोम (वर्तमान में जिसे एएसडी के तहत सूचीबद्ध किया गया है) वाला एक विद्यार्थी तेज़ गति से चल रही ट्रेन से भी हर स्टेशन और नदी के नाम पढ़ रहा था! कुछ लड़कों और लड़कियों ने बढ़िया नेतृत्व कौशल दिखाया और शिक्षकों के काम को काफ़ी हद तक हलका कर दिया। इन सभी यात्राओं और थेरेपी का एक और आश्चर्यजनक और आनन्ददायक परिणाम यह था कि विद्यार्थियों में सुदृढ़ जीवन मूल्य और सहिष्णुता के गुण विकसित हुए।

अब हममें अकादमिक क्षेत्र में प्रवेश करने का विश्वास पैदा हुआ और हमने अपने विद्यार्थियों को राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस), दिल्ली द्वारा आयोजित कक्षा 3 और 5 की मुक्त बेसिक परीक्षाओं में लिखने के लिए प्रशिक्षित किया। विद्यार्थियों को स्थानीय एसएसएलसी बोर्ड परीक्षाओं और एनआईओएस की माध्यमिक स्तर की परीक्षाओं में लिखने के लिए भी प्रशिक्षित किया गया था। उपर्युक्त परीक्षा परिणामों की सफलता से पैदा हुए आत्मविश्वास के साथ हमने वरिष्ठ माध्यमिक परीक्षाओं की तैयारी के लिए शिक्षण में और उन लोगों के लिए कौशल विकास प्रशिक्षण में दक्षता हासिल की है जो शैक्षिक प्रशिक्षण जारी नहीं रख सकते हैं।

छोटे विद्यार्थियों का एक सामान्य दिन प्रार्थना व जप, ब्रेन-जिम व्यायाम एवं कक्षा में अधिगम के बीच-बीच में खेल, शारीरिक व्यायाम, कला और संगीत के साथ शुरू होता है। उनमें से कुछ स्पीच थेरेपी प्राप्त करते हैं और कुछ फ़िज़ियोथेरेपी। स्वलीनता स्पेक्ट्रम के अन्तर्गत आने वाले बच्चों को संवेदी एकीकरण भी दिया जाता है। किसी-किसी दिन संगीत, नृत्य और कला-आधारित थेरेपी दी जाती है। साप्ताहिक सैर की योजना बनाई जाती है ताकि बच्चे खेल सकें, चारों ओर के दृश्य देख सकें और लोगों के साथ घुल-मिल सकें।

12 से 18 वर्ष की आयु वाले बड़े विद्यार्थियों को उनकी सीखने की क्षमता के अनुसार अकादमिक प्रशिक्षण दिया जाता है। जिन लोगों को सीखने की गम्भीर कठिनाइयाँ होती हैं, उन्हें उचित और सार्थक व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता है। जिन विद्यार्थियों में दृश्य सम्बन्धी अच्छे बोधात्मक कौशल हैं, उन्हें मल्टीमीडिया और एनीमेशन, पाक कला,

ब्यूटीशियन और हेयरस्टाइलिंग, हाउसकीपिंग, लाण्ड्री, काग़ज़ के उत्पाद बनाने आदि में प्रशिक्षित किया जाता है।

विद्यार्थियों की क्षमताओं के आधार पर हर साल हम थीम-आधारित एक शो डिज़ाइन करते हैं। *टेस्ट्स ऑफ़ इण्डिया*, भारत की पाक कला पर आधारित एक कार्यक्रम था जिसे शानदार सफलता मिली। विद्यार्थियों और शिक्षकों ने ख़ुद को भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बाँटा और ऐसे व्यंजन बनाए कि मुँह में पानी भर आए! *स्वच्छ भारत* पर एक कार्यक्रम किया गया जिसमें प्रदूषण के ख़तरों के बारे में और कचरे को अलग करने का महत्व बताया गया। स्वच्छ भारत पर आधारित संगीत और नृत्य के कार्यक्रम भी ख़ूबसूरती के साथ प्रस्तुत किए गए। न केवल विद्यार्थियों बल्कि शिक्षकों के कौशलों को प्रोत्साहित करने के लिए हमने *डान्सेस ऑफ़ इण्डिया* और *रिदम्स ऑफ़ इण्डिया* जैसे कार्यक्रम भी किए। ऐसे समय में हम माता-पिता के चेहरे पर गर्व और ख़ुशी की दुर्लभ चमक देखते हैं। जब बच्चे ऐसी गतिविधियाँ करते हैं जो उन्हें पसन्द हैं, जिसे करने की योग्यता उनमें है तो बच्चों के चेहरों पर भी ख़ुशी साफ़ झलकती है; ये सारी चीज़ें मन को छू लेती हैं एवं बहुत आनन्ददायी होती हैं।

सुगमकर्ता

उन विद्यार्थियों के साथ रहना ख़ुशी की बात है जो हमेशा वर्तमान में रहते हैं। विशेष विद्यार्थियों की ज़रूरतों के बारे में इस समझ तक पहुँचने का यह रास्ता किसी भी लिहाज़ से सुगम नहीं था। प्रत्येक विद्यार्थी की अपनी विशिष्ट आवश्यकताएँ और सीखने की अपनी एक अनूठी शैली होती है, भले ही उसमें किसी भी तरह की विकलांगता हो। उनके साथ आधिकारिक और दृढ़ रहकर कार्य करना अच्छा रहता है लेकिन कई शिक्षकों के लिए ऐसा कर पाना आसान नहीं होता है।

जब हम अतिसक्रिय बच्चों के साथ काम कर रहे हों तो हमें हर समय सतर्क और चौकस रहना होता है। जब हम बौद्धिक रूप से अक्षम बच्चों के साथ काम करते हैं तो हमें उनकी समझ के स्तर के हिसाब से अधिगम पर विचार करना होता है। जब आप अपने सामने एक अच्छा प्राप्य लक्ष्य रखते हैं और उसे धीमी गति से हासिल करने की कोशिश करते हैं तो इन बच्चों के साथ करने के बहुत अद्भुत परिणाम सामने आते हैं। डिस्लेक्सिक बच्चे, जो अन्यथा सामान्य और बुद्धिमान होते हैं, सबसे अधिक कष्ट उठाते हैं क्योंकि कोई भी यह नहीं समझता है कि यह एक न्यूरोलॉजिकल स्थिति है। स्कूलों में कई जागरूकता अभियान के बावजूद, प्रभावित बच्चों को अभी भी स्कूलों और माता-पिता, दोनों के द्वारा दुर्व्यवहार और उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। बस, यह कह दिया जाता है कि, 'जब उसे सभी उत्तर मालूम हैं तो वह पढ़ता क्यों नहीं या परीक्षा में अच्छा प्रदर्शन क्यों नहीं करता?'

'यदि आप एएसडी वाले बच्चों के साथ काम करना चाहते हैं तो आपको पहले उन्हें अपने दिलों में रखना होगा', यह आवश्यक सबक़ हमें स्वलीनता के साथ काम करने की शुरुआत में दिया गया था। उन्हें समझने और प्रशिक्षित करने के लिए अपार प्रेम, धैर्य और संवेदना की आवश्यकता होती है। यहाँ विशेष शिक्षक बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनका व्यक्तित्व, दृष्टिकोण, शब्दावली और ज्ञान बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। बेहद ज़रूरी है कि वे इसे एक नौकरी में रूप में नहीं लें, बल्कि एक प्रबल ज़रूरत के रूप में सोचें। शिक्षकों के रूप में हमें यह याद रखना होगा कि बच्चे हमारे रवैये को बहुत जल्दी समझ लेते हैं। शिक्षकों के लिए विशिष्ट विकलांगता में प्रशिक्षण अनिवार्य है लेकिन यह पूरे प्रशिक्षण कार्यक्रम का केवल एक बहुत छोटा हिस्सा है। कोई भी व्यक्ति प्रशिक्षण कार्यक्रम में सफल हो सकता है और डिग्री प्राप्त कर सकता है, लेकिन इससे वह अच्छा शिक्षक नहीं बन सकता। इसके लिए एक सन्तुलित व्यक्तित्व, भावनात्मक स्थिरता, समस्या को सुलझाने के कौशल, रचनात्मक सोच के कौशल, प्रभावी सम्प्रेषण कौशल, समानुभूति और अच्छे पारस्परिक सम्बन्धों की आवश्यकता है। इन कौशलों को विकसित करने के लिए शिक्षकों की रचनात्मकता को उजागर करने के अवसरों के साथ-साथ एक समर्थनकारी और उत्साहजनक वातावरण की भी आवश्यकता होती है। स्कूल के प्रमुख और प्रबन्धक विद्यार्थी की प्रत्येक ज़रूरतों के बारे में पूरी तरह से अवगत नहीं हो सकते हैं, लेकिन शिक्षक यह भली-भाँति जानते हैं। इसलिए हम शिक्षकों को बाल विशिष्ट पाठ्यक्रम बनाने की ज़िम्मेदारी देने में विश्वास करते हैं। शिक्षक को एक व्यापक ढाँचा दिया जाता है, लेकिन दैनिक प्रशिक्षण के विवरण की तैयारी उन पर छोड़ दी जाती है।

उपर्युक्त सभी बातों से अधिक ज़रूरी यह है कि शिक्षकों को भी बच्चों की संवेदनशीलता के बारे में पता होना चाहिए। ऊँची-तेज़ आवाज़ या कभी-कभी तो चमकीली और भड़कीली पोशाक भी बच्चों के अशान्तिकारक व्यवहार का कारण बन सकती है। हमारे पास सभी सुगमकर्ताओं और थेरेपिस्टों के लिए नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम हैं जिनमें टीमवर्क के कौशल विकसित करने, नई शिक्षण तकनीकों को सीखने और विशेष शिक्षा के लिए लागू तकनीकी उपकरणों में प्रगति के बारे में मासिक सत्र आयोजित किए जाते हैं। तनाव से राहत देने वाले कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं।



सशक्तिकरण कार्यक्रम

यह ठीक है कि विकलांग बच्चों को पढ़ाने के लिए विशेष प्रकार की पद्धति एवं दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है लेकिन फिर भी यह बहुत ही सन्तोषजनक और तृप्ति देने वाला पेशा है। आध्यात्मिक विकास से सम्बन्धित नियमित सत्र भी अमूल्य साबित हुए हैं। शिक्षकों को तनाव से मुक्त करने के लिए हम उनके लिए पिकनिक और भ्रमण आयोजित करते हैं; उन्हें नृत्य और संगीत में प्रशिक्षित करते हैं; नियमित खेल-सत्र आयोजित करते हैं और ये सब केवल उन्हें विश्राम देने के लिए ही नहीं, बल्कि उनके आत्मसम्मान और स्वास्थ्य के संवर्धन के लिए भी आवश्यक हैं। प्रबन्धन समिति उन्हें केवल कर्मचारियों के रूप में नहीं, बल्कि स्रोत व्यक्तियों के रूप में देखती है जिन्हें नियमित रूप से मार्गदर्शन और समर्थन देने की आवश्यकता है— लेकिन उनका निरीक्षण नहीं किया जाता है —ताकि वे समर्पण और प्रतिबद्धता के साथ विशेष बच्चों की देखभाल कर सकें।

माता-पिता

यदि कुओं के स्रोतों की देखभाल न की जाए और उन्हें समान रूप से पोषित न किया जाए तो वे सूख सकते हैं। विशेष ज़रूरतों वाले बच्चों के माता-पिता को भी अधिक देखभाल, अधिक संवेदना और निरन्तर समर्थन की आवश्यकता होती है। जब हम माता-पिता से बात करते हैं, तो हमें एहसास होता है कि उनके जीवन का हर एक दिन कितनी कठिनाइयों से भरा होता है। कइयों के पास मदद का कोई साधन ही नहीं होता। कभी-कभी माता या पिता को अपने जीवनसाथी या क़रीबी रिश्तेदारों की सहायता भी नहीं मिलती। पैसों की समस्या भी होती है क्योंकि चिकित्सा और थेरेपी काफ़ी महँगी होती है और वे अतिरिक्त सत्रों का खर्चा उठाने की स्थिति में नहीं होते, भले ही वे बहुत आवश्यक हों। प्रबन्धन समिति और शिक्षकों, दोनों को उन्हें संवेदना और समानुभूति के साथ समझना होता है।

माता-पिता के लिए मेडिकल डॉक्टरों, परामर्शदाताओं और थेरेपिस्ट्स के साथ नियमित सत्र आयोजित किए जाते हैं।

हम बच्चों की मदद तभी कर सकते हैं जब उनके माता-पिता उनकी सहायता के लिए तैयार हों। बच्चे की प्रगति हो रही है या नहीं इस पर चर्चा करने के लिए अभिभावकों के साथ नियमित रूप से बैठकें की जाती हैं। वे हमारे पहले समर्थक हैं और उनका सहयोग अमूल्य है। हम प्रत्येक शैक्षिक वर्ष की शुरुआत बॉन्डिंग डे के साथ करते हैं, जहाँ हम माता-पिता, बच्चों, शिक्षकों और स्कूल के अन्य स्टाफ़ के साथ एक दिन की पिकनिक का आयोजन करते हैं। कभी-कभी, भाई-बहन और विस्तारित परिवार के सदस्य भी हमारे साथ आते हैं। पिकनिक जैसी एक अनौपचारिक स्थिति में जब माता-पिता और शिक्षक मिलते हैं तो उनके बीच एक गहरा सम्बन्ध विकसित होता है।

वास्तव में बच्चों के स्वीकरण और समावेशन का यह रास्ता बहुत लम्बा रहा है। आइए, हम यह प्रतिज्ञा करें कि हम समाज को बदल देंगे जिससे कि उसमें समावेशन होने लगे ताकि एक दिन ऐसा आए जब कोई भेदभाव न हो, कोई अस्वीकरण न हो— केवल प्रेम और संवेदना की भावना सर्वव्याप्त हो।

* पहचान की रक्षा के लिए बच्चों के नाम बदल दिए गए हैं।



सीता कृष्णमूर्ति दीपिका स्कूल फॉर स्पेशल नीड्स चिल्ड्रन, दीपिका वोकेशनल सेंटर और समाश्रया लर्निंग सेंटर फॉर स्किल डेवलेपमेंट केन्द्र की संस्थापक प्राचार्या हैं। वे कला में स्नातकोत्तर, विशिष्ट अधिगम विकलांगता में डिप्लोमा, परामर्शन और मार्गदर्शन में डिप्लोमा और अंग्रेज़ी भाषा-शिक्षण में स्नातकोत्तर डिप्लोमा प्राप्त कर चुकी हैं। उन्हें कुल 36 वर्ष का शिक्षण अनुभव है, जिसमें से 27 वर्ष उन्होंने विशेष बच्चों (विशेष रूप से डिस्लेक्सिया, बौद्धिक विकलांगता और स्वलीनता वाले बच्चों) के साथ अध्यापन कार्य किया। वे इन्फर्मेशन एण्ड रिसोर्स सेंटर फॉर डेवलेपमेंटल डिसएबिलिटीज़, बसवनगुडी, बेंगलूरु में शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए पाठ्यक्रम निदेशक हैं। उनसे sita.krishnamurthy@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

विकलांग बच्चों की शिक्षा

उचित समर्थन के साथ समावेशन का अधिकार

डॉ. सुदेश मुखोपाध्याय

परिचय

जवाबदेही आज के समय का बहु-प्रचलित शब्द है और इसका उपयोग दोनों तरीक़ों से किया जाता है : ऊपर से नीचे व नीचे से ऊपर। पहले से कहीं अधिक, आज इस बात की बहुत आवश्यकता है कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति चिन्तन करे और प्रतिक्रिया दे, भले ही शिक्षा प्रणाली के क्रम में हमारी स्थिति या भूमिका कुछ भी हो। हम जिस बात के लिए प्रतिबद्ध हैं या जो कर रहे हैं, क्या हम वास्तव में वैसा चाहते हैं और उस पर कार्य करते हैं? क्या मेरे पास उस दृष्टिकोण को रखने का कोई कारण है जिसके लिए मैं प्रतिबद्ध हूँ? भारतीय शिक्षा प्रणाली के सबसे शक्तिशाली निकाय, केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (सेंट्रल एडवाइज़री बोर्ड ऑफ़ एजुकेशन — सीएबीई), की 21 सितम्बर, 2019 की बैठक में अपने उद्घाटन भाषण में माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री ने निम्नलिखित वक्तव्य दिया :

"राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2019 का मसौदा (ड्राफ्ट एनईपी 2019) पहुँच, समता, गुणवत्ता, जवाबदेही और वहनीयता के बुनियादी स्तम्भों पर बनाया गया है। इसका उद्देश्य एक ऐसी शिक्षा प्रणाली का निर्माण करना है जो गुणवत्ता और समता पर परस्पर आधारित हो तथा एक निष्पक्ष, न्यायसंगत और संवेदनशील समाज का निर्माण कर सके। एनईपी 2019 के मसौदे में सुधार के कई उपाय प्रस्तावित किए गए हैं ताकि सभी विद्यार्थियों को देश भर में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के समान अवसर प्राप्त हों।"[1]

हम जानेंगे कि विकलांग बच्चों (सीडब्ल्यूडीएस) समेत इस देश के लाखों बच्चों की वर्तमान और आने वाली पीढ़ी के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2019 के मसौदे का क्या अर्थ है। इस नीति में एससी, एसटी, ओबीसी, अल्पसंख्यक और इसी तरह के अन्य वंचित समूहों के लिए अल्प प्रतिनिधित्व वाले समूह या अंडर-रिप्रेज़ेंटेड ग्रुप्स (यूआरजी) शब्द का प्रयोग किया गया है। ग़ौर करने वाली बात यह है कि लिंग या जेंडर को सभी लोगों के बीच छँटाई करने वाले एक तथ्य के रूप में मान्यता दी गई है। मेरी एकमात्र चिन्ता यह है कि अगर ऐसा है तो विकलांगता को ऐसी मान्यता क्यों नहीं दी गई है, क्योंकि यह भी तो सभी सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक और ऐसे ही अन्य मानव निर्मित मापदण्डों के लिए एक प्रतिकूल परिस्थिति है जो अल्प-प्रतिनिधित्व/सुविधावंचितता के तहत परिभाषित होती है? सरकार द्वारा किए गए वादे के अनुसार शिक्षा पर अन्तिम और अधिक व्यापक राष्ट्रीय नीति अब उपलब्ध है। इसे अभी संसद द्वारा अनुमोदित किया जाना है। धारा 6 में अभी भी क्रॉस-कटिंग चुनौती (वह चुनौती जिसे अलग-थलग करके नहीं देखा जा सकता क्योंकि यह अन्य क्षेत्रों को प्रभावित करती है) के रूप में 'विकलांगता' का उल्लेख नहीं किया गया है।

क्या हम उन चुनौतियों और अवसरों का सामना करने के लिए तैयार हैं जो हमारे सामने हैं ताकि हम आने वाली पीढ़ियों को जवाब दे सकें? स्वीडन की 16 वर्षीय छात्रा ग्रेटा थनबर्ग ने हाल ही में जलवायु परिवर्तन पर एक आन्दोलन शुरू किया है और यह सवाल पूछकर हममें से प्रत्येक को यह चुनौती दी है कि क्या हम पर्याप्त कोशिश कर रहे हैं? वह दुनिया भर में कई विद्यार्थियों और नागरिकों तक पहुँचने में सक्षम रही है। दिलचस्प बात यह है कि मीडिया रिपोर्ट्स[i] के अनुसार वह स्वलीनता स्पेक्ट्रम में भी है।

अलग होना एक उपहार हो सकता है

थनबर्ग के माता-पिता का कहना है कि उनकी बेटी, जो एक समय बेहद अन्तर्मुखी थी, हमेशा अन्य बच्चों से थोड़ी अलग थी। चार साल पहले इस बात का पता चला कि उसे एस्परगर्स है जो स्वलीनता स्पेक्ट्रम विकार का उपप्रकार है, जिससे पता चलता है कि अपनी निराशा से बाहर आने के बाद उसने जलवायु परिवर्तन के मुख्य मुद्दे पर इतनी शिद्दत से ध्यान क्यों दिया। जब रेडियो 4 के टुडे कार्यक्रम "बीइंग डिफरेंट इज़ ए गिफ्ट" में उसका साक्षात्कार लिया गया तो उसने निक रॉबिन्सन से कहा कि, 'यह मुझे चीज़ों को एक नए व अपरम्परागत तरीक़े से देखने देता है। मैं आसानी से झूठ पर यक़ीन नहीं करती, मैं चीज़ों को समझ सकती हूँ। उदाहरण के लिए अगर मैं अन्य सभी की तरह होती तो मैंने यह स्कूल स्ट्राइक शुरू नहीं की होती।'

स्रोत : (बिरेल, इयान, 23 अप्रैल, 2019 से उद्धृत)।

इसलिए विकलांग व्यक्तियों के समावेशन की आवश्यकता की वकालत करने से परे जाने की आवश्यकता है तथा

यह सुनिश्चित करने के लिए जवाबदेह और सक्रिय होने की आवश्यकता है कि हमने अपनी शिक्षा प्रणाली में सूक्ष्म स्तर पर, बचपन से वयस्कता तक के अपने शिक्षा संस्थानों में एक सशक्त वातावरण बनाया है। यदि हम अपने समुदायों के भीतर और दुनिया भर में कई बच्चों तथा युवा विकलांगों के अनुभवों को देखें तो यह सन्देश स्पष्ट है— समावेशन सशक्तकारी है, लेकिन उनके लिए नहीं बल्कि हम में से हर एक के लिए। हमारे लिए आवश्यक है कि हम ताक़तों को खोजें और उनका निर्माण करें, बिना उन धारणाओं से उलझे जो शायद समावेशन की राह पर चलने के लिए पर्याप्त दृढ़ न हों। आइए, हम इस पृष्ठभूमि में शिक्षा की अवधारणा को समझें और सशक्तिकरण के मार्ग को एक साथ खोजें।

शिक्षा

शिक्षा को यूनानी धारणा के एडुकेयर के अनुसार परिभाषित किया गया है, यानी क्षमता को बाहर लाना या विकसित करना। ऐसी शिक्षा :

- *संकल्पित और आशाजनक होती है*

  हम अधिगम इस विश्वास के साथ करवाते हैं कि लोग अधिक हो सकते हैं

- *सूचित, सभ्य व बुद्धिमान*

  सत्य और सम्भावना की ओर आकर्षित करने की एक प्रक्रिया होती है।

- *इस इच्छा पर आधारित होती है कि जीवन में सभी फलें-फूलें और साझा करें।*

  एक सहकारी और समावेशी गतिविधि जो यथासम्भव अच्छी तरह अपना जीवन जीने में लोगों की मदद करती है (स्मिथ, 2015)।[ii]

विकलांग बच्चों की शिक्षा को विभिन्न तरीक़ों से सम्बोधित किया जा रहा है हालाँकि पसन्दीदा प्रावधान, सामान्य रूप से शिक्षा के इतिहास, और विशेष रूप से विकलांग जनों की शिक्षा के इतिहास में विकास के साथ बदलते रहते हैं। अर्थव्यवस्था की स्थिति और मूल्य प्रणाली भी तौर-तरीक़ों के मिश्रण को प्रभावित करती है। ऐसे कुछ देश हैं जहाँ समावेशी शिक्षा प्रमुख प्रणाली है और कुछ अन्य देशों में विशेष स्कूलिंग इच्छित प्रणाली बनी हुई है। कई देशों में मिश्रित तरीक़ों को महत्त्व दिया जाता है, जिसमें गम्भीर और कई विकलांगता वाले बच्चों और ग़ैर-संस्थागत बच्चों के लिए घर-आधारित सेवाएँ शामिल हैं।

आज समावेशी शिक्षा इस बात पर आधारित है कि सभी बच्चे अड़ोस-पड़ोस के नियमित स्कूल में सीख सकते हैं। प्रणाली को शिक्षार्थियों की विविधता के अनुसार बदलना चाहिए न कि सीखने वाले को प्रणाली के लिए— इस बात को संयुक्त राष्ट्र के कन्वेंशन ऑन द राइट्स ऑफ़ पर्सन्स विद डिसेबिलिटीज़ (यूएनसीआरपीडी, 2006) में उजागर किया गया है। यह आकलन कि शिक्षा की गुणवत्ता, समावेशी शिक्षा के साथ-साथ विशेष शिक्षा के लिए भी वांछित है, अनुमान पर आधारित है न कि कठोर शोध पर, जिसने अभी तक वैकल्पिक तौर-तरीक़ों की प्रभावशीलता पर ध्यान केन्द्रित नहीं किया है।

सीबीएसई ने पहले से ही ‘जीवन कौशल’ के बारे में बात करना शुरू कर दिया है और एनईपी (2019) का नवीनतम संस्करण भी इसे सन्दर्भित करता है। ध्यातव्य है कि विशेष स्कूलों में विकलांग बच्चों के लिए ‘प्लस/संवर्धन पाठ्यक्रम’ भी जीवन कौशल के बारे में है। कौशल परिषद की कार्यसूची में भी यह बात है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2020 को डिज़ाइन करते समय एनसीईआरटी को इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

क़ानूनी प्रावधानों से सीखना

विकलांग बच्चों की शिक्षा आज सरकार की प्रमुख ज़िम्मेदारियों में से एक है। भारत में हम 1974 से सामाजिक कल्याण मंत्रालय (जो अब सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के रूप में जाना जाता है) के माध्यम से इस पद्धति की ओर काम कर रहे हैं। आयोगों, पंचवर्षीय योजनाओं और संसद द्वारा समय-समय पर पारित अधिनियमों के विश्लेषण से घटनाक्रम का अन्दाज़ा मिलता है। इन घटनाओं को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :

पंचवर्षीय योजनाओं के तहत समावेशी शिक्षा के प्रावधान

पंचवर्षीय योजनाएँ	प्रमुख विकास
पहली योजना 1951-56	समाज कल्याण के तहत
दूसरी योजना 1956-61 एवं तीसरी योजना 1961-66	बढ़ी हुई सुविधाएँ, एम.ओ.ई. : राष्ट्रीय सलाहकार समूह, एनजीओ की भागीदारी के सर्वे
बीच की बची समयावधि	शिक्षा आयोग, राष्ट्रीय नीति - आईईडी

चौथी योजना 1968-74 एवं पाँचवीं योजना 1974-79	एमएसडब्ल्यू में आईईडी योजना, चयनात्मक कवरेज
छठी योजना 1980-85	एम/एचआरडी में आईईडीसी योजना, रोकथाम, एकीकरण, नमूना सर्वेक्षण
सातवीं योजना 1985-90	ग़ैर-सरकारी संगठन, महिलाएँ और विकलांग एक समान या बराबर
राष्ट्रीय नीति 1986, पीओए	विकलांगों की शिक्षा पर अध्याय
आठवीं योजना 1992-97	पीडब्ल्यूडी अधिनियम, आरसीआई, डीपीईपी, नमूना सर्वेक्षण
नवीं योजना 1997-2002	एसएसए, राष्ट्रीय ट्रस्ट, जनगणना सर्वेक्षण, 86वाँ संशोधन, एनएसएसओ 2002
दसवीं योजना 2002-2007	निगरानी, विस्तार, क़ानूनी ढाँचा, आरक्षण, मन्त्री का बयान, राष्ट्रीय कार्य योजना, विकलांगता पर व्यापक योजना निर्माणाधीन (आईईसीवाईडी)
ग्यारहवीं योजना 2008- 2012	आईईडीएसएस, आरएमएसए, आरटीई, पीडब्ल्यूडी अधिनियम को संशोधित करना, एसएसए की संशोधित रूपरेखा, एनसीपीसीआर, उच्च शिक्षा संस्थानों में ईओओ, विकलांगता अध्ययन
बारहवीं योजना 2012-17	संशोधन, 2012-आरटीई 2009 में, आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम, 2016 और आगे की कार्रवाई के लिए अधिसूचना
2017 के बाद	नीति आयोग : द थ्री-ईयर एक्शन एजेंडा (2017-18 से वर्ष 2019-20) एसएसए और आरएमएसए को अपनाते हुए समग्र शिक्षा आरटीई और विशेष विद्यालयों का चयन (आरपीडब्ल्यूडी, 2018)
ड्राफ्ट राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2019	20 सितम्बर 2019 को सीएबीई में प्रस्तुत; 5+3+3+4 (12 वर्षीय स्कूल शिक्षा के स्थान पर, जिसमें 5 साल के फाउण्डेशनल लर्निंग के रूप में प्री-प्राइमरी और कक्षा 1 और 2 शामिल हैं) और यूआरजी के भाग के रूप में विकलांगता पर ध्यान देना; सभी बोर्डों में समावेशन; एमसीआई, एआईसीटीई, एनसीटीई, आरसीआई जैसे अन्य सभी नियामक निकायों की प्रकृति में बदलाव।

स्रोत : सुदेश मुखोपाध्याय द्वारा विकसित, 2018, उनके अध्यायों पर आधारित।

नोट : समावेशी शिक्षा के लिए कुछ मुख्य बातों का उल्लेख किया गया है; कुछ छूट गई हो सकती हैं क्योंकि कई अन्य अधिनियम भी विकलांगताओं को सम्बोधित करते हैं, हालाँकि कार्यक्रमों और योजनाओं के शीर्षक में स्पष्ट रूप से उनका उल्लेख नहीं किया गया है।

यह तालिका स्वतंत्रता के बाद से समावेशी शिक्षा की दिशा में किए गए प्रयासों को दर्शाती है। समावेशन अब एक जाना-पहचाना शब्द है, हालाँकि अभी भी भारत सहित सभी देशों के लिए यह एक विकसित हो रही प्रक्रिया है।

नीतियों और विधानों को सक्षम करने के परिणामस्वरूप, सभी राज्य अधिक से अधिक अदालती मामले देख रहे हैं और यह मामले सर्वोच्च न्यायालय तक ले जाए गए हैं। यह कार्यवाही के साथ विचारधारा को साकार करने में नीति से लेकर कार्यान्वयन तक के अन्तराल और चुनौतियों को इंगित करता है।[iii] आरटीई अधिनियम (2009) की नो-डिटेंशन से सम्बन्धित धारा 16 को 2017 में संशोधित किया गया है। इसको हटाने से सभी कमज़ोर बच्चों पर गम्भीर प्रभाव पड़ सकता है क्योंकि यह स्व निगरानी की प्रणाली नहीं है और न ही स्कूल उस समर्थन के लिए ज़िम्मेदार हैं जिन्हें अधिनियम, 2009 के तहत परिकल्पित किया गया था और जो और अब विकलांग बच्चों को भी कवर करता है।

प्रावधानों और अब एनईपी, 2019 के मसौदे द्वारा परिलक्षित मन्तव्य को ध्यान में रखते हुए सभी नीति-निर्माताओं, योजनाकारों, कार्यान्वयनकर्ताओं और हितधारकों के लिए यह बात महत्त्वपूर्ण है कि वे समावेशन के विज़न का विस्तार करें और अवसर की समानता के साथ-साथ विकलांग व्यक्तियों सहित समाज के सभी वर्गों के लिए आर्थिक और सामाजिक गतिशीलता को भी इसमें सम्मिलित करें। हालाँकि उच्चतर माध्यमिक स्तर तक स्कूली शिक्षा महत्त्वपूर्ण और अनुशंसित

है, लेकिन 14 साल की उम्र तक स्कूली शिक्षा के प्रारम्भिक वर्षों के महत्त्व को कम या अधिक नहीं किया जा सकता है। चूँकि शिक्षा समवर्ती सूची पर है और विकलांगता राज्य का विषय है, अतः हम सभी को राष्ट्रीय नीति को कार्रवाई योग्य कार्यान्वयन प्रावधानों में बदलने के निहितार्थ को समझने की आवश्यकता है। सम्बन्धित आदेश और प्रशासनिक कार्रवाई हमेशा राज्य ही करते हैं। सीएसआर और सार्वजनिक-निजी भागीदारी को बड़े ध्यान और सावधानी के साथ समझने की आवश्यकता है क्योंकि बाज़ार अर्थव्यवस्था ने अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसियों, जैसे यूनेस्को और यूनिसेफ से धन के प्रवाह को प्रभावित किया है।

मानव संसाधन की चुनौती

जब से विशेष और समावेशी शिक्षा की शुरुआत हुई है, विकलांग बच्चों को सशक्त बनाने के लिए मानव संसाधनों की उपलब्धता और निरन्तर क्षमता-निर्माण एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा रहा है। शिक्षा की गुणवत्ता को केवल पर्याप्त व नियोजित और पेशेवर रूप से सक्षम मानव संसाधनों के द्वारा ही सुगम बनाया जा सकता है। स्कूलों में स्टाफ़ को वास्तविक आवश्यकताओं के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए, न्यूनतम आवश्यकताओं के आधार पर नहीं। आरटीई अधिनियम को इस वास्तविकता को पहचानना चाहिए और शिक्षकों, विशेष शिक्षकों और अन्य पेशेवरों की भर्ती को संयोग तथा तदर्थ निर्णय पर नहीं छोड़ना चाहिए। चुनौती यह है :

- क्या हमारे पास पर्याप्त सेवा प्रदाता हैं?
- क्या हमें उस नामावली को भी देखना चाहिए जिसका हम उपयोग करते हैं? उदाहरण के लिए, यदि हम विशेष सेवाओं वाले स्कूलों को विशेष स्कूलों के रूप में देखते हैं, तो ये एक विशेष उद्देश्य के लिए स्थापित स्कूल का एक प्रकार होगा, जैसे कि नवोदय विद्यालय, केन्द्रीय विद्यालय और सैनिक स्कूल।
- इसके अलावा, हम कुछ बच्चों को विशेष सहायता प्रदान करने की योजना कैसे बनाएँ? इसके लिए हमें व्यक्ति के जीवन में हुई दुर्घटनाओं और ऐसे कई अन्य कारणों जैसे स्थान, सामाजिक वातावरण, स्वास्थ्य, जन्म से विकलांगता स्थिति आदि परिस्थितियों का अध्ययन, विश्लेषण, शोध और दस्तावेज़ीकरण करने की आवश्यकता है।[iv]

रिपोर्टिंग एजेंसियों द्वारा जारी किए गए विकलांगता-वार डेटा सेवाओं और संसाधनों के नियोजन के लिए सवाल पैदा करते हैं। न्यूरोलॉजिकल और संवेदी विकलांग बच्चों को स्कूली सुविधाएँ और सेवाएँ मुहैया कराने के लिए उचित निदान और अधिगम के लिए समर्थकारी हस्तक्षेप जैसे महत्त्वपूर्ण मुद्दे हैं। अभी तक अधिगम के परिणामों के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। प्रत्येक बच्चे के अधिगम का स्वरूप अलग है। उदाहरण के लिए, आर्थोपेडिक, सीपी और कई विकलांगता वाले बच्चों की आवश्यकताओं में विविधता है। हालाँकि समान परिणामों के लिए प्रयास करना महत्त्वपूर्ण है, लेकिन यह याद रखना चाहिए कि गति, शिक्षण कला, समर्थन, ग़ैर-उपचारी संवर्धन हस्तक्षेप अलग होते हैं। इनमें अधिगम के परिणामों के निहितार्थ होंगे जो आकलन प्रक्रियाओं और पाठ्यक्रम डिज़ाइन को प्रभावित करेंगे।

विशेष शिक्षा स्कूल — समावेशन की निरन्तरता

समावेशी शिक्षा एकीकरण और मुख्यधारा की पूर्व-मान्य धारणाओं से भिन्न है, जो मुख्य रूप से विकलांगता और विशेष शैक्षिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित सरोकारों की ओर प्रवृत्त थी। इसमें शिक्षार्थियों से यह अपेक्षा की जाती थी कि वे मुख्यधारा में समायोजन के लिए अपने को बदलें या उसके योग्य बनें। इसके विपरीत समावेशन में बच्चे के भाग लेने के अधिकार की बात आ जाती है और साथ ही यह स्कूल का कर्तव्य माना जाता है कि वे बच्चे को स्वीकार करें और उसके अनुकूल हों।

समावेशन में ग़ैर-विकलांग विद्यार्थियों को विकलांग विद्यार्थियों से अलग करने के लिए विशेष स्कूलों या कक्षाओं के उपयोग को अस्वीकार किया जाता है। अधिकार-आधारित यह दृष्टिकोण विकलांग विद्यार्थियों द्वारा पूर्ण भागीदारी और उनके सामाजिक, नागरिक और शैक्षिक अधिकारों के सम्मान पर ज़ोर देता है। आरपीडब्ल्यूडी अधिनियम 2016 में विचारधारा और प्रावधान, दोनों के अनुसार, स्कूलों को 'सामान्य शिक्षा और विशेष शिक्षा' कार्यक्रमों जैसे स्वीकृत शब्दों के बीच अन्तर नहीं करना है। इसकी बजाय स्कूल की प्रक्रियाओं को इस तरह से संरचित किया जाना चाहिए कि सभी विद्यार्थी एक साथ सीखें और साथ ही विशेष स्कूल बनने की गुंजाइश भी हो।[v]

हम अधिकारों के मार्ग के अवरोधक नहीं, सुगमकर्ता हैं! क्या हम, राष्ट्रीय और राज्य सरकारों के रूप में, विकल्पों के अधिकार को प्रयोग में लाने का सम्मान करते हैं? क्या हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि सभी स्कूल समावेशी हैं, और सभी विशेष स्कूल आरटीई अधिनियम के मानदण्डों को पूरा करते हैं? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, जिस पर प्रणाली को विचार करना चाहिए, क्योंकि आरपीडब्ल्यूडी न केवल स्कूलिंग के, बल्कि ज़रूरत पड़ने पर विशेष स्कूल चुनने के अधिकार को भी स्वीकार करता है। नीति आयोग यह अपेक्षा करता है कि मानव संसाधन विकास मन्त्रालय विकलांग बच्चों

की शिक्षा का भी ध्यान रखे। इसलिए केन्द्र और राज्य सरकारों की प्रतिक्रिया यह तय करेगी कि हम समावेशी स्कूलों, विशेष स्कूलों, विशेष सेवाओं वाले स्कूलों जैसे लेबल का उपयोग करने की बजाय समावेशन और सभी की स्कूली शिक्षा के लिए अपनी यात्रा पर आगे कैसे बढ़ेंगे। सीएबीई, सितम्बर 2019 और एनईपी 2019 के परिणाम इन सभी सरोकारों को प्रभावित करेंगे।

शिक्षक-तैयारी और प्रबन्धन

सेवापूर्व शिक्षक तैयारी बहुत महत्त्वपूर्ण है। वैसे तो एनसीटीई सभी शिक्षकों के लिए नियामक निकाय है, किन्तु एनसीटीई से पहले संसद के अधिनियम के रूप में स्थापित की गई भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) विशेष शिक्षकों के प्रशिक्षण को नियंत्रित करती है। 2015 में, आरसीआई ने दो साल के कोर्स के लिए अपने पाठ्यक्रम को अद्यतन किया और दो वर्षीय बीएड और एमएड कोर्स के लिए 2014 की एनसीटीई अधिसूचना का अनुसरण करते हुए विकलांग बच्चों के लिए सामान्य और विशेष स्कूलों के लिए शिक्षकों को तैयार करने के कार्य को गति प्रदान की। ये पाठ्यक्रम दो विकलांगताओं में विशेषज्ञता के साथ समग्र विकलांगता उन्मुख हैं एवं इनमें स्कूल के विषयों के लिए शिक्षण भी सुनिश्चित किया गया है। परन्तु एनसीटीई ने विशेष शिक्षा में डिप्लोमा और डिग्री दोनों की आरसीआई योग्यता को प्राथमिक स्तर तक ही स्वीकार किया है। परिणामस्वरूप स्कूलों में विकलांग बच्चों की सेवा करने के लिए उचित और पर्याप्त संख्या में पेशेवरों के मिलने में कमी आई है क्योंकि वे अनुबन्धित शिक्षक हैं और उनके सामने अपने कैरियर की प्रगति के अवसर नहीं हैं।

शिक्षक शिक्षा के लिए विज़न और चुनौतियाँ (ड्राफ्ट एनईपी 2019)

बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति (2013) सेवा प्रदाताओं की अपेक्षित भूमिका का विवरण देती है, जिसमें शिक्षा के सेवा प्रदाता भी शामिल हैं। 3-18 वर्ष आयु वर्ग और वैधानिक निकायों की भूमिका से सम्बन्धित जनशक्ति आवश्यकताओं को देखने की आवश्यकता है।

सम्बन्धित मंत्रालयों द्वारा जारी तदर्थ, स्वचलित सूचनाएँ अव्यवस्था और नीति के ख़राब कार्यान्वयन का कारण बनेंगी। जैसा कि फेस टू फेस और ओपन एण्ड डिस्टेंस लर्निंग मोड के उपयोग द्वारा उच्च शिक्षा पर अनुभाग में निर्धारित किया गया है, विश्वविद्यालयों और अन्य उच्च शिक्षा संस्थानों द्वारा सेवित सेवापूर्व, सेवाकालीन और निरन्तर पेशेवर विकास को एक सतत प्रक्रिया के रूप में देखा जाना चाहिए। प्रमाणपत्र, क्रेडिट ट्रांसफर, विषय विकल्प, जनशक्ति, भर्ती और सेवा की स्थिति, कैरियर मार्ग आदि सभी को एक साथ सम्बोधित करने की आवश्यकता है। इनमें से कई पहलू सामान्य रूप से बच्चों और विशेष रूप से विकलांग बच्चों (जो अब तक एक उपेक्षित क्षेत्र है) के हित में सफल कार्यान्वयन के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। शिक्षकों के लिए राष्ट्रीय व्यावसायिक मानकों (एनपीएसटी) द्वारा निर्धारित नए दिशानिर्देशों के तहत, शिक्षकों को बीएड कार्यक्रम में विभिन्न आयामों के लिए तैयार किया जाएगा, जिनमें से एक विशेष-शिक्षा शिक्षण भी होगा।

विशेष शिक्षक

स्कूली शिक्षा के कुछ क्षेत्रों में अधिक विशेष शिक्षकों की तत्काल आवश्यकता है। ऐसे विशेषज्ञों की आवश्यकताओं के कुछ उदाहरणों में मिडिल और सैकेण्डरी स्कूल स्तर पर विकलांग बच्चों के लिए विषय शिक्षण, विलक्षण रुचियों और प्रतिभा वाले बच्चों की शिक्षा एवं विशिष्ट विकलांगताओं के लिए शिक्षण शामिल हैं। ऐसे शिक्षकों के लिए न केवल विषय-शिक्षण के ज्ञान और विषय से सम्बन्धित शिक्षा के उद्देश्यों की समझ की आवश्यकता होगी, बल्कि इसके लिए उपयुक्त कौशल और विकलांग बच्चों की विशेष आवश्यकताओं की समझ रखने की भी आवश्यकता होगी।

सामान्य विशेष शिक्षक के पास प्राथमिक विद्यालय के विषय क्षेत्रों में काम करने के लिए पर्याप्त क्षमता होती है और वे मध्य या उच्च विद्यालय में विषय शिक्षक के समर्थक और पूरक भी होते हैं, किन्तु हो सकता है कि एक विशेष शिक्षक को स्कूल के उच्च स्तर पर विषय का शिक्षण करने के लिए पर्याप्त ज्ञान न हो। इसी तरह एक शिक्षक अपेक्षित अनुभव प्राप्त करने के बाद विलक्षण रुचि और प्रतिभा वाले बच्चों की शिक्षा के लिए बेहतर रूप से तैयार होता है। सामान्य शिक्षक के लिए, इन क्षेत्रों को सेवापूर्व शिक्षक प्रशिक्षण के पूरा होने के बाद माध्यमिक विशेषज्ञता के रूप में विकसित किया जा सकता है। इन्हें सेवाकालीन रूप में पूर्णकालिक या अंशकालिक या मिश्रित पाठ्यक्रम की तरह पेश किया जाएगा।

निष्कर्ष

चुनौती यह है कि हम क्रेडिट-आधारित प्रणाली, बदलाव के विकल्प और नए संयोजनों की पेशकश करने वाले बहु-विषयक विश्वविद्यालयों में शिक्षा के भावी विभागों को कैसे देखते हैं? कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय और एनसीईआरटी के आरसीई/आरआईईएस ने भाषा, मानविकी, विज्ञान और वाणिज्य में विशेषज्ञता के साथ चार वर्षीय एकीकृत शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम चलाए हैं। यहाँ तक कि एक समय था जब बीएड और एमएड में प्राथमिक स्तर पर कृषि और

अन्य व्यावसायिक विकल्प भी उपलब्ध थे। दुर्भाग्य से, इन संस्थानों को कभी भी डिग्री देने और अपने सम्बन्धित राज्य के विश्वविद्यालयों में सम्बद्ध कॉलेज बने रहने का मौक़ा नहीं मिला। हमें इन अनुभवों से सीखना चाहिए, आख़िरकार, हम हमारे वर्तमान निर्णयों से प्रभावित होने वाली भविष्य की पीढ़ियों के प्रति जवाबदेह हैं।

नीति-निर्माता और प्रशासक इन मुद्दों से जूझ रहे हैं, इसे आगे बढ़ाने के लिए विकलांग बच्चों को अभी भी हमारी आवश्यकता है। आइए हम निम्नलिखित आदर्शों का पालन करें और सीडब्ल्यूडीएस के ध्येय के हिमायती बनें :[vi]

1. जीवनपर्यन्त सीखने वाले बनें और अपने विद्यार्थियों को भी ऐसा बनने के लिए प्रेरित करें।
2. नवीनतम गतिविधियों के सम्पर्क में रहें, जैसे कि अधिगम के परिणाम, सतत तथा व्यापक मूल्यांकन और नैदानिक उपकरणों के रूप में परीक्षण; एक सतत और समृद्ध प्रक्रिया के रूप में शिक्षण-अधिगम।
3. सभी बच्चों के लिए यूनिवर्सल डिज़ाइनिंग फॉर लर्निंग (यूडीएल) को सशक्त बनाने की प्रक्रिया पर विचार करें।
4. विश्वास करें, पहचानें और सम्मान करें कि हम सब एक ज़िम्मेदार नागरिक हैं और इस हममें विकलांग व्यक्ति भी शामिल हैं।
5. अपनी ताक़त और कमज़ोरियों को जानें, अवसरों की तलाश करें, आदेशक बनने की बजाए उत्तरदायी बनें और अपनी परिस्थितियों को बदल डालें।

[i] Birrell, Ian. (23 April 2019). *Greta Thunberg teaches us about autism as much as climate change*. https://www.theguardian.com/commentisfree/2019/apr/23/greta-thunberg-autism/ accessed on 21 September 2019.

[ii] Smith, M. K. (2015). What is education? A definition and discussion. *The encyclopaedia of informal education*. [http://infed.org/mobi/what-is-education-a-definition-and-discussion/. Retrieved 20 September 2019.

[iii] Portions of this writing are also from Author's chapter on Education of Persons with Disabilities in Indian Education: A developmental Discourse by Mukhopadhyay Marmar and Parhar Madhu (Eds), Shipra Publications, 2015.

[iv] Will advise all readers to read books by Shivani Gupta, No Looking Back, Rupa Publications Pvt. Ltd and Malini Chib, One Little Finger, Sage India.

[v] http://seshagun.gov.in/sites/default/files/2019-05/disabilitiesAct2016.pdf/accessed 22 September 2019.

[vi] Adapted from Mukhopadhyay, Sudesh, Making the Difference: Our Roles and Responsibilities. In Verma Preeti et.al. (eds.) (2019); *Be the Difference: Equality and Equity in Education*, Mumbai; Department of Special Education, SNDT.PP332-333.



डॉ. सुदेश मुखोपाध्याय, आरसीआई की पूर्व अध्यक्ष हैं। वर्तमान में वे एनसीटीई की स्थाई समिति की सदस्य हैं। वे लंदन यूनिवर्सिटी के इंस्टीट्यूट ऑफ़ एजुकेशन इन स्पेशल एजुकेशन की एसोसिएट हैं और मैनिटोबा यूनिवर्सिटी, कनाडा और मोनाश यूनिवर्सिटी, सिडनी, ऑस्ट्रेलिया की विज़िटिंग फेलो भी हैं। उनसे drsudesh.mukhopadhyay@gamil.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

सौजन्यता – चुनौतियों के बावजूद

एक बहन के उद्गार

प्रेमा रघुनाथ

मैं कई वर्षों तक अपने घर में सबसे छोटी बनी रही, इसलिए जब मेरी बहन का जन्म हुआ और मैं दीदी बनी तो सबसे पहले मेरे मन में उत्साह और गर्व की भावना जगी। मैं यह मानती हूँ कि मैं बहुत सन्तुष्ट भी हुई क्योंकि आख़िरकार मुझे अब इस बात का अवसर मिल गया था कि मैं किसी को आदेश दे सकूँ और कोई उसका पालन करे, जैसे कि मैं आज तक करती आई थी।

लेकिन समय बीतता गया और ऐसा कुछ नहीं हुआ।

पता चला कि मेरी बहन को प्रमस्तिष्क पक्षाघात या सेरेब्रल पॉल्ज़ी (सीपी) थी। इसके कारण परिवार में उत्पन्न हुई घबराहट, उथल-पुथल और चिन्ता की भावना को कम होने में कई महीने लग गए। ज़ाहिर है कि मेरे माता-पिता बहुत चिन्तित थे और उन्हें इस बारे में कुछ पता नहीं था। उस समय इस तरह की स्थितियों के बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं होती थी। परिणामस्वरूप उसे गत्यात्मक, बोलने और विकास सम्बन्धी अनेक विकलांगताएँ हुईं। घर में विकलांग बच्चे के होने का मतलब था एक बहुत ही परिष्कृत प्रकार का सामाजिक बहिष्कार— हर कोई दया दिखाता था और ऐसे व्यवहार करता था मानो हमारी स्थिति समझता हो, लेकिन वास्तव में ऐसा था नहीं। सामाजिक समारोहों के निमन्त्रण बहुत कम हो गए थे क्योंकि हमने तय किया था कि हम गीता (मेरी बहन) को लोगों की नज़रों से दूर या छुपाकर नहीं रखेंगे, वह हमारे परिवार की पूर्ण रूप से सहभागी सदस्या होगी; अतः हमारी उपस्थिति शर्मिन्दगी का कारण बन जाती। मैं उन मुद्दों को सामने रखने की कोशिश कर रही हूँ जो इस स्थिति से उत्पन्न हुए। हालाँकि उस समय की तुलना में अब चीज़ें बहुत बदल गई हैं, लेकिन मानव दृष्टिकोण अभी भी वैसा ही है। मुझे लगता है कि इसे पढ़ने वाले बहुत-से लोग कुछ पहलुओं को प्रासंगिक मानेंगे।

बचपन का खो जाना

पहली बात तो परिवार के अन्य बच्चों को रातोंरात बड़ा होना पड़ता है— कम से कम बाहरी रूप से। घर में विकलांग बच्चे के होने से जो भारी बदलाव अनिवार्य रूप से होते हैं, उनमें कहीं मैंने अपने माता-पिता को खो दिया। घर की सारी गतिविधियाँ कई ज़रूरतों के इर्द-गिर्द घूमने लगती हैं— सामान्य दिनचर्या में विभिन्न उपचारों जैसे फिज़ियोथेरेपी, स्पीच थेरेपी और अन्य माँगों को समायोजित करना पड़ता है। यदि माता-पिता इस स्थिति के प्रति जागरूक न हों तो इसके परिणामस्वरूप अन्य भाई-बहनों को अधिक ज़िम्मेदारी लेनी पड़ सकती है— ऐसी ज़िम्मेदारी जिसे वे उस कम उम्र में शायद ही सँभाल सकें। नतीजतन उन्हें उनकी मित्र-मण्डली से बाहर कर दिया जाता है।

दूसरा, विकलांग बच्चे को बचाने के प्रयास में कभी-कभी अन्य भाई-बहनों की कई उपलब्धियों को उतना महत्त्व नहीं दिया जाता। हालाँकि आज बहुत-सी चीज़ें और परिभाषाएँ बदल गई हैं, फिर भी मुझे लगता है कि छोटे और बड़े भाई-बहनों पर भी उतना ही ध्यान देना चाहिए ताकि वे अपनी क्षमतानुसार आगे बढ़ सकें।

तीसरा, इन कमियों को कभी भी पूरा नहीं किया जा सकता। मैंने ख़ुद अपने में वयस्कता के इन प्रभावों को देखा है, जैसे चिन्ता, उत्तरजीवी का अपराधबोध और भ्रमित भावनाएँ।

समानुभूति का बढ़ना

ऐसी परिस्थिति में बड़े होने का एक अच्छा पहलू यह है कि हम और अधिक सहनशील बनते हैं— यह सबक़ भी हम जल्द ही सीख लेते हैं कि जीवन में ऐसी स्थितियाँ अकस्मात ही आ जाती हैं जो हमें आश्चर्यचकित कर देती हैं। ज़िम्मेदारी की भावना जल्द ही आ जाए तो नेतृत्व की स्थिति को स्वीकार करने के साथ-साथ आत्मनिर्भरता की भावना भी विकसित होती है। मेरा ही उदाहरण देखिए, मुझे लगता है कि इसने मुझे आपसी भिन्नता के प्रति अधिक सहिष्णु बना दिया है— मुझे ऐसा लगता ही नहीं था कि किसी के साथ सहज सम्बन्ध बनाने के लिए उन्हें मेरे समान होना चाहिए। तो एक अर्थ में देखा जाए

तो दोस्त बनाना आसान हो गया था, हालाँकि दूसरी ओर यह अधिक कठिन भी था, क्योंकि एक स्तर पर दोस्ती की परीक्षा इस बात से होती थी कि सामने वाले ने गीता को कैसे स्वीकार किया। यदि वे उसे शामिल करने को तैयार होते तो वे सही थे, यदि नहीं, तो झगड़े होते थे जिनका अन्त कभी-कभी आँसू बहाकर होता था।

बेहद प्रेम

एक विकलांग व्यक्ति की बहन होने के नाते मुझे इस महत्वपूर्ण बात का उल्लेख ज़रूर करना चाहिए कि इस रिश्ते में प्रेम, देखभाल और परिपोषण की एक ऐसी असाधारण भावना होती है जो सिर्फ़ अच्छी होती है तथा इसके सिवा कुछ और हो भी नहीं सकती। आमतौर पर यह सब महसूस करने के लिए लोगों को अपने स्वयं के बच्चों के जन्म का इन्तज़ार करना पड़ता है, लेकिन मुझे लगता है कि हम एक ऐसी विशेष श्रेणी के लोग हैं जो इन चीज़ों का अनुभव पहले ही कर लेते हैं। यह खोए हुए बचपन के उस पहलू से जुड़ा हुआ है, जिसका मैंने पहले उल्लेख किया था, लेकिन इसके बावजूद भी यह लाभकारी है।

माता-पिता क्या कर सकते हैं

घर में विकलांग बच्चे के होने का एक महत्त्वपूर्ण आयाम यह है कि यह हर किसी के जीवन को प्रभावित करता है— माता-पिता, भाई-बहन, दादा-दादी और कुछ हद तक, विस्तारित परिवार के जीवन को भी। माता-पिता के मन में कई प्रकार की भावनाएँ होती हैं जैसे कि उदासी, त्याग और कभी-कभी अस्वीकरण; जबकि भीतर ही भीतर उन्हें यह भी पता होता है कि यह हालत बदलने वाली नहीं है। हालाँकि, दैनिक जीवन तो जीना ही पड़ता है जैसे कि काम पर जाना, घर चलाना, सामाजिक सम्बन्ध रखना, अन्य ज़िम्मेदारियों को निभाने के साथ-साथ दूसरे बच्चों, बड़े या छोटे, के लिए समय निकालना और ऊर्जा बचाए रखना। यह सूची चुनौतियों से भरी है।

लेकिन मुद्दे की बात यह है कि दूसरे बच्चे (या बच्चों) को भी एक नए सामान्य रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उनके ग्रेड नीचे गिर सकते हैं (जैसा मेरे साथ हुआ था), उन्हें चिड़चिड़ापन हो सकता है, उनमें नए तरह के व्यवहार नज़र आ सकते हैं। इन्हीं सब मुद्दों पर माता-पिता को मदद मिलनी चाहिए ताकि अन्य भाई-बहनों को उनके साथ कुछ गुणवत्तापूर्ण समय बिताने का अवसर और स्थान मिल सके। यह कहना आसान है, करना मुश्किल, लेकिन अतीत के ज्ञान के आधार पर अब मैं यह देख सकती हूँ कि उस वक़्त क्या अलग हो सकता था।

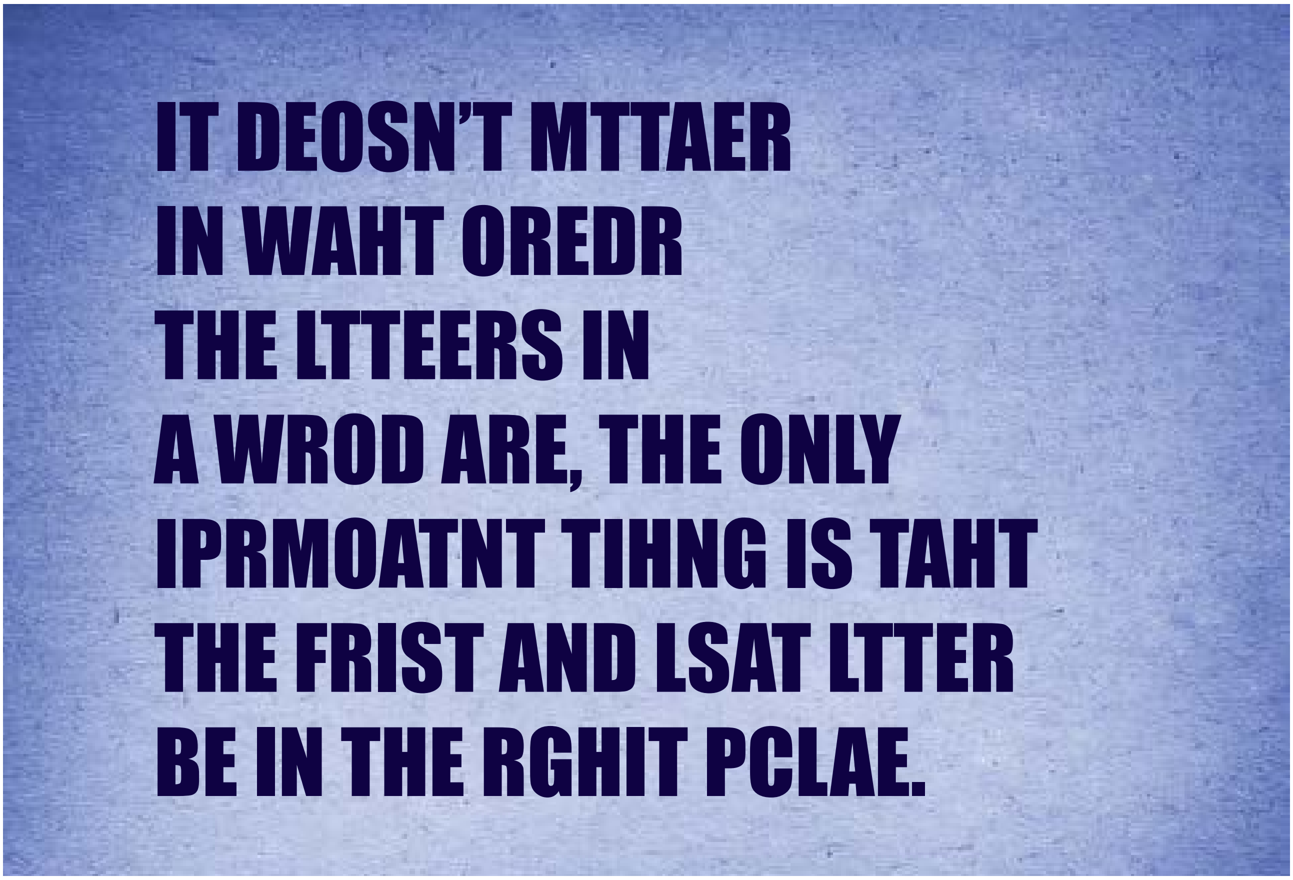
अन्त में, मैं यह कहना चाहती हूँ कि यदि विकलांग बच्चों के माता-पिता स्वयं बहुत ख़ास बन जाते हैं— दो सामान्य मानव जो अपने चरित्र में एक ऐसा पक्ष विकसित करते हैं, जिसे केवल बहादुरी की संज्ञा दी जा सकती है और उनके भीतर एक ऐसी ताक़त आ जाती है जिसका उन्हें भान तक नहीं होता —तो भाई-बहन भी ख़ास, बहुत ख़ास बन जाते हैं। उनका विशिष्ट स्थान इसलिए है क्योंकि वे सदैव दूसरों के निर्णयों को ठीक प्रकार से जाने बिना उनका बेहिचक समर्थन करते हैं, वे केवल अपने भाई या बहन के पक्ष में खड़े रहते हैं और उनके लिए वे कुछ भी करने को तैयार रहते हैं।

मैंने यह सब कुछ गीता से ही सीखा, जिसकी सौजन्यता और स्नेहिल, उदार स्वभाव बचपन में हुई उथल-पुथल से कहीं बढ़कर था। अपनी शारीरिक और भावनात्मक दोनों प्रकार की ज़बरदस्त चुनौतियों के बावजूद उसने यह सौजन्यता दिखाई। वह किसी भी व्यक्ति को भली-भाँति समझ सकती थी और जान सकती थी कि वे क्या हैं और मुझे उस ज्ञान का लाभ होता था! हम प्रिय बहनें थीं और सबसे अच्छी दोस्त भी।



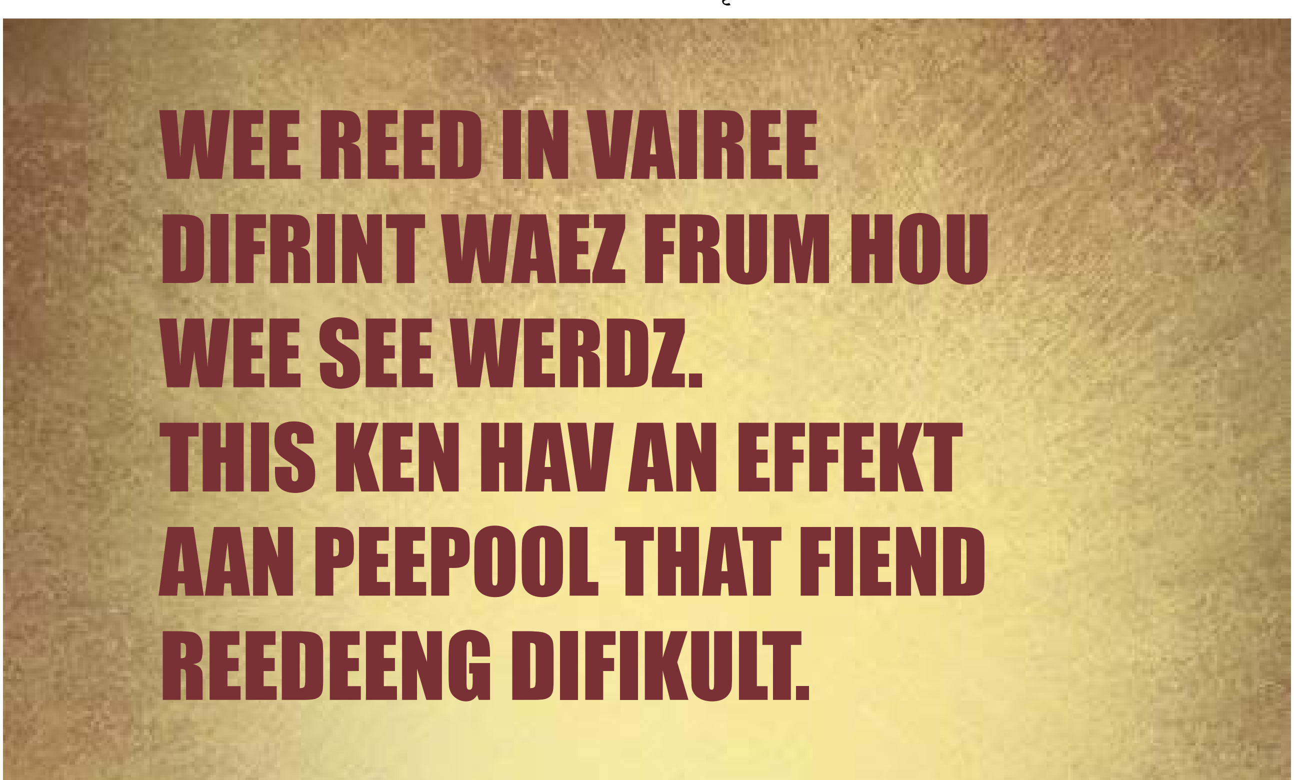
प्रेमा रघुनाथ लर्निंग कर्व की मुख्य सम्पादक हैं। पहले सीबीएसई और बाद में चेन्नई के एक आईबी स्कूल में कई वर्षों तक पढ़ाने के बाद, अब वे चेन्नई के कुछ स्कूलों की समितियों में शामिल हैं। उनसे prema.raghunath@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल



These are examples of transpositional (mixing-up letters and sounds) and phonetic spelling. Children with dyslexia tend to interchange letters and spell phonetically.
Courtesy: Madras Dyslexia Association, Chennai

यह स्थानान्तरित (अक्षरों और ध्वनियों को इधर-उधर करने) और ध्वन्यात्मक वर्तनी के उदाहरण हैं। डिस्लेक्सिया से ग्रस्त बच्चे अक्षरों की अदला-बदली करने और ध्वन्यात्मक रूप से वर्तनी लिखने की ओर प्रवृत्त होते हैं।



यात्रा के माध्यम से अधिगम
दीपिका स्कूल के अनुभव
सुमति रामजी

दीपिका स्कूल में हमारे पास ऐसे विद्यार्थी हैं जिन्हें पढ़ने और लिखने में कठिनाई होती है, कुछ विद्यार्थियों के ध्यान देने की अवधि बहुत ही कम है और कुछ धीमी गति से सीखने वाले हैं। जब शिक्षण के पारम्परिक तरीक़ों का उपयोग करने से सकारात्मक परिणाम नहीं मिले तब हमने 2007 में एक छोटे-से प्रयास के साथ शुरुआत की। सामाजिक विज्ञान की शिक्षा के लिए हम अपने विद्यार्थियों को आन्ध्र प्रदेश के भ्रमण के लिए ले गए और देखा कि इसका उन पर अद्भुत प्रभाव पड़ा। इसने उनके व्यक्तित्व को पूरी तरह से बदल दिया। विद्यार्थियों ने जीवन-कौशल सीखे जो एक सन्तुलित दृष्टिकोण के लिए आवश्यक हैं, उन्होंने अपने आसपास की दुनिया में काफ़ी रुचि दिखाई। वे प्राचीन काल के राजाओं द्वारा बनाए गए स्मारकों और मूर्तियों की भव्यता से प्रेरित हुए और जब वे वापिस आए तो उनमें पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से सीखने का एक नया उत्साह था। उस क्षेत्र की फ़सलों के बीच घूमने से उन्हें देश के भूगोल से सम्बन्धित प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त हुआ।

आन्ध्र प्रदेश की अपनी पहली यात्रा में हम कृष्णा नदी की जल ऊर्जा परियोजनाएँ (श्रीशैलम और नागार्जुनसागर) देखने गए, जहाँ विद्यार्थियों ने बहते पानी की ऊर्जा को विद्युत में परिवर्तित होते हुए देखा। बेलम गुफाओं के स्टैलैक्टाइट तथा स्टैलैग्माइट में सरककर चलते हुए उन्होंने प्रकृति के आश्चर्य का अनुभव किया। गूटी स्टेशन पर ट्रेन का इन्तज़ार करते हुए, स्टेशन मास्टर ने डीज़ल इंजनों पर एक अनौपचारिक बातचीत की व्यवस्था की, जिसमें हमारे विद्यार्थियों ने इंजनों के बारे में अपनी सभी शंकाओं का समाधान प्राप्त किया। रोज़ाना रेलवे स्टेशन में इंजनों के साथ काम करने वाले एक इंजीनियर से डीज़ल इंजन के बारे में जानकारी प्राप्त करना एक नया तरीक़ा था।

केरल में रबड़ के बाग़ानों की यात्रा करते हुए उन्होंने देखा कि रबड़-दूध या लेटेक्स को कैसे इकट्ठा किया जाता है, संसाधित करने के लिए अलग रखा जाता है, पानी निकालने के लिए निचोड़ा जाता है और फिर प्रसंस्करण के लिए रबड़ के कारखाने में भेजा जाता है। वे एक एस्टेट में रहे, स्थानीय भोजन खाया, मधुमक्खी-पालन की प्रक्रिया देखी और लेटराइट मिट्टी से ईंटें बनाने का तरीक़ा समझा। उन्होंने बेहतर गुणवत्ता वाले जायफल के उत्पादन के लिए जायफल के पेड़ों में क़लम बाँधने (ग्राफ्टिंग) के बारे में जानकारी प्राप्त की, कृषि विज्ञान विभाग में गए और कुकुरमुत्ते यानी मशरूम की खेती और कृमि-खाद (वर्मी-कम्पोस्टिंग) के निर्माण के बारे में सीखा। अछूती वनभूमि में एक झरने के शीर्ष पर चट्टान पर अपने पेट के बल लेटे हुए उस झरने को देखने में उन्हें जैसा अपूर्व अनुभव और रोमांच हुआ, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था।

विद्यार्थियों ने कप्पड बीच, जहाँ पुर्तगाली खोजकर्ता वास्को डी गामा पहुँचा था, ऑलिव रिडले कछुआ हैचरी और अरक्कल संग्रहालय में प्राचीन फ़र्नीचर और शस्त्रागार का एक खज़ाना देखा, जिससे उन्हें अपने देश के असंख्य आकर्षणों के बारे में पता चला। जब यह यात्रा समाप्त होने को थी तो उनमें से कोई भी घर वापस नहीं जाना चाहता था!

इसके बाद की यात्राओं में वे वेल्लोर और सेंजी (जिंजी) के क़िले देखने गए। वहाँ विद्यार्थियों ने देखा कि उस समय के शासक कितने उदार और धर्मनिरपेक्ष थे कि उन्होंने क़िले के परिसर के भीतर सभी प्रकार की पूजा की अनुमति दे रखी थी। सेंजी क़िले के ऊपर कठिन चढ़ाई चढ़ते हुए हम सभी को उन आरामदायक स्थितियों का एहसास हुआ जिनमें हम रहते हैं!


मारुथुवामलई, कन्याकुमारी

स्थानिक अभिविन्यास सम्बन्धी कठिनाइयों वाले विद्यार्थियों के लिए भूगोल विषय में मानचित्र पढ़ना आमतौर पर एक जटिल कार्य होता है। इसलिए, देश के सबसे दक्षिणी छोर, कन्याकुमारी की यात्रा में, विद्यार्थियों ने देश के इस छोर को देखने के लिए पास की पहाड़ी मारुथुवामलई पर चढ़ाई की और स्थलाकृति को समझा। बंगाल की खाड़ी, हिन्द महासागर और अरब सागर के तीन शक्तिशाली जल निकाय नीचे दिखाई दे रहे थे। हमने प्रत्येक समुद्र की ओर संकेत किया और हमारे विद्यार्थियों ने वास्तविक जीवन में सामाजिक विज्ञान सीखा। नागरकोइल के पास वट्टकोट्टई देखकर हमें डचों के ख़िलाफ़ हुए युद्ध में मार्तण्ड वर्मा की वीरतापूर्ण विजय याद हो आई। हमने सेलाइकल, ओलइकल की गूँज पर मार्च किया और सैकड़ों साल पहले के उस दृश्य को फिर से रचा जब डच लोगों ने सैनिकों के एक पैर पर साड़ी (सेलेई) का टुकड़ा तथा दूसरे पैर पर ताड़ का पत्ता (ओलई) बाँधा था और उनसे सेलाइकल, ओलइकल कहलवाते हुए मार्च करवाया था।

कर्नाटक की अपनी स्कूली यात्रा में हमारे विद्यार्थी चित्रदुर्गा, हम्पी, दारोजी भालू अभयारण्य, अइहोळे, पट्टदक्कल, बादामी, कूडलसंगमा और बीजापुर गए। भारत को ताज पहनाने वाली विरासत की समृद्धि उन विद्यार्थियों के हाव-भावों में दिखाई देती थी क्योंकि वे यह सोचकर आश्चर्यचकित थे कि बिना तकनीक की मदद से यह सब कैसे बनाया गया होगा। वे हमेशा यही टिप्पणी करते कि प्राचीन काल के लोग हमसे कहीं अधिक नवीन पद्धतियाँ अपनाया करते थे। विद्यार्थियों ने चित्रदुर्गा में ओनके ओबव्वा के साहसिक कार्य को फिर से अभिनीत किया,



पट्टचित्र रघुराजपुर, ओडिशा

बादामी, पट्टदक्कल और अइहोळे की मूर्तियों पर अचम्भित हुए और उन क्षेत्रों की धर्मनिरपेक्षता को आत्मसात किया। बीजापुर के गोल गुम्बज़ नामक तकनीकी चमत्कार को देखकर हमें आदिल शाह का वैभव याद हो आया।

संस्कृति के इस उत्सव में एक करघे की यात्रा भी शामिल थी, जहाँ हमने एक विशिष्ट इल्कल साड़ी की बुनाई देखी, होस्पेट के शक्तिशाली तुंगभद्रा बाँध पर सूर्यास्त होते हुए देखा, स्थानीय व्यंजनों का स्वाद लिया और ज्ञान की अनबुझी प्यास लिए वापस आ गए।

हमें एक सांस्कृतिक बैठक में आमन्त्रित किया गया था, जिसने हमारे लिए उड़ीसा की यात्रा के द्वार खोले। यहाँ हमारे विद्यार्थी देश भर के मुख्यधारा के विद्यार्थियों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर खड़े हुए और नृत्य, संगीत और शिल्प जैसी कला के विभिन्न रूपों में भाग लिया। उड़ीसा की भूमि हमें क्या कुछ भेंट में देती है— यह जानना एक अविस्मरणीय अनुभव था।

जगन्नाथ, मुक्तेश्वर और लिंगराजा के मन्दिरों के घुमावदार गुम्बद, विशाल चिल्का झील पर ध्यानमग्न होकर किया गया नौकाविहार, पिपली के शिल्प बाज़ारों में रंगों का पर्व, कोणार्क का राजसी सूर्य मन्दिर और रघुराजपुर के पट्टचित्र कलाकारों की बेजोड़ प्रतिभाओं को देखकर हमारे विद्यार्थियों को अपार हर्ष हुआ।



हुमायूँ का मक़बरा, दिल्ली

क़रीब एक सप्ताह तक चलने वाली छोटी यात्राओं के अनुभव के बाद हमने एक पखवाड़े की यात्राओं की योजना बनाई और देश के बड़े क्षेत्र के हर हिस्से की यात्रा की। हमारी इस यात्रा का विषय था प्रथम स्वतंत्रता संग्राम, जिसे हमने पश्चिम बंगाल में 1757 के प्लासी के युद्ध के साथ शुरू किया। हम विद्यार्थियों को कोलकाता, बक्सर, कानपुर, लखनऊ, दिल्ली, झाँसी और अमृतसर तक ले गए। इस यात्रा के दौरान उन्होंने जाना कि आख़िर स्वतंत्रता संग्राम था क्या। हम ब्रह्मपुर के एक छोटे-से गाँव से गुज़रे, विविध संस्कृति की बारीकियों को समझा,

कोलकाता में रवीन्द्रनाथ टैगोर के घर ठाकुर बारी को देखा, वहाँ की प्रसिद्ध लूची-आलू दम और रसगुल्ला खाया; इन सब गतिविधियों से स्कूल की यात्रा के स्वाद में एक विशिष्टता आ गई।

जब इतिहास को पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से पढ़ाया जाता है, तो यह बहुत अमूर्त और असत्य लगता है, लेकिन पश्चिम बंगाल से लेकर दिल्ली तक के राज्यों में फैले प्रथम स्वतंत्रता संग्राम और प्लासी के युद्ध जैसे प्रसिद्ध युद्ध स्थलों का दौरा करने पर विद्यार्थियों ने देखा कि लखनऊ में युद्ध से कितना विनाश हुआ था; कानपुर में कितने मासूमों की जान चली गई थी। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में शामिल प्लासी, कोलकाता, कानपुर, झाँसी और दिल्ली की यात्राओं से लौटने के बाद, विद्यार्थियों ने एक स्टेज शो किया, जिसमें उन्होंने मानव संरचनाओं के माध्यम से इन स्मारकों का निर्माण किया। उन राजाओं और रानियों के शौर्य का अभिनय किया जिन्होंने युद्ध किया था और उन दृश्यों का मंचन किया जिनमें नेताओं ने देश की आज़ादी के लिए अपना बलिदान दिया था। इससे उन्हें इस बात की बेहतर समझ हो पाई कि नेताओं ने किस प्रकार की स्थितियों का अनुभव किया और विद्यार्थियों के रूप में वे दुनिया को एक बेहतर जगह बनाने के लिए क्या कर सकते हैं।

पश्चिम बंगाल में एक जूट मिल में जाकर वे यह समझ पाए कि रेशों से बोरियाँ कैसे बनाई जाती हैं। उन्होंने इस बात को भी महसूस किया कि मज़दूर कितने कष्टमय माहौल में कार्य करते हैं। ट्रेन द्वारा देश के विशाल क्षेत्र की यात्रा करते हुए उन्होंने विभिन्न पर्वत शृंखलाओं, समुद्र, नदियों और विभिन्न प्रकार की मिट्टी में पैदा होने वाली फ़सलों के साथ ही हर राज्य के विविध उद्योगों को भी देखा।



धोलावीरा, गुजरात

गुजरात की यात्रा से भी बहुत कुछ सीखने को मिला। वहाँ का मुख्य आकर्षण लोथल और धोलावीरा का भ्रमण था जहाँ सिन्धु घाटी की सभ्यता विकसित हुई। जब हम खण्डहरों से गुज़रे तो हम फिर से उस गौरवशाली अतीत की रचना करते चले जो इतने रहस्यमय तरीक़े से ग़ायब हो गया है। पास ही में स्थित जीवाश्म पार्क भी उतना ही आकर्षक था। वहाँ हर छोटे पत्थर में छोटे समुद्री जीवों के जीवाश्म थे जो मानो कोई कहानी सुना रहे थे। कच्छ के महान रण की बंजर सुन्दरता, भुजोड़ी के कलाकारों के हाथों का चमत्कार, फिर चाहे वह बढ़ईगिरी हो, ब्लॉक प्रिंटिंग हो, कच्छ की कढ़ाई या बुनाई सभी इस भूमि की सांस्कृतिक विविधता को दोहरा रहे थे। लौटते हुए हमने कोंकण तट की यात्रा की और वहाँ की वनस्पतियों और जीवों की सुन्दरता को मन में बसा लिया। दूधसागर झरने ने हमारे मन पर एक यादगार छाप छोड़ी और हमने चुपचाप ख़ुद से यह वादा किया कि हम इस प्राकृतिक आश्चर्य को देखने के लिए फिर आएँगे।

मध्य प्रदेश का भीमबेटका हमें गुहामानवों के प्राचीन इतिहास में ले गया, जहाँ के चित्रों ने हमें अनन्त काल पहले के पूर्वजों के जीवन के बारे में जानकारी दी। एलोरा के मूर्तिकारों की आकर्षक प्रतिभा, दौलताबाद का भव्य क़िला, औरंगाबाद के बीबी का मक़बरा में औरंगज़ेब द्वारा ताजमहल को फिर से बनाने का प्रयास, उस क्षेत्र की पैठणी बुनाई—सभी जगह सीखने के लिए बहुत कुछ था और जो कुछ सीखा वह स्थायी महत्त्व का था। साँची के स्तूप या एलोरा में मूर्तियों के सामने बैठकर हमारे विद्यार्थियों ने दृश्य कला अभ्यास के रूप वे चित्र बनाए जो उन्होंने अपने सामने देखे।

सांस्कृतिक रूप से इतनी विविध धरती पर हम जिन परिस्थितियों का सामना करते हैं, वे तनाव और मनोभावों से निपटना सिखाती हैं। घर की संरक्षित सुख-सुविधाओं से दूर होने के कारण विद्यार्थी आत्मनिर्भर होना सीखते हैं, अपने सामान को सँभालकर रखना सीखकर वे और अधिक ज़िम्मेदार बनते हैं, दूसरों के साथ समानुभूति रखते हैं, विशेष रूप से भावनात्मक अभिघात से गुज़रने वालों के साथ, अपने माता-पिता की सहायता के बिना स्वतंत्र रूप से निर्णय लेते हैं, छोटी-मोटी समस्याओं को हल करते हैं, समय-प्रबन्धन, नेतृत्व और टीम वर्क जैसे व्यावहारिक कौशल सीखते हैं, विभिन्न संस्कृतियों को स्वीकार करते हैं और स्थितियों की माँग के अनुसार अनुकूलन करते हैं।

दारोजी भालू अभयारण्य में जाकर और वहाँ के आलसी भालुओं को देखकर विद्यार्थियों ने सरकार को पत्र लिखने के बारे में सोचा। पत्र में उन्होंने यह अनुरोध किया कि उस अभयारण्य के आसपास के क्षेत्र में इस्पात संयंत्र के निर्माण की अनुमति न दी जाए, और इस प्रकार, उन भावी नागरिकों के लिए मार्ग प्रशस्त किया जो पर्यावरण के प्रति सजग हैं व नेक काम करने में सक्रिय भूमिका निभाएँगे।

एक अलग तरीक़े से सीखने से, जो सीखा जा रहा है उसकी प्रासंगिकता सामने आती है, जिससे सामाजिक परिवर्तन होता है। ऐसी स्कूली यात्राओं के माध्यम से विद्यार्थी देश का इतिहास सीखते हैं और महसूस करते हैं कि अगर विचारपूर्वक

कार्य किया जाए तो अतीत में की गई ग़लतियाँ नहीं दोहराई जाएँगी। पश्चिम बंगाल के एक गाँव में जब उन्होंने लोगों को चूल्हे के लिए ईंधन के रूप में कोयले और गोबर का उपयोग करते हुए देखा या जब उन्होंने सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा और बायोगैस जैसे ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों को देखा तो उन्हें जीवन जीने के वैकल्पिक तरीक़ों की सम्भावनाओं का पता चला। पश्चिमी घाटों की जैव-विविधता ने उन्हें सिखाया कि प्रकृति कैसे समग्र रूप से देती है और 'जीवन चक्र' में प्रकृति के प्रत्येक तत्व का होना आवश्यक है। उन बच्चों के साथ बातचीत करके, जिन्हें खाने के लिए पर्याप्त भोजन और पहनने के लिए कपड़े नहीं मिलते हैं तथा जो स्कूली शिक्षा से वंचित हैं, उन्हें महसूस हुआ कि वे कितने भाग्यशाली हैं। एक रक्षा प्रतिष्ठान में रहने से विद्यार्थियों को अनुशासित होने और स्वस्थ रहने के लिए शारीरिक स्वास्थ्य को प्रमुखता देने के बारे में प्रत्यक्ष रूप से सीखने को मिला। विभिन्न भाषाओं को सुनना, ट्रेन में विभिन्न लोगों से जानकारी प्राप्त करना, घर के भोजन से अलग भोजन करना आदि सांस्कृतिक भारत की विविधता के सबक़ थे।

सामाजिक विज्ञान के वर्तमान पाठ्यक्रम और शिक्षण में तथ्यों को सीखने पर ज़ोर दिया जाता है; विवेचन, अनुप्रयोग या समस्या को हल करने के कौशल पर शायद ही ध्यान दिया जाता है। हमारी स्कूली यात्राएँ सीखने वाले को अमूर्त सिद्धान्त और वास्तविक दुनिया के बीच महत्वपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने में सक्षम बनाती हैं। यह बात तब नज़र आई जब मेरे विद्यार्थियों ने झाँसी नगर पालिका शब्द पर ग़ौर किया और निष्कर्ष निकाला कि स्थानीय सरकार को नगर पालिका होना चाहिए न कि निगम। शायद वे अपने शहर में नगर पालिका की जगह नगर निगम लिखा देखते रहे हैं। उन्होंने जिस किसी भी शहर या कस्बे की यात्रा की, वहाँ के राजनीति विज्ञान से सम्बन्धित वे अवलोकन किए जो उन्होंने सैद्धान्तिक रूप से पढ़े थे, जैसे चुनावी पोस्टर, सरकारी भवन, मंत्रियों के बंगले देखना। हर रात को यात्रा के सभी स्थानों और उसके संक्षिप्त महत्त्व के बारे में लिखा जाता ताकि अधिगम का सुदृढ़ीकरण हो सके।

प्रत्येक यात्रा के अन्त में विद्यार्थी बहुमूल्य प्रतिक्रिया देते हैं। कुछ दिन एक साथ बिताने से आपसी सम्प्रेषण सम्बन्धी सीमाएँ टूट जाती हैं, यहाँ तक कि न बोलने वाला बच्चा भी यह बताता है कि यात्रा का उस पर क्या प्रभाव पड़ा। विद्यार्थी हमें बताते हैं कि किस चीज़ ने उन्हें सबसे ज़्यादा प्रभावित किया, किस चीज़ से उन्हें परेशानी हुई और क्या अलग हो सकता था।

हर यात्रा के बाद शिक्षक पूरे भ्रमण की एक रिपोर्ट और खर्च का विवरण प्रस्तुत करते हैं ताकि बाद की यात्रा के लिए बजट और योजना में बदलाव के बारे में चर्चा की जा सके। माता-पिता के साथ बैठक की जाती है जिसमें विद्यार्थियों की ताक़त और गुणों पर चर्चा की जाती है, उनके अच्छे व्यवहार पर प्रकाश डाला जाता है, जिससे माता-पिता से उन्हें अधिक स्वीकृति और प्रशंसा प्राप्त होती है। यदि चिन्ता की कोई बात नज़र आई हो तो उसे स्पष्ट किया जाता है ताकि स्कूल और अभिभावक दोनों की सहायता से उस स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सके। कक्षा-शिक्षकों से विद्यार्थियों के दृष्टिकोण में उल्लेखनीय परिवर्तनों पर ध्यान देने के लिए कहा जाता है और निश्चित रूप से विद्यार्थियों के आत्मविश्वास स्तर में वृद्धि तथा विवेचन, विश्लेषण, समझ व तर्क के बेहतर समालोचनात्मक कौशल देखने में आते हैं; और ये सारी बातें उस समाज की बारीक समझ विकसित करने में महत्त्वपूर्ण हैं जिसमें हम रहते हैं। न केवल भारतीय संस्कृति बल्कि भौतिक भूभाग की विविधता का अनुभव करके उसके बारे में सीखने, उसे आत्मसात करने और उसका अनुकूलन करने के लिए हर साल देश के बड़े क्षेत्र के हर हिस्से की स्कूली यात्रा का आयोजन किया जाता है। इसके लिए सावधानीपूर्वक विचार करके योजना बनाई जाती है; जिससे हमारे द्वारा अपनाए गए विविध तरीक़ों से लाभान्वित हुए सीखने की अक्षमता वाले विद्यार्थियों का समग्र विकास होता है।

परियोजना में शामिल प्रत्येक विद्यार्थी के अधिगम की उन्नति को देखते हुए यह स्पष्ट है कि अधिगम के सुगमीकरण की ऐसी कार्यप्रणाली विद्यार्थियों को मुख्यधारा में लाने और उन्हें बेहतर वैश्विक नागरिक बनाने में मदद करेगी क्योंकि इतिहास और भूगोल से बहुत कुछ सीखा जा सकता है।



सुमति रामजी एक आर्ट्स-बेस्ड थेरेपी प्रैक्टिशनर हैं। इस पद्धति का उपयोग वे दीपिका स्कूल में मिश्रित विकलांगता वाले बच्चों के अधिगम की कमी को दूर करने के लिए करती हैं। वे इन बच्चों को सामाजिक विज्ञान, भारतीय संस्कृति एवं विरासत, मौखिक भाषा विकास और कार्यात्मक गणित जैसे विभिन्न विषय पढ़ाती हैं। वे विभिन्न स्थानों की यात्रा करने और विविध संस्कृतियों को समझने में गहरी रुचि रखती हैं। उनका मानना है कि यात्रा अधिगम को बढ़ाने के लिए एक बहुत ही प्रभावी साधन है। उनसे sumathiramjee@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

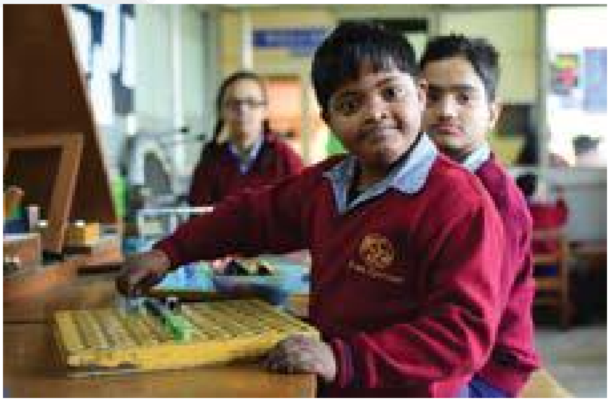
भारत में समावेशी शिक्षा
संकल्पना से वास्तविकता तक

डॉ. उमा तुली

बच्चे किसी भी राष्ट्र की सबसे मूल्यवान सम्पत्ति होते हैं। यह सुनिश्चित करना हमारी ज़िम्मेदारी है कि हर बच्चा एक ख़ुशहाल और उपयोगी जीवन जीने में सक्षम हो। इसके लिए उनकी क्षमता को अधिकतम रूप से विकसित करना आवश्यक है। जीवन की चुनौतियों का सामना करने और उनके समग्र विकास में मदद करने के लिए बच्चों को सशक्त बनाने और संवारने के लिए शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण पूर्वापेक्षित कारक है।

पिछले कुछ वर्षों में, विश्व स्तर पर विभिन्न कार्यक्रमों और पहलों को शुरू किया गया है ताकि सभी बच्चों को शिक्षा का अधिकार मिले। इसमें अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले बच्चे भी शामिल हैं, विशेष रूप से उन वर्गों के बच्चे जो समाज के कमज़ोर और हाशिए पर मौजूद वर्ग से आते हैं।

विकलांगता से जुड़े पूर्वाग्रहों को दूर करने और समाज में गरिमा, सम्भावनाओं और योग्यताओं के साथ उन्हें सही जगह दिलाने की आवश्यकता को उजागर करने के लिए कई वर्षों से प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन इसके बावजूद अधिकांश विकलांग व्यक्ति अभी भी बहिष्करण और भेदभाव का सामना करते हैं। उन्हें या तो एक अलग वातावरण में शिक्षा दी जाती है या उनकी सम्भावनाओं का पूरी तरह उपयोग किए बिना उन्हें असन्तोषजनक और अप्रभावी रूप से एकीकृत किया जाता है।



ज़मीनी हक़ीक़त

2011 की जनगणना के अनुसार, भारत में 120 करोड़ से अधिक लोगों में से 2.21 प्रतिशत, यानी 2.68 करोड़ से अधिक लोगों में कोई न कोई विकलांगता है। इनमें 5-19 आयु वर्ग वाले 66 लाख बच्चे हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन और विश्व बैंक द्वारा 2011 में संयुक्त रूप से प्रस्तुत विकलांगता की विश्व रिपोर्ट में अनुमान लगाया गया है कि वैश्विक जनसंख्या के लगभग पन्द्रह प्रतिशत लोग विकलांग है।

हालाँकि शिक्षा के क्षेत्र में बहुत प्रगति हुई है, फिर भी भारत में 5-19 वर्ष के विकलांग बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने में भारी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अट्ठाईस प्रतिशत विकलांग लड़कियों ने कभी किसी शैक्षिक संस्थान में पढ़ाई नहीं की है। लड़कों में यह प्रतिशत छब्बीस है जो लड़कियों की तुलना में केवल मामूली रूप से बेहतर है। केवल सोलह प्रतिशत विकलांग पुरुषों और नौ प्रतिशत विकलांग महिलाओं ने मैट्रिक/माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा पाई है। कोई आश्चर्य नहीं कि केवल नौ प्रतिशत विकलांग पुरुषों और तीन प्रतिशत विकलांग महिलाओं ने स्नातक की उपाधि प्राप्त की है।

भारत में नीति और विधायी ढाँचा

भारत में, पिछले कुछ वर्षों में, सभी बच्चों के लिए शिक्षा को एक अधिकार बनाने पर ध्यान केन्द्रित करते हुए विभिन्न कार्यक्रम और पहलें शुरू की गई हैं। मुख्य विधायी प्रावधान नीचे दिए गए हैं :

- संवैधानिक प्रावधान : अनुच्छेद 21 ए, अनुच्छेद 45 और अनुच्छेद 51 ए (के)
- मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987, 2017 में संशोधित
- पर्सन्स विद डिसेबिलिटीज़ (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) एक्ट, 1995, इसे 2016 में संशोधित किया गया (द राइट्स ऑफ़ पर्सन्स विद डिसेबिलिटीज़ एक्ट)
- भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम, 1992, 2000 में संशोधित
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009, 2018 में संशोधित
- राष्ट्रीय न्यास अधिनियम 1999

आवश्यक बुनियादी ढाँचे और अनुकूलित शिक्षण-शिक्षण सामग्री की कमी तथा कई अन्य वजहों से शिक्षा के अधिकार

अधिनियम (आरटीई) के वांछित उद्देश्य पूर्ण रूप से हासिल नहीं हो पाए हैं।

राष्ट्रीय नीतियाँ

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) 1986 और संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति (प्रोग्राम ऑफ़ एक्शन 1992), जो एनपीई से उभरी, शारीरिक और बौद्धिक रूप से विकलांग बच्चों को समान साझेदार के रूप में एकीकृत करने की मंज़ूरी को दोहराती है ताकि उन्हें सामान्य विकास के लिए तैयार किया

समावेशी शिक्षा

पहले विकलांग बच्चों के प्रति दयालु और सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण रखा जाता था जो अब बदल रहा है। अब उन्हें समर्थन और अवसर प्रदान करने और उनके अधिकारों की बात हो रही है। इस परिवर्तित दृष्टिकोण ने समावेशी शिक्षा की अवधारणा को जन्म दिया। यह एक ऐसी शिक्षा प्रणाली है, जिसमें विकलांग और ग़ैर-विकलांग विद्यार्थी एक साथ पढ़ाई करते हैं। इसमें शिक्षण व अधिगम की प्रणाली को विभिन्न प्रकार के विकलांग विद्यार्थियों के अधिगम की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपयुक्त रूप से अनुकूलित किया जाता है। इस प्रक्रिया में स्कूलों और अधिगम-केन्द्रों में बदलाव

जा सके। एनपीई ने एकीकृत शिक्षा कार्यक्रमों के विस्तार की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। हाल ही में शुरू की गई नीतियों में शामिल हैं :

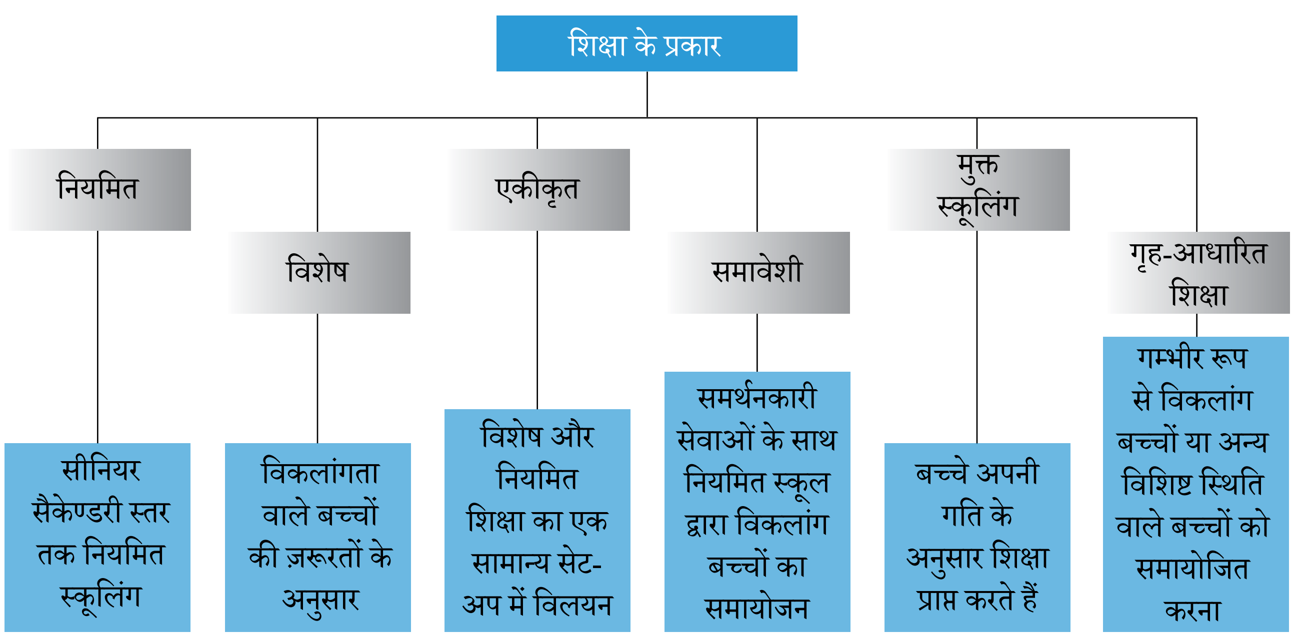
- द नेशनल एक्शन प्लान फॉर इन्क्लूज़न ऑफ़ चिल्ड्रन एण्ड यूथ विद डिसेबिलिटीज़,2005
- नेशनल पॉलिसी फॉर पर्सन्स विद डिसेबिलिटीज़, 2006
- बच्चों के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना, 2016
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मसौदा, 2019

करना होता है और लड़के-लड़कियाँ, सक्षम और विकलांग, हाशिए पर रहने वाले और कम विशेषाधिकार प्राप्त आदि सभी बच्चों की ज़रूरतों को समान रूप से पूरा करना होता है।

शिक्षा के प्रकार

बाल-केन्द्रित, आवश्यकता आधारित शिक्षा और जीवनपर्यन्त अधिगम की अवधारणा ने अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए स्कूली शिक्षा के विभिन्न विकल्पों को जन्म दिया है। इन्हें निम्नलिखित श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

> राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मसौदे 2019 में एक समग्रात्मक दृष्टिकोण के साथ समावेशी शिक्षा के कार्यान्वयन पर पर्याप्त ज़ोर नहीं दिया गया है।



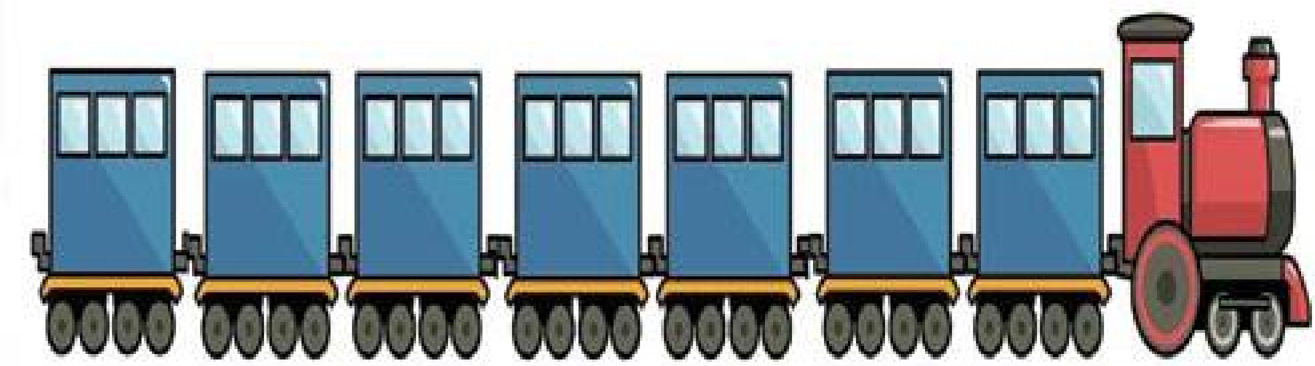
पहले चार विकल्प औपचारिक हैं और उनके भली-भाँति सीमांकित स्थान और उपयुक्त बुनियादी ढाँचे और संसाधन हैं, जहाँ शिक्षा आमने-सामने बैठकर प्राप्त की जाती है और जो आवंटित समय में पूरा होने वाले एक अच्छी तरह से परिभाषित पाठ्यक्रम का पालन करते हैं। योगात्मक आकलन के परिणाम उन्नति के संकेतक के रूप में काम करते हैं। एकीकृत व्यवस्था में यह बच्चे का दायित्व है कि वह ख़ुद को मौजूदा प्रणाली में नियोजित करे। बच्चे को आमतौर

पर सामाजिक, सांस्कृतिक या खेल सम्बन्धी गतिविधियों में केवल कुछ हद तक एकीकृत किया जाता है। जहाँ तक अकादमिक विषयों की बात है तो उसे केवल उन विषयों के लिए एकीकृत किया जाता है जो नियमित पाठ्यक्रम में हैं। जिन बच्चों में कम विकलांगता है और जो विशेष शिक्षा या उपचारात्मक शिक्षा जैसे चिकित्सीय हस्तक्षेप या अन्य प्रकार के समर्थनों की मदद से नियमित व्यवस्था में समायोजित करने में सक्षम हैं, उन्हें एकीकृत किया जाता है। यह एकीकरण या तो केवल सामाजिक गतिविधियों में या आंशिक रूप से अकादमिक विषयों में होता है जो विकलांगता की गम्भीरता और दुर्बलता के प्रकार पर निर्भर करता है।

मुक्त स्कूलिंग में आवश्यकता पर आधारित शिक्षा, सभी स्तरों पर विभिन्न विषयों के विकल्प, अपनी गति के अनुसार अधिगम और अपने ग्रेड के आकलन के लिए कई विकल्प दिए जाते हैं। द राइट्स ऑफ़ पर्सन्स विद डिसेबिलिटीज़ एक्ट, 2016 में मान्यता प्राप्त गृह-आधारित शिक्षा (होम-बेस्ड एजुकेशन, एचबीई) का उद्देश्य गम्भीर रूप से बौद्धिक/शारीरिक अक्षमता वाले बच्चों को स्वतंत्र जीवन कौशल प्राप्त करने के लिए सक्षम बनाना और स्कूल की तैयारी और जीवन की तैयारी में मदद करना है। एचबीई के माध्यम से शिक्षा पाने वाले अधिकांश बच्चों में बहुविकलांगता, गम्भीर संज्ञानात्मक चुनौतियाँ, प्रमस्तिष्क पक्षाघात और स्वलीनता स्पेक्ट्रम विकार होते हैं।

समावेशी शिक्षा के घटक

वास्तविक अर्थों में देखा जाए तो समावेशी शिक्षा को लागू करने के लिए आवश्यक घटक इस प्रकार हैं :



शिक्षकों का प्रशिक्षण | शिक्षण-सामग्री | अवरोध मुक्त वातावरण | समान अवसर | पूर्ण भागीदारी | समर्थनकारी सेवाएँ | माता-पिता की सहभागिता

यह एक सफ़र है, मंज़िल नहीं...

माता-पिता और समुदायों को शामिल करना बहुत महत्त्वपूर्ण है और परिवर्तन लाने के लिए उन्हें सक्रिय और प्रोत्साहित करना भी आवश्यक है। माता-पिता/समुदाय के सदस्यों द्वारा बच्चे का स्वीकरण बच्चे के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। साथ ही यह उसके प्रति परिवार/समुदाय के अन्य सदस्यों के दृष्टिकोण और व्यवहार को निर्धारित करता है। व्यक्तिगत शिक्षा के लिए लघु और दीर्घकालिक लक्ष्य तय करने में वे एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

समान अवसर और पूर्ण भागीदारी

समावेशी शिक्षा समान अवसरों और अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले बच्चों की पूर्ण भागीदारी को सुनिश्चित करने की धारणा पर आधारित है। यह स्कूल प्रबन्धन की ज़िम्मेदारी है कि वह प्रतिबद्ध हो और स्कूल की संस्कृति, नीति और अभ्यासों का पुनर्गठन करे ताकि विभिन्न आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों को विविध शैक्षिक और ग़ैर-शैक्षिक गतिविधियों में सुविधा हो।

अवरोध मुक्त वातावरण

कक्षाओं और भवन में सभी स्थानों तक सुगम पहुँच समावेशन की दिशा में पहला क़दम है, इसके बाद आता है एक ग़ैर-प्रतिबन्धात्मक शिक्षण-अधिगम वातावरण।

समर्थनकारी सेवाएँ

बच्चों की सभी शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए समर्थनकारी सेवाएँ समग्र रूप से प्रदान की जानी चाहिए और जहाँ तक सम्भव हो स्कूल में ही मुहैया कराई जानी चाहिए। इन सेवाओं में प्रोफेशनल थेरेपी, फिज़ियोथेरेपी, स्पीच थेरेपी, प्रारम्भिक हस्तक्षेप, मनोवैज्ञानिक आकलन और परामर्श शामिल हैं। विशेष शिक्षकों को बच्चे की प्रगति की निगरानी

के लिए एक टीम के रूप में काम करना चाहिए और मुख्यधारा के शिक्षकों के साथ सहयोग करना चाहिए।

शिक्षक-प्रशिक्षण

यह बात बहुत ज़रूरी है कि कक्षा को पढ़ाने और उसका प्रबन्धन करने वाले शिक्षकों को समावेशी शिक्षा की अवधारणा और दर्शन के बारे में संवेदनशील बनाया जाए, उसकी ओर उन्मुख किया जाए और बुनियादी ढाँचे, पाठ्यक्रम में लचीलेपन और शिक्षण पद्धति के सन्दर्भ में किए जाने वाले समायोजन के प्रति अवगत कराया जाए। सेवापूर्व और सेवाकालीन शिक्षकों के लिए निरन्तर पुनर्वास शिक्षा कार्यक्रम और अल्पकालिक पाठ्यक्रम आयोजित करने से उन्हें इस बारे में अन्तर्दृष्टि मिलेगी और वे विविधता और विभिन्न विकलांगता वाले बच्चों का ध्यान रखने के लिए तैयार हो सकेंगे। स्कूलों को चाहिए कि वे विद्यार्थियों को ऐसे जीवन ज्ञान और कौशल प्रदान करें जो उनके जीवन को बेहतर बना सकते हों। कौशलों का विकास करने से भी वे आर्थिक रूप से अधिक स्वतन्त्र होने में सक्षम होते हैं।


सुगम्य बस


स्पर्श पथ

चुनौतियाँ

वैश्विक अध्ययनों ने समावेशी शिक्षा को लागू करने में प्रमुख चुनौतियों का ख़ुलासा किया है। निम्नांकित चित्र में इसे दर्शाया गया है।



समावेशन क्यों आवश्यक है

शोध से समावेशन के कई लाभों का संकेत मिलता है।

- विद्यार्थी एक-दूसरे की अनूठी शक्तियों और क्षमताओं की सराहना करना सीखते हैं।
- विद्यार्थी एक-दूसरे की मदद करने के लिए प्रोत्साहित होते हैं।
- अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले विद्यार्थी स्वाभाविक तरीक़े से और एक स्वाभाविक वातावरण में दोस्ती को बढ़ावा देने में सक्षम होते हैं।

- ग़ैर-विकलांग विद्यार्थियों को विकलांग लोगों के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने का मौक़ा मिलता है।
- एक ही समुदाय से सम्बन्धित होने की भावना के विकास कारण विकलांग विद्यार्थियों में आत्मसम्मान और उपलब्धि की भावना का निर्माण करने में मदद मिलती है।
- ऐसा देखा गया है कि अकसर विद्यार्थी वांछनीय सामाजिक व्यवहारों को एक-दूसरे से सबसे अच्छी तरह सीखते हैं।
- बच्चे अपनी विकास क्षमता तक पहुँचते हैं और सभी प्रकार के वातावरण में समायोजन करना सीखते हैं।

अमर ज्योति में विशेष आवश्यकताओं वाली शिक्षा को बढ़ावा देना

पुनर्वास के अपने समग्र दृष्टिकोण को साथ लेकर चलने वाला अमर ज्योति चैरिटेबल ट्रस्ट (एजेसीटी), दिल्ली, 1981 में एकीकृत और समावेशी शिक्षा शुरू करने वाले भारत के पहले संस्थानों में से एक था। यह स्कूल बच्चों के सम्पूर्ण विकास के लिए एक बहुविषयक दृष्टिकोण के साथ एक पेड़ के नीचे शुरू हुआ। उस समय तीस बच्चों की एक कक्षा थी, जिनमें से पन्द्रह बच्चे अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले थे।

आज यह स्कूल एनसीईआरटी के संशोधित पाठ्यक्रम का अनुसरण करता है और इसे शिक्षा निदेशालय द्वारा मान्यता प्राप्त है। वर्तमान में इसमें 510 विद्यार्थी हैं जिनमें विकलांग और ग़ैर-विकलांग विद्यार्थियों की संख्या लगभग बराबर है। हाल ही में बधिर व दृष्टिहीन बच्चों के लिए एक नया विभाग शुरू किया गया है जिसमें सोलह विद्यार्थी नामांकित किए गए हैं जो गृह आधारित और केन्द्र आधारित प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। नर्सरी कक्षा से ही शैक्षिक समावेशन करने से विद्यार्थियों में सामाजिक समावेशन की भावना का पोषण करने में मदद मिलती है। ग्वालियर (मध्य प्रदेश) में ट्रस्ट की एक शाखा है, जो 1989 से इसी तरह की सेवाएँ प्रदान कर रही है।

विद्यार्थियों को विभिन्न पाठ्य-सहगामी गतिविधियों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, जैसे कि एकीकृत खेल और सांस्कृतिक गतिविधियाँ। विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए कम्प्यूटर अनुप्रयोगों, सौन्दर्य, संस्कृति, कला व शिल्प, स्क्रीन प्रिंटिंग, आभूषण-निर्माण और सिलाई में पूर्व व्यावसायिक प्रशिक्षण देना पाठ्यक्रम का एक अभिन्न हिस्सा है। कक्षा 3 से सभी विद्यार्थियों के लिए यह अनिवार्य है कि वे अपनी रुचि के अनुसार एक वृत्ति चुनें। कौशल सम्बन्धी इन पाठ्यक्रमों में से कुछ को राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान और राज्य व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद से मान्यता प्राप्त है।

खेल और सांस्कृतिक गतिविधियों में समावेशन

बच्चे पढ़ना और लिखना सीखने से पहले खेलते हैं। बास्केटबॉल, टेबल टेनिस जैसे खेलों और सांस्कृतिक गतिविधियों को प्रोत्साहित किया जाता है जो बच्चों के बौद्धिक, सामाजिक, शारीरिक और भावनात्मक विकास में मदद करते हैं। बच्चे क्षमता विकसित करना सीखते हैं और अलग-अलग तरह के वातावरण में समायोजन करते हैं। अमर ज्योति के विद्यार्थी कई राष्ट्रीय और अन्तराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में भाग लेते हैं।





अतिरिक्त शैक्षिक सहायता सेवाएँ

विद्यार्थियों को अँग्रेज़ी प्रयोगशाला में सम्प्रेषण, वाद-विवाद और वक्तृत्व कला का प्रशिक्षण दिया जाता है और विज्ञान की प्रयोगशाला उन्हें व्यावहारिक वैचारिक अधिगम में सक्षम बनाती है। इसी तरह कम्प्यूटर की प्रयोगशाला और स्मार्ट क्लास अधिगम का संवर्धन करते हैं। अमर ज्योति कक्षा 3, 5, 8, 10 और 12 के लिए राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान द्वारा मान्यता प्राप्त एक केन्द्र है। यह वंचितों की शिक्षा के लिए भी एक

मान्यता प्राप्त संस्थान है ताकि अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले व्यक्तियों की ज़रूरतों को पूरा किया जा सके।

चिकित्सीय हस्तक्षेप

चिकित्सा, शल्य चिकित्सा, आर्थोपेडिक्स, ईएनटी और बाल रोग जैसे क्षेत्रों के चिकित्सक और विशेषज्ञ निःशुल्क परामर्श और नैदानिक सेवाएँ प्रदान करते हैं। विलम्बित विकास वाले बच्चों के विकास में प्रोफेशनल थेरेपी, फिज़ियोथेरेपी, वाक् व श्रवण विज्ञान यूनिट और प्रारम्भिक हस्तक्षेप यूनिट जैसी विभिन्न हस्तक्षेप यूनिट महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उपचारात्मक सेवाओं के अलावा गतिशीलता सहायक उपकरण भी प्रदान किए जाते हैं। डॉक्टर स्वेच्छा से निःशुल्क सुधारात्मक सर्जरी भी करते हैं।

मनोवैज्ञानिक, व्यवहार सम्बन्धी या किसी भी शैक्षिक मुद्दे से सम्बन्धित कठिनाइयों का सामना करने वाले बच्चों का आकलन चाइल्ड गाइडेंस क्लिनिक में किया जाता है और उन्हें उचित हस्तक्षेप के लिए भेजा जाता है। यह यूनिट अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले बच्चों के माता-पिता की मदद भी करती है और उन्हें शिक्षा का ऐसा तरीक़ा सुझाती है जिससे उनके बच्चे लाभान्वित हो सकें और साथ ही यह यूनिट अभिभावक सहायता कार्यक्रमों का आयोजन भी करती है जहाँ अतिरिक्त आवश्यकताओं वाले बच्चों के पालन-पोषण के विभिन्न मुद्दों पर चर्चा की जाती है।

क्षमता विकास कार्यक्रम

समावेशी शिक्षा के कार्यान्वयन में आने वाली चुनौतियों में से एक है प्रशिक्षित मानव संसाधनों की कमी। इस माँग को पूरा करने के लिए, अमर ज्योति ट्रस्ट विभिन्न मानव संसाधन विकास कार्यक्रम चलाता है। दिल्ली विश्वविद्यालय से सम्बद्ध फिज़ियोथेरेपी में परास्नातक और स्नातक कार्यक्रम, कुशल फिज़ियोथेरेपिस्ट विकसित करने में मदद करते हैं। विशेष शिक्षा में भारतीय पुनर्वास परिषद (आरसीआई) द्वारा अनुमोदित डिप्लोमा कार्यक्रम (मानसिक मन्दता, श्रवण और दृश्य दोष में विशेषज्ञता के साथ) चलाए जा रहे हैं। इसके अलावा मुख्यधारा के स्कूल शिक्षकों के लिए, आवश्यकतानुसार, विभिन्न अल्पकालिक पाठ्यक्रम डिज़ाइन और संचालित किए जाते हैं।

आगे बढ़ने का रास्ता

समावेशन के सपने को साकार करने के लिए समाज के विभिन्न क्षेत्रों के बीच तालमेल होना ज़रूरी है, जिसमें ज़िम्मेदारियों को समान रूप से साझा किया जाए। समावेशन के प्रभावी सार्वभौमिकरण के लिए संसाधनों और विशेषज्ञता का प्रयोग करने में समन्वय का मंत्र बहुत उपयोगी है, जिसके लिए नवम्बर 2018 में नई दिल्ली में आयोजित समावेशी शिक्षा पर हुए पाँचवें अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन ने निम्नलिखित सिफ़ारिशें कीं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों को सामान्य शिक्षा प्रणाली में समावेशी शिक्षा (आईई) को प्रभावी ढंग से अपनाने के लिए :

- शिक्षक-प्रशिक्षण के लिए समर्पित संसाधन निर्धारित करना चाहिए और समावेशी शिक्षा को बढ़ावा देना चाहिए, विशेष रूप से ग्रामीण और हाशिए वाले समुदायों के बीच।
- मॉडल समावेशी स्कूलों की स्थापना करना चाहिए।
- समावेशी शिक्षा की सार्वभौमिकता सुनिश्चित करने के लिए निर्दिष्ट समय सीमा तय करते हुए एक कार्यान्वयन योजना को शामिल करना चाहिए।
- ऐसी रणनीतियाँ शामिल करना चाहिए जो कार्यान्वयनकर्ताओं और समुदाय के बीच अधिक जागरूकता पैदा करने के लिए बहुक्षेत्रीय और अन्तर्क्षेत्रीय सम्बन्ध सुनिश्चित करें।

शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम (मास्टर प्रशिक्षकों के लिए भी) को:

- प्रशिक्षण की आवश्यकता के आकलन में शिक्षकों को शामिल करना चाहिए।
- मज़बूत करना चाहिए ताकि समावेशी शिक्षा के लिए व्यावहारिक कौशल, सामाजिक/भावनात्मक अधिगम को शामिल कर सकें।

शिक्षा प्रणाली को चाहिए कि वह :

- विद्यार्थियों, अभिभावकों, स्कूल प्रशासकों, शिक्षकों और सहायक कर्मचारियों को शिक्षा प्रणाली में समावेशन की अनिवार्यता के बारे में संवेदनशील बनाए।
- आवश्यकतानुसार समर्थन प्रणाली के पर्याप्त प्रावधान सुनिश्चित करे।
- विकलांगजनों के लिए गतिशीलता और स्वतंत्र रूप से कामकाज कर पाने के लिए सेवाएँ प्रदान करे।

शैक्षणिक सुधार ऐसे हों जो :

- शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं के लिए अनुकूलित पाठ्यक्रम और मूल्यांकन में लचीलापन प्रदान करें।

- सभी शिक्षार्थियों की भागीदारी के लिए सह-शैक्षिक गतिविधियों में भाग लेने के अवसर शामिल करें।
- मौजूदा विज्ञान, वाणिज्य और मानविकी शाखाओं के अलावा एक ‘रचनात्मक शाखा’ जैसे विकल्पों पर विचार करें जो कि विकलांग शिक्षार्थियों की ज़रूरतों को पूरा करें।
- पाठ्यक्रम में प्रावधान/ कौशल सुदृढ़ीकरण/व्यावसायिक प्रशिक्षण शामिल करें। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयों में कौशल/ व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए अतिरिक्त विकल्प उपलब्ध कराएँ।
- यह सुनिश्चित करने की दिशा में काम करें कि अधिगम का सार्वभौमिक डिज़ाइन एक आदर्श बन जाए।

डेटा और शोध प्रणाली को :

- स्थापित/मज़बूत किया जाना चाहिए ताकि वह नीति और कार्यान्वयन सम्बन्धी अन्तराल को सम्बोधित करने के लिए शोध को लागू कर सके।
- एक डेटाबेस स्थापित करना चाहिए जो साक्ष्य आधारित नीति निर्माण/संशोधन को सूचित करने के लिए इनपुट प्रदान करे।
- सभी शिक्षार्थियों के ड्रॉपआउट, परिर्वतनकाल और अकादमिक उपलब्धियों पर नियमित रूप से जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।

सहयोग को मज़बूत करने के लिए :

- शैक्षिक संस्थानों, समुदायों, परिवारों और स्थानीय सरकार के बीच सहयोग को बढ़ावा देना चाहिए ताकि समावेशी शिक्षा के प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित किया जा सके।
- राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय अकादमियों जैसे पेशेवर निकायों का निर्माण करना चाहिए जिससे कि समावेशी शिक्षा को बढ़ावा दिया जा सके।
- कॉर्पोरेट क्षेत्र को शामिल करना चाहिए ताकि वह समावेशी शिक्षा के लिए संसाधन प्रदान कर सके।
- उपयुक्त तंत्र और संरचनाएँ स्थापित करनी चाहिए जिससे कि नीति निर्माण और समावेशी शिक्षा के कार्यान्वयन में अन्तर्क्षेत्रीय सहयोग सुनिश्चित हो सके।

निष्कर्ष

यह हम सभी की ज़िम्मेदारी है कि सभी बच्चों के लिए शिक्षा को सुलभ बनाया जाए, चाहे वे विकलांग हों या ग़ैर-विकलांग। हाल के वर्षों में दान से सशक्तीकरण और चिकित्सा मॉडल से मनोवैज्ञानिक मॉडल की ओर जाने का महत्त्वपूर्ण बदलाव आया है। समावेशी शिक्षा की यात्रा ने कई चुनौतियों को पार किया है और इस दौरान कई महत्त्वपूर्ण बदलाव भी हुए हैं जैसे पहले उपेक्षा, हाशियाकरण और भेदभाव वाली स्थिति थी और अब हम एक समावेशी, अवरोध मुक्त और अधिकार आधारित समाज की ओर बढ़ रहे हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2019, का मसौदा, जिस पर वर्तमान में विचार-विमर्श चल रहा है, समग्र दृष्टिकोण अपनाने का एक अवसर है। यह दृष्टिकोण संसाधनों के समन्वय और नेटवर्किंग पर बल देकर विकलांग और ग़ैर-विकलांग विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने पर ज़ोर देता है ताकि वे अपने ग़ैर-विकलांग साथियों के साथ एक ही मंच पर खड़े हों और अपनी पूरी क्षमता हासिल कर सकें।



डॉ. उमा तुली अमर ज्योति चैरिटेबल ट्रस्ट (दिल्ली और ग्वालियर), की संस्थापिका और प्रबन्ध सचिव हैं। वे एक शिक्षाविद्, पुनर्वास पेशेवर और एक खिलाड़ी हैं। वे ऐसी पहली ग़ैर-नौकरशाह थीं जिन्हें भारत सरकार द्वारा विकलांगजनों के मुख्य आयुक्त के रूप में नियुक्त किया गया था। डॉ. तुली विकलांगजनों को मुख्यधारा में लाने के प्रयासों में सबसे आगे रही हैं ताकि वे समानता और गरिमा का जीवन जी सकें। उन्हें रोहम्पटन विश्वविद्यालय, लन्दन से डॉक्टर ऑफ लॉज़, ऑनोरिस कॉसा; पद्मश्री और कई अन्य पुरस्कारों तथा सम्मानों से सम्मानित किया गया है। उनसे umatuli3@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

विशेष शिक्षा में परिवार, स्कूल और समुदाय की भूमिका

उषा मदान

आदर्श रूप से देखा जाए तो शिक्षा को विद्यार्थियों के संज्ञान और भावनात्मक कौशल का पूरा विकास करना चाहिए और अन्ततः उन्हें दुनिया की चुनौतियों का सामना करने के लिए अच्छे जीवन कौशलों से लैस करना चाहिए। उसे विद्यार्थी को एक सार्थक व्यक्तिगत जीवन और साथ ही उत्पादक कामकाजी जीवन के लिए तैयार करना चाहिए।

दुर्भाग्य से शिक्षा की वर्तमान अवधारणा में विद्यार्थियों के समग्र विकास की बजाय जानकारी प्राप्त करके अकादमिक प्रगति पर अधिक ध्यान दिया जाता है जबकि ज़रूरत इस बात की है कि विद्यार्थियों को अपनी क्षमता का यथासम्भव उपयोग करके आत्मविश्वास के साथ जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए प्रशिक्षित किया जाए। यद्यपि आज की शिक्षा प्रणाली में इस बात को दरकिनार किया गया है, लेकिन मुख्यधारा के अधिकांश बच्चे जैसे-जैसे बड़े होते हैं वैसे-वैसे देखकर, सुनकर, अपने अनुभवों का विश्लेषण करके और अपने आस-पास के वातावरण का अवलोकन करके कुछ हद तक अपने आप को इन कौशलों से लैस कर लेते हैं। इस प्रकार वे जीवन कौशलों के लिए स्व-प्रशिक्षित हो जाते हैं।

दुर्भाग्य से बौद्धिक रूप से विकलांग बच्चों के पास इन कौशलों की कमी होती है और इसलिए उनके लिए जीवन कौशलों के प्रशिक्षण पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता होती है, जिसके लिए सही समय पर शारीरिक (मोटर) कौशल, संज्ञान और भावनात्मक प्रशिक्षण से शुरुआत करनी होती है और बाद में कार्यात्मक शिक्षा और व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण देना होता है।

लेकिन जब बात विकलांग बच्चों को शिक्षित करने की हो तो एक निराशाजनक तथ्य यह है कि परिवार और समुदाय के लोग उनकी शैक्षिक प्रगति को मुख्यधारा के बच्चों के साथ तुलना करके मापते हैं, बिना इस बात पर विचार किए कि क्या बच्चा इसके लिए तैयार है और बच्चे की ज़रूरतें क्या हैं।

इससे पहले कि हम इस सन्दर्भ में प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वोत्तम अभ्यासों की खोज करें, यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि विकलांग बच्चों के लिए शिक्षा का क्या अर्थ है। इसे केवल मुख्यधारा के पाठ्यक्रम, जो महज़ जानकारी प्राप्त करना है, का कमज़ोर संस्करण नहीं होना चाहिए।

विकलांग बच्चों के लिए आदर्श शिक्षा को समग्र रूप से एक कार्यक्रम पर केन्द्रित होना चाहिए और उसका अन्तिम लक्ष्य यह होना चाहिए कि बच्चा स्वतंत्र रूप से जीवन जी सके। इसके लिए प्रशिक्षण यथाशीघ्र शुरू किया जाना चाहिए। जिससे उनकी किशोरावस्था और वयस्कावस्था के जीवन कौशलों की नींव बने और जो मुख्यतः स्वतंत्र रूप से जीवनयापन सम्बन्धी कौशल प्रदान करने पर ध्यान केन्द्रित करे। उसके बाद व्यक्तिगत क्षमताओं के आधार पर व्यावसायिक प्रशिक्षण देना चाहिए, ताकि विद्यार्थी रोज़गार योग्य बनें और आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो सकें। किसी भी प्रकार की विकलांगता को आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रशिक्षित न करने का कारण नहीं माना जाना चाहिए। विकलांग बच्चों को बिना किसी रोक-टोक के सही तरीक़े से शिक्षित होने का प्रत्येक अवसर दिया जाना चाहिए। उन्हें उनकी आवश्यकताओं और क्षमताओं के अनुसार प्रशिक्षित किया जाना चाहिए, ताकि वे अपनी चुनौतियों के बावजूद उपयुक्त रोज़गार पाने के साथ-साथ स्वतंत्र रूप से जीवन जीने की क्षमता विकसित कर सकें। विशेष शिक्षा ऐसी हो जो उन्हें सशक्त बनाए (ताकि उन्हें परिवार या समाज का ‘दायित्व’ न माना जाए, जैसा कि अकसर होता है)।

विकलांग बच्चे को शिक्षित करने में तीन मूलभूत घटक होते हैं *स्कूल, परिवार* और *समुदाय*, जिन्हें निर्विवाद रूप से एक-दूसरे का पूरक बनकर अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभानी होती हैं। जब ये तीनों साथ मिलकर कार्य करते हैं तो स्वीकरण, सम्मान और समायोजन जैसे उद्देश्य निश्चित रूप से प्राप्त हो सकते हैं, यह सशक्तिकरण और समावेशन की ओर ले जाता है जो विशेष शिक्षा का अन्तिम लक्ष्य और विकलांग बच्चों का अधिकार है।

परिवार की भूमिका

इस तथ्य से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि माता-पिता ही बच्चे की देखभाल करने वाले मुख्य लोग हैं, जिनके जीवन का लक्ष्य यह देखना है कि उनके बच्चे अपने दम पर स्वतंत्र और कामयाब हो जाएँ। विकलांग बच्चों की चुनौतियों के बारे में पारिवारिक जागरूकता, बिना किसी शर्त के उनका स्वीकरण और भाई-बहनों की सहभागिता जैसी बातें विकलांग बच्चे को शिक्षित/प्रशिक्षित करने में अत्यन्त उत्पादक तरीक़े से बहुत योगदान देती हैं।

वैसे तो स्कूल और अन्य उपचार प्रशिक्षण की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाते हैं लेकिन माता-पिता और परिवार की गहरी भागीदारी उन क्षमताओं तक पहुँचने के लिए महत्त्वपूर्ण होती है जो प्रत्येक बच्चे के लिए निर्धारित लक्ष्यों के लिए आवश्यक है। हमारे पास इस बात के सबूत हैं कि जिन बच्चों को अपने परिवार का समर्थन प्राप्त होता है, वे स्वतन्त्र और उत्पादक बनने के लिए हर तरह के प्रशिक्षण में सफल होते हैं।

समुदाय की भूमिका

जिस समुदाय में बच्चा बड़ा होता है, उसे यह समझना चाहिए कि विकलांग बच्चा सिर्फ़ एक परिवार की ज़िम्मेदारी नहीं है। समावेशन एक सामाजिक कार्य है और यह वास्तविक अर्थों में तभी सम्भव है जब पड़ोसी और आम जनता यह समझें कि बच्चों को पहले बच्चों के रूप में ही समझना चाहिए और जीवन के हर क्षेत्र में उन्हें स्वीकरण और आवश्यक सहायता दी जानी चाहिए। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि दृष्टिकोण और धारणाएँ हमारे कार्यों को प्रभावित करती हैं, इसलिए यह बेहद ज़रूरी है कि सभी लोग विकलांग बच्चों को उनके परिवारों से स्कूलों में जाने की प्रक्रिया को सुचारू बनाने और अन्ततः समाज में अपनी जगह लेने में मदद करें।

विद्यालय की भूमिका

कोई भी स्कूल जो विकलांग बच्चों को शिक्षा देना चाहता है, फिर चाहे वह एक विशेष सुविधा के रूप में हो या एक समावेशी व्यवस्था के रूप में, उसका प्राथमिक उद्देश्य यह होना चाहिए कि वह बच्चों के समग्र विकास के लिए अधिगम का अनुकूल माहौल प्रदान करे और उसे बनाए रखे। उन्हें परिवारों और समुदाय के साथ यथासम्भव जुड़ना चाहिए और उन्हें अपने कार्य में शामिल करना चाहिए। पाठ्यक्रम को *शारीरिक, भाषाई, भावनात्मक, संज्ञानात्मक* और *सामाजिक*— सभी पाँच विकासात्मक क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए डिज़ाइन किया जाना चाहिए। व्यक्तिगत शिक्षा योजनाओं में आकलन के मानदण्ड प्रत्येक क्षेत्र के तहत शुरुआती स्तर और बाद में अपेक्षित स्तर (लक्ष्य) का विद्यार्थी की चुनौतियों और क्षमताओं से मिलान करते हुए स्पष्ट रूप से निर्धारित किए जाने चाहिए। आवश्यक चिकित्सीय हस्तक्षेप भी ज़रूर शामिल करने चाहिए।

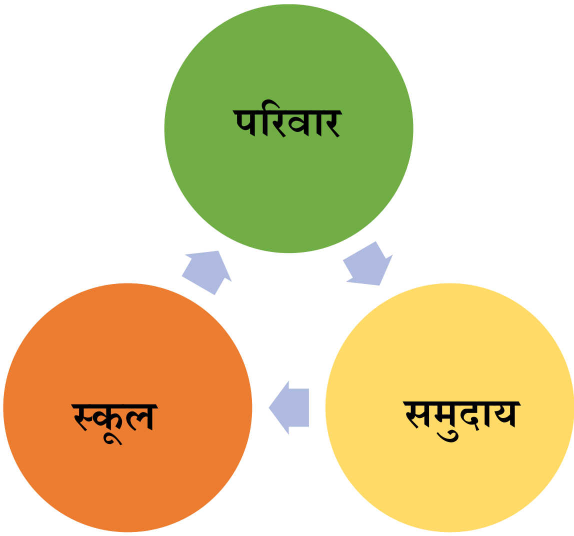
समग्रात्मक दृष्टिकोण : मण्डला

दीपिका स्कूल बौद्धिक रूप से विकलांग बच्चों का एक स्कूल है। इसमें इसी समग्र दृष्टिकोण की परिकल्पना की गई है और हमारा शिक्षण उद्देश्य है बौद्धिक विकलांगता वाले बच्चों को यथासम्भव स्वतंत्र जीवन जीने के लिए प्रशिक्षित करना।

हमारे प्रशिक्षण कार्यक्रम का नाम मण्डला है जो एक करणीय एवं संरचित कार्यक्रम है। हम बौद्धिक रूप से विकलांग बच्चों के लिए शैक्षिक नवाचारों के विकास और कार्यान्वयन के लिए लगभग पन्द्रह वर्षों से इस रणनीति का उपयोग कर रहे हैं और हमें यह कहते हुए प्रसन्नता हो रही है कि यह हमारे विद्यार्थियों को स्वतंत्र बनाने में काफ़ी सफल रहा है। इस दौरान विकलांग बच्चों के अवलोकन और उनके साथ अपने अनुभवों के आधार पर हम यह समझ चुके हैं कि इस तरह की समग्रात्मक शिक्षा आज के समय की माँग है और इसमें स्वतंत्र रूप से दैनिक जीवन जीने के कौशल, सामाजिक कौशल, सम्प्रेषण कौशल, मोटर कौशल और कार्यात्मक शिक्षा को शामिल करना चाहिए एवं उसके बाद व्यावसायिक कौशल का प्रशिक्षण देना चाहिए।

इस उपकरण का उद्देश्य बच्चों के समग्र प्रशिक्षण के लिए साक्ष्य आधारित अभ्यासों को संक्षेप में प्रस्तुत करना है जो ऊपर चर्चित तीन प्रमुख घटकों अर्थात स्कूल, परिवार और समुदाय की पहचान और वर्णन करता है। इसमें विद्यार्थियों के प्रत्येक समूह के शैक्षिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अभ्यासों का एक सेट है।

यह संरचित हस्तक्षेप जो प्रशिक्षक-निर्देशित है और संसाधनों के नियोजित सेट का उपयोग करता है। यह अधिगम के औपचारिक और अनौपचारिक दोनों वातावरणों में होता है। इन तरीक़ों में इस्तेमाल की जाने वाली तकनीक एक व्यवहारवादी मॉडल है (उदाहरण के लिए प्रेरित करना और सुदृढ़ीकरण) जो कौशल के अधिग्रहण के बाद क्रमिक रूप से कम होती जाती है। ये उद्देश्य विद्यार्थी-केन्द्रित हैं और यथार्थवादी अपेक्षाओं के साथ उनकी क्षमता के अनुरूप हैं।



रणनीतियाँ

स्कूल

हमारा मुख्य पाठ्यक्रम कार्यात्मक शिक्षा के साथ जीवन कौशल, मोटर कौशल, सम्प्रेषण कौशल और सामाजिक कौशल पर केन्द्रित है; जिसके बाद व्यावसायिक कौशलों का प्रशिक्षण दिया जाता है। यहाँ शिक्षक, सहकर्मी और चिकित्सक शामिल होते हैं।

परिवार

हम व्यक्तिगत परामर्श सत्र आयोजित करते हैं, ख़ासकर माताओं के लिए, जो भावनात्मक प्रबन्धन के लिए होते हैं। बिना शर्त स्वीकरण के लिए माता-पिता के लिए परामर्श; भाई-बहनों के लिए तिमाही वर्कशॉप; दादा-दादी और परिवार के अन्य महत्त्वपूर्ण सदस्यों के लिए अर्ध-वार्षिक विस्तारित परिवार कार्यशालाएँ भी आयोजित की जाती हैं।

समुदाय

इसका उद्देश्य जनता को इस तथ्य के प्रति जागरूक करना है कि विकलांग बच्चे केवल उनके अपने परिवार की ज़िम्मेदारी नहीं हैं, बल्कि एक सामाजिक ज़िम्मेदारी हैं। कॉरपोरेट संस्थाओं, सार्वजनिक सेवा विभागों और मुख्यधारा के स्कूलों को शिक्षित करने के लिए जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाते हैं।

मण्डला प्रक्रिया

स्कूल में

हमारे पाठ्यक्रम के उद्देश्य इस प्रकार हैं : जीवन कौशल, सामाजिक कौशल, सम्प्रेषण कौशल विकसित करना और विशिष्ट कौशल प्रशिक्षण तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण देना।

- *जीवन कौशल (स्वतन्त्र रूप से दैनिक जीवनयापन के कौशल)* : स्कूल में प्रवेश लेते समय बच्चे के दैनिक जीवन सम्बन्धी कौशल के स्तरों का आकलन करने के साथ यह प्रकिया शुरू होती है। मुख्य रूप से शौचालय प्रशिक्षण, स्नान, व्यक्तिगत स्वच्छता/देखभाल और स्वतन्त्र रूप से खाना खाने की आदतों पर ध्यान दिया जाता है।

  ऐसा देखने में आया है कि कई माता-पिता बच्चों को जीवन के बुनियादी कौशलों का जल्द से जल्द प्रशिक्षण देने का महत्त्व नहीं समझते हैं। वे या तो बच्चों की क्षमता को कम आँकते हैं या बच्चों को बहुत अधिक संरक्षण देना चाहते हैं और ऐसा करने के परिणामों से अनजान उन्हें बच्चों के लिए हमेशा इन चीज़ों को करते रहने में कोई में ग़लती नज़र नहीं आती। ऐसे मामलों में मुख्य चुनौती यह है कि इन विद्यार्थियों को 'बड़ा होने' की अनुमति नहीं दी जाती। उदाहरण के लिए, माता-पिता अपने बड़े हो रहे बच्चों को नहलाते हैं या उन्हें अपने साथ अपने ही बिस्तर पर सुलाते हैं। इस वजह से बच्चे *मेरा शरीर* की अवधारणा को समझने में विफल हो जाते हैं और उन्हें अच्छे स्पर्श और बुरे स्पर्श के बीच अन्तर न कर पाने का ख़तरा होता है। वे अपने व्यक्तिगत स्थान की अवधारणा में भी प्रशिक्षित नहीं हो पाते जबकि वयस्कता की ओर बढ़ते समय अपनी स्वयं की सुरक्षा के लिए उचित सामाजिक सीमाओं को समझना बहुत महत्त्वपूर्ण है।

  कई माता-पिता यह नहीं समझते कि बौद्धिक विकलांगता वाले बच्चों के जीवन में एक निश्चित पड़ाव पर सामान्य शारीरिक और तत्सम्बन्धी यौन विकास होगा और उन्हें इसे प्रबन्धित करने के लिए पहले से ही भली-भाँति तैयार करना होगा। अन्यथा यह न केवल माता-पिता के लिए एक ऐसी चुनौती बन जाता है जिसके लिए वे तैयार नहीं होते, बल्कि यह किशोरावस्था से जुड़े व्यवहार सम्बन्धित मुद्दों को भी जन्म देता है। यह स्थिति माता-पिता और बच्चों दोनों के लिए काफ़ी चुनौतीपूर्ण और निराशाजनक हो सकती है।

  जब कोई बच्चा हमारे स्कूल में प्रवेश लेता है तो इन सभी बातों को सम्बोधित करने के लिए बच्चों की जीवनशैली के बारे में तीन स्तर की जानकारी ली जाती है— पहली माता-पिता से, दूसरी एक प्रभारी शिक्षक से और अन्तिम व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, स्कूलिंग के शुरुआती दो महीनों के बाद *स्कूल में रात भर रहने* के कार्यक्रम से। यह हमें बच्चे के शौचालय से सम्बन्धित आचरण, व्यक्तिगत स्वच्छता, दैनिक जीवनयापन की कौशल क्षमताओं और तत्सम्बन्धी निर्भरता के बारे में एक स्पष्ट जानकारी देता है और इससे अपने विशेष बच्चे के इन महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर माता-पिता के दृष्टिकोण का भी पता चलता है। ये अवलोकन हमें जीवन कौशल में व्यक्तिगत शिक्षा योजनाओं के लिए लक्ष्य निर्धारित करने में और माता-पिता को घर पर अपने बच्चों को प्रशिक्षित करने के लिए शिक्षित और संलग्न करने में मदद करते हैं। इसके साथ में संरचित मोटर कौशल प्रशिक्षण भी दिया जाता है क्योंकि दैनिक कार्यों और व्यक्तिगत देखभाल के लिए शारीरिक फिटनेस, मांसपेशियों का समन्वय और शक्ति आवश्यक हैं।

- *सामाजिक कौशल* : बौद्धिक विकलांगता वाले विद्यार्थियों को सामाजिक कौशल प्राप्त करने, समझने और उनके अनुप्रयोग में समस्याएँ होती हैं और इन्हें सीखने और आत्मसात करने के लिए उन्हें बहुत सारे

प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। इसके लिए उन्हें विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में प्रशिक्षण दिया जाता है, जैसे— भेंट करने के लिए घरों में जाना, सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेना, मॉल व सार्वजनिक सेवा विभागों में जाना, छोटी (दो रातों की) और लम्बी (सात रातों की) शैक्षिक यात्राओं पर जाना आदि। उनकी बातचीत और व्यवहार की शैलियों के अवलोकनों के आधार पर उनके सामाजिक कौशल व व्यक्तिगत कौशल विकास के स्तर, सामाजिक कौशलों की कमी/अधिकता और सामाजिक अटपटेपन के बारे में नोट्स बनाए जाते हैं, और फिर उसके अनुसार व्यक्तिगत शिक्षा योजनाएँ बनाई जाती हैं।

- *सम्प्रेषण कौशल* : इसमें सामाजिक सम्बन्धों की बेहतरी के लिए आवश्यकता आधारित अर्थपूर्ण और स्थितिपरक बातचीत के संवर्धन पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। इसके लिए अवसरपरक हस्तक्षेप डिज़ाइन किए जाते हैं और वैयक्तिक रूप से तथा फोन पर, दोनों तरह से, विद्यार्थी की दिन भर की संलग्नता और भागीदारी बढ़ाई जाती है। पहले स्कूल और परिवार के भीतर अवसर निर्मित किए जाते हैं और फिर उन्हें सामाजिक परिस्थितियों में आगे ले जाया जाता है।

  अशाब्दिक (Nonverbal) बच्चों के लिए पहले तो शिक्षक उनके व्यवहार का आकलन और पहचान करते हैं जो सम्प्रेषण के आशय को बताता है। बच्चे को बेहतर ढंग से समझने के लिए उसके माता-पिता से उन सामान्य व्यवहारों के बारे में भी जानकारी एकत्र की जाती है जिसे वह अलग-अलग भावनाओं/ज़रूरतों को व्यक्त करने के लिए प्रदर्शित करता है। इसके अलावा व्यवहार का एक *कार्यात्मक विश्लेषण* (पूर्ववर्ती-व्यवहार-परिणाम) किया जाता है ताकि व्यवहार सम्बन्धी हस्तक्षेप के लक्ष्यों के बारे में एक अन्तर्दृष्टि मिल सके, उदाहरण के लिए भूख लगने पर झल्लाना या चिड़चिड़ाना या किसी कार्य से बचने के लिए भाग जाना। फिर विद्यार्थियों को प्रशिक्षित किया जाता है कि वे इन व्यवहारों के स्थान पर कुछ अधिक समझदार इशारों/सांकेतिक भाषा का प्रयोग करें जिसका दृढ़ीकरण घर पर भी किया जाता है। हमारे यहाँ माता-पिता के लिए सांकेतिक भाषा सम्बन्धी कार्यशालाएँ भी हैं ताकि बच्चे के साथ स्कूल और परिवार के संवाद करने के तरीक़े में कोई अन्तर न हो।

- *कार्यात्मक शिक्षा* : एक बार जब बच्चे को ये बुनियादी कौशल हासिल हो जाते हैं तो समय और धन की बुनियादी अवधारणाएँ, कैलेण्डर पढ़ना, क्षेत्रों, स्थल चिह्नों की पहचान करना जैसी कार्यात्मक शिक्षा दी जाती है। इसके लिए उन्हें वास्तविक जीवन की स्थितियों में ले जाकर बहुत ही व्यावहारिक तरीक़े से सिखाया जाता है। प्रशिक्षण मूल बातों से शुरू किया जाता है जैसे कि उन्हें दिन की समयावधि से सम्बन्धित गतिविधियों की अवधारणाओं को समझाना, जल्दी और देर, कम और अधिक की अवधारणाएँ स्पष्ट करना और फिर धीरे-धीरे उच्चतर स्तर की उन अवधारणाओं की ओर बढ़ना जो दिन-प्रतिदिन के जीवन में आवश्यक हैं।

- *कौशलों का प्रशिक्षण* : जब विद्यार्थी स्वतंत्र रूप से जीवनयापन करने के लिए आवश्यक उपर्युक्त सभी बुनियादी कौशल हासिल कर लेते हैं तब उन्हें उपयुक्त व्यावसायिक प्रशिक्षण और उसके बाद गृह प्रबन्धन के कौशलों का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसमें शुरुआत में व्यक्तिगत तैयारी, गृह प्रबन्धन कौशल, परिवार के अन्दर और बाहर अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों के कौशल, पास-पड़ोस से परिचित होना, स्वतंत्र रूप से यात्रा कर पाने के कौशल और अन्त में विशिष्ट ऑन-साइट कौशल के प्रशिक्षण दिए जाते हैं।

परिवार

विकलांग बच्चों को यथासम्भव स्वतंत्र रूप से जीवनयापन करने के लिए भली प्रकार से लैस करने में परिवार का भावनात्मक समर्थन सबसे शक्तिशाली और महत्त्वपूर्ण होता है। उत्कृष्ट परिणाम तब दिखाई देते हैं जब परिवार भी इस प्रक्रिया में शामिल होते हैं। व्यक्तिगत और व्यावसायिक प्रशिक्षण में अपने बच्चे के सम्बन्ध में माता-पिता के सपने, प्रयास और दृष्टिकोण उनके प्रदर्शन को मज़बूत बना देते हैं जो उन्हें सशक्त बनाने के लिए आवश्यक है।

बच्चों का एक स्नेही व सहायक वातावरण में पोषण करना, वे जैसे हैं उन्हें वैसे ही स्वीकार करना और उनका सम्मान करना— इन सबके लिए सकारात्मक परवरिश और माता-पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों की निरन्तर भागीदारी बहुत आवश्यक है। यह सभी माता-पिता, विशेषकर माताओं के लिए काफ़ी चुनौतीपूर्ण होता है और उन्हें इसमें अपनी गहरी ऊर्जा लगानी पड़ती है। इसलिए, माताओं और माता-पिता दोनों के लिए नियमित रूप से परामर्श सत्र आयोजित किए जाते हैं, ताकि वे अपने बच्चे की क्षमता व सीमाओं के बारे में जागरूक हो सकें और उनकी व्यक्तिगत भावनाओं का प्रबन्धन कर सकें।

आध्यात्मिक उपचार कार्यशालाओं, कला-आधारित थेरेपी के माध्यम से आत्मनिरीक्षण, मूवमेंट थेरेपी, योग थेरेपी और पारिवारिक सम्बन्ध दिवस के माध्यम से माता-पिता के सशक्तिकरण कार्यक्रम की पेशकश की जाती है। इसके बाद भाई-बहनों के कार्यक्रम और विस्तारित परिवार के सदस्यों के

लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है क्योंकि वे भी परिवार के स्तर पर बच्चे के उस स्वीकरण और समावेशन में योगदान देते हैं जिसकी उसे आवश्यकता होती है। इससे माताओं का तनाव भी काफ़ी हद तक कम हो जाता है।

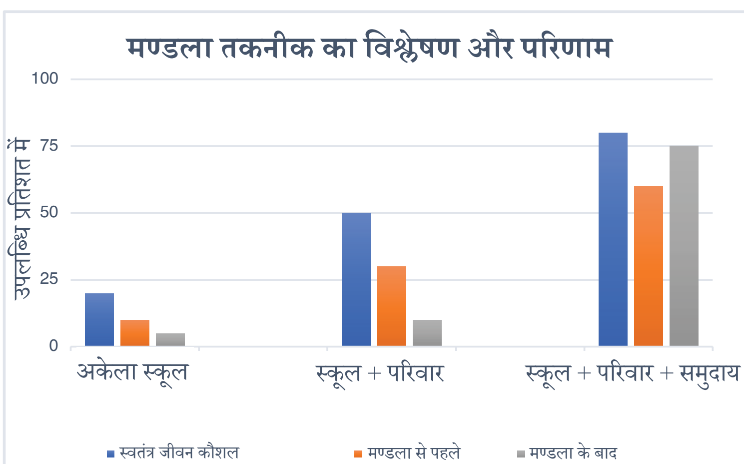
समुदाय

बौद्धिक विकलांगता वाले विद्यार्थियों और उनके परिवारों के जीवन की समग्र तैयारी और गुणवत्ता में समुदाय निस्सन्देह एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दुर्भाग्य से इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि समाज में विकलांगता को एक कलंक के रूप में देखा जाता है। जागरूकता की कमी और नकारात्मक दृष्टिकोण के कारण हमारा समाज विकलांगता और बच्चा क्या नहीं कर सकता— इस पर अधिक ध्यान देता है, बजाय इसके कि उन तक पहुँचे और उन्हें सामुदायिक ज़िम्मेदारी के रूप में समायोजित करे। इसे केवल उचित सार्वजनिक शिक्षा और पास-पड़ोस के संवेदीकरण कार्यक्रमों के माध्यम से सम्बोधित किया जा सकता है। इसलिए कॉरपोरेट संस्थाओं, सार्वजनिक सेवा विभागों और मुख्यधारा के स्कूलों, निवासियों के कल्याण संघों, वाहन कर्मचारियों और घरेलू कार्यों में मदद करने वालों के साथ नियमित रूप से बातचीत की जाती है। ऐसा करने से सभी लोगों को यह बात समझने में मदद मिलती है कि हमें समानुभूतिपूर्ण और सहायक होना चाहिए न कि आलोचनात्मक या सहानुभूतिपूर्ण।

बच्चों को सब्ज़ी बाज़ार, मॉल, दूध के बूथ, रेलवे स्टेशन, डाकघर, फार्मेसियों में ले जाया जाता है, जहाँ वे बातचीत करते हैं, सामान ख़रीदते हैं। साथ ही इन अवसरों का उपयोग इस बात के लिए भी किया जाता है कि इन सारे सेवा प्रदाताओं को विकलांग बच्चों से सम्बन्धित मुद्दों पर शिक्षित किया जाए जिससे वे यह समझ सकें कि इन बच्चों को क्यों और कैसे समायोजित करना चाहिए।

मण्डला कार्यक्रम का विश्लेषण और परिणाम

निम्नांकित चार्ट स्पष्ट रूप से यह दर्शाता है कि विकलांग बच्चों की शिक्षा/प्रशिक्षण और प्रत्येक विकलांग बच्चे की शिक्षा के तीन महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों अर्थात् स्वतंत्र जीवनयापन के कौशल, रोजगार पाने की योग्यता और समावेशन सम्बन्धी उनके प्रदर्शन में स्कूल, परिवार और समुदाय ने कितना योगदान दिया।



इस प्रकार बौद्धिक रूप से विकलांग विद्यार्थियों की आदर्श शिक्षा स्कूलों के परिवारों के साथ जुड़कर शुरू होनी चाहिए और साथ ही समाज को भी संवेदनशील बनाना चाहिए। अन्ततः यह दृष्टिकोण इन बच्चों को स्कूल और परिवार के वातावरण से सम्मान के साथ सामुदायिक जीवन जीने की ओर ले जाएगा।



उषा मदान ने एमएससी (जेनेटिक्स), डीसीएस, एमएस (मनोचिकित्सा और परामर्शन) की उपाधि प्राप्त की है। वे 2007 से दीपिका स्पेशल स्कूल में पीआरओ और काउंसलर समन्वयक हैं। इससे पहले उन्होंने प्रमेय हेल्थ लिमिटेड में परामर्शी मनोचिकित्सक के रूप में, आईआरसी, बेंगलूरु में स्रोत फैकल्टी के रूप में और पूर्ण प्रज्ञा शैक्षिक संस्थान, बेंगलूरु में अभिभावक कार्यशालाओं की फैकल्टी के रूप में काम किया है। वे गिव इंडिया फॉर वॉयसलेस की संस्थापक ट्रस्टी हैं। उनसे ushamadan2@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

एक महान मनोरथ के लिए काम करना
साक्षात्कार एक विशेष शिक्षक के साथ

विजयश्री पी. एस.

यदि कोई स्कूल विकलांग और ग़ैर-विकलांग दोनों प्रकार के बच्चों को साथ में शिक्षा दे तो हमारे विद्यार्थी समुदाय बेहद ईमानदारी के साथ पारस्परिक सम्मान के बारे में सीखेंगे और समझेंगे! ऐसा ही एक अनुकरणीय स्कूल है — जीएचपीएस पेपर टाउन, बेलागोला, मंड्या। एक सरकारी स्कूल के शिक्षक की पहल ने उस नज़रिए को ही बदल दिया है जिस नज़रिए से नियमित स्कूल में पढ़ने वाले बच्चे विकलांग बच्चों को देखते थे।

जिस दिन मैंने इस शहर का दौरा किया उस दिन पचास से अधिक अभिभावक अपने विशेष बच्चों के साथ स्कूल परिसर में एक मेडिकल कैम्प के लिए आए हुए थे। क्लस्टर अधिकारी ने हमें एक शिक्षक श्री सैयद खान से मिलवाया। उन्होंने बताया कि सैयद के कारण ही यह सब सम्भव हुआ है यानी स्कूल में प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल केन्द्र प्रारम्भ हुआ है और एक शिक्षक के रूप में यह पूरी प्रक्रिया उन्हीं की मिल्कियत है। इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहे बच्चों, अपने बच्चों की चिकित्सा सम्बन्धी स्थितियों के बारे में डॉक्टरों के साथ बातचीत करते हुए अभिभावकों और स्वेच्छा से व्यवस्थाओं पर ध्यान दे रहे शिक्षकों को देखकर मन में कुतूहल हुआ। मैंने स्कूल के बाद सैयद खान के साथ एक साक्षात्कार का अनुरोध किया। वे आसानी से मान गए।

विजयश्री : आपकी शैक्षिक पृष्ठभूमि क्या है? और आपने एक विशेष शिक्षक बनना ही क्यों पसन्द किया?

खान : मैंने अपना बीए पूरा किया और श्रीरंगपट्टनम तालुक में जीएचपीएस गणंगूरू में सहायक शिक्षक के रूप में काम करने लगा। अपनी सेवा के शुरुआती दौर में जब भी मैं शिक्षा विभाग के अपने सहकर्मियों से मिलता था तो हमें बहुत सारे विकलांग बच्चों की मृत्यु के बारे में पता चलता था। इस तरह की ख़बरें मुझे परेशान कर देती थीं। मैं सोचता था कि क्या इन बच्चों को केवल इसलिए मर जाना चाहिए क्योंकि उनके लिए कोई सुविधा उपलब्ध नहीं है। उस दौरान विभाग ने 90-दिवसीय *बुनादी* प्रशिक्षण आयोजित किया, जो सरकारी उच्च विद्यालयों के नव नियुक्त सहायक शिक्षकों के लिए एक परिचय प्रशिक्षण है। प्रशिक्षण के बाद प्रतिभागियों को एक परीक्षा उत्तीर्ण करनी थी। मैं उन सात प्रतिभागियों में से एक था जिन्होंने उस आकलन में सफलता प्राप्त की। हम सातों को स्पेशल बीएड सर्टिफिकेशन पूरा करने के लिए मध्य प्रदेश के भोज विश्वविद्यालय भेजा गया। कर्नाटक सरकार ने हमारी विशेष बीएड की डिग्री के लिए आर्थिक सहयोग किया था। मैंने इसे पूरा किया और एक विशेष शिक्षक के रूप में लौटा।

विजयश्री : आप इस विद्यालय में कब और कैसे आए?

खान : जब मैं अपना कोर्स करने के बाद लौटा तो इस स्थान पर कोई प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल केन्द्र नहीं था। इसलिए, सबसे पहले तो हमें देखभाल केन्द्र की स्थापना के लिए एक क्षेत्र चुनना था। इसके लिए यह ज़रूरी था कि हम उस स्थान की पहचान करें जिसमें विकलांग बच्चों की संख्या सबसे अधिक हो। जब हमने स्वास्थ्य विभाग के रिकॉर्ड का सर्वेक्षण किया तो हमें पता चला कि केआरएस क्लस्टर में विकलांग बच्चों की संख्या सबसे अधिक थी। एक प्राथमिक चिकित्सा वैन के दल के साथ हमने भी पूरे क्षेत्र की यात्रा की और आँगनवाड़ी कर्मचारियों की मदद से विकलांग बच्चों के घरों का दौरा भी किया। हमने देखा कि दूरदराज़ के इलाक़ों में रहने वाले और आर्थिक रूप से ग़रीब परिवारों में बच्चों का स्वास्थ्य कैसे बिगड़ जाता है।

इसलिए, हमने स्वास्थ्य देखभाल केन्द्र की स्थापना के लिए जगह की तलाश शुरू की। तभी हमें पेपर टाउन स्कूल की इमारत का पता चला, जो विद्यार्थियों के कम नामांकन के कारण बन्द होने की कगार पर थी। हमने तुरन्त खण्ड शिक्षा विभाग से सम्पर्क किया और अनुरोध किया कि होबली के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल केन्द्र यहीं स्थापित किया जाए और स्कूल को भी बनाए रखा जाए।

विजयश्री : क्या आपको तुरन्त अनुमति मिल गई?

खान : हाँ! और मैं इस ख़ुशख़बरी को लेकर बेहद उत्साहित था। तब तक मैंने इस बारे में चर्चा करके कुछ स्वयंसेवकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं की भर्ती की क्योंकि मुझे पता था कि इस कार्य के लिए एक मज़बूत टीम का होना बहुत महत्वपूर्ण था। हमारी टीम इस स्कूल में पहुँची। पहली मंज़िल पर आधा इंच धूल जमी हुई थी जिसे साफ़ करना था। हमें ज़रूरत का बुनियादी सामान खरीदने के लिए एक प्राथमिक राशि भी मिली थी। हमने एक बोर्ड लगाया : 'पुनर्वसति केन्द्र' (पुनर्वास केन्द्र)। निचली मंज़िल पर नियमित स्कूल सुचारू रूप से चल रहा था, इसलिए मध्याह्न भोजन को लेकर हमें कोई परेशानी नहीं हुई। हम सब तैयार थे।

मैंने कल्पना की थी कि केन्द्र खुलने के अगले दिन ही अभिभावकों की बाढ़ आ जाएगी। लेकिन दुर्भाग्य से एक लम्बे समय तक कोई भी यहाँ नहीं आया।

विजयश्री : आपके लिए यह बात बहुत ही निराशाजनक रही होगी।

खान : मैंने महसूस किया कि न तो अभिभावक और न ही समुदाय ने स्पष्ट रूप से इस बात को समझा था कि यह केन्द्र किसलिए था और इसका क्या प्रयोजन था। इसलिए 2008 के मध्य में हम तीनों की यह मज़बूत टीम अभिभावकों से मिलने उनके घर गई। हमने आँगनवाड़ी स्वयंसेवक के साथ प्रत्येक परिवार से सम्पर्क किया। इन बच्चों की दयनीय दशा देखकर बहुत कष्ट हुआ। इसमें अभिभावक की ग़लती नहीं थी क्योंकि उन्हें इस बात की जानकारी ही नहीं थी कि इन बच्चों की देखभाल कैसे की जाए। कुछ बच्चे बीमारी के कारण बिस्तर पर पड़े हुए थे। उनके कमरे और उसके आसपास बिलकुल सफ़ाई नहीं थी। वास्तव में बच्चे अस्वच्छ वातावरण के कारण भी कष्ट भोग रहे थे।

जैसे-जैसे हम इन गाँवों में नियमित रूप से जाने लगे वैसे-वैसे हम इन परिवारों के क़रीब होते गए, हमारे बीच विश्वास का रिश्ता बना। समय के साथ-साथ जब हमें यह महसूस हुआ कि ये परिवार हमें और हमारे हस्तक्षेपों को सकारात्मक रूप से ले रहे हैं तो हम इस बात को लेकर आश्वस्त हो गए कि अब इन समुदायों के लिए जागरूकता कार्यक्रम शुरू किया जा सकता है जो कि हमारा अगला क़दम था। तब हमने पुनर्वास केन्द्र की अवधारणा प्रस्तुत की जहाँ विकलांग बच्चों को सुविधाएँ दी जाती हैं।

विजयश्री : क्या वे समझ पाए कि पुनर्वास केन्द्र उनके लिए क्या कुछ कर सकता है?

खान : अभिभावकों ने हमें घर पर प्राथमिक चिकित्सा और मूलभूत फिज़ियोथेरेपी करते हुए देखा था। इससे हमारे लिए यह स्पष्ट करना आसान हो गया कि पुनर्वास केन्द्र में दी जाने वाली सुविधाएँ घर पर किए गए बुनियादी अभ्यासों से अधिक ही होंगी। हमने परिवारों को यह कहकर मना लिया कि पुनर्वास केन्द्र में बच्चों को ले जाने से उन्हें भी थोड़ा और स्वतंत्र होने में मदद मिलेगी।

हमने पहले मेडिकल कैम्प में भाग लेने के लिए परिवारों को स्कूल में आमंत्रित किया, जिसके लिए अभिभावक तुरन्त सहमत हो गए। और जब एक बार उन्होंने देखा कि फिज़ियोथेरेपी की सुविधाओं, खेल सामग्री और खिलौनों से बच्चे बेहद ख़ुश हैं तो वे समझ गए कि केन्द्र में परामर्श देने के लिए डॉक्टर /विशेषज्ञ हैं तथा वे अपने बच्चों को यहाँ भेजने के लिए तैयार हो गए।

विजयश्री : इन अभिभावकों की रूढ़िवादी जीवनशैली और दूरस्थ स्थानों को देखते हुए तो यह एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

खान : इसके लिए हमारी टीम ने काफ़ी प्रयास किया। उनका विश्वास हासिल करने के लिए हमें कई महीनों तक काम करना पड़ा।

विजयश्री : इसके बाद केन्द्र ने क्या किया?

खान : अभिभावकों ने साफ़ तौर पर यह देखा कि स्कूल में आकर उनके बच्चे ख़ुश हैं। कुछ दिनों की थेरेपी के बाद कुछ बच्चे स्वतंत्र रूप से बैठने लगे। एक बच्चा धातु के फ्रेम के सहारे चलने लगा। ये सब उनके परिवारों के लिए किसी चमत्कार से कम नहीं था। अभिभावकों ने यहाँ एक मैत्री-क्लब का गठन किया और वे पूरा दिन बच्चों और हमारे (स्टाफ़ के) साथ बिताते थे। अब हम सब एक परिवार की तरह हैं।

विजयश्री : पुनर्वास केन्द्र में किस प्रकार की दिनचर्या रहती है?

खान : स्कूल की शुरुआत प्रार्थना सभा से होती है। फिर विद्यार्थी अपनी-अपनी कक्षाओं में जाते हैं। विकलांग बच्चे अपने अभिभावक और स्टाफ़ के साथ अपनी योजनाबद्ध दिनचर्या शुरू करते हैं, जैसे कि फिज़ियोथेरेपी, प्लेरूम, स्पीच थेरेपी आदि। दोपहर के भोजन के बाद ये बच्चे विषयों की पढ़ाई करने के लिए सम्बन्धित कक्षाओं में नियमित विद्यार्थियों के साथ बैठते हैं।

विजयश्री : तो सभी विद्यार्थी एक साथ सीखते हैं?

खान : हाँ, सभी विद्यार्थी एक साथ सीखते हैं (यह सुनकर मेरा मुँह खुला का खुला रह गया जिसे देखकर खान मुस्कराने लगे)।

विजयश्री : आप यह सब कैसे करते हैं? यह तो बहुत चुनौतीपूर्ण होगा।

खान : ऐसा नहीं है, मैडम। मैंने एक चीज़ सीखी है और वह यह है कि मध्यम गति से पढ़ाना एक ग़ैर-विकलांग बच्चे के लिए बहुत लाभकारी हो सकता है। लेकिन इस स्कूल में हमारे शिक्षकों को धीमी गति से पढ़ाना चाहिए क्योंकि उन्हें यहाँ सभी विद्यार्थियों का ध्यान रखना पड़ता है। नतीजतन ग़ैर-विकलांग बच्चे भी बड़ी कुशलता के साथ सीख पाते हैं।

दोनों प्रकार के विद्यार्थियों को इस स्कूल में जिस तरह का समावेशन प्रदान किया गया है, वह बहुत बड़ी बात है। विद्यार्थी अपने साथियों के साथ सीखने की इस प्रक्रिया में जुड़कर आगे बढ़ते हैं। स्कूल के समय के दौरान अभिभावक भी यहाँ होते हैं और विद्यार्थियों के अधिगम में सहायता भी करते हैं। विद्यालय का पूरा वातावरण प्रत्येक विद्यार्थी के समग्र विकास में सहायक होता है। अधिगम के लिए यह एक असाधारण स्थान है!

विजयश्री : सर, आप विभिन्न विभागों के साथ कैसे काम करते हैं?

खान : यदि शिक्षा, स्वास्थ्य और महिला व बाल कल्याण विभाग तीनों सहयोग के साथ काम करें तो हम बदलाव ला सकते हैं या बदलाव देख सकते हैं।

विजयश्री : आप इन सभी पहलुओं का प्रबन्धन कैसे करते हैं जैसे कि समुदाय के साथ सहयोग करना, स्कूल की दिनचर्या का पालन करना, विभिन्न सरकारी विभागों के साथ काम करना और सबसे महत्त्वपूर्ण बात हर बच्चे के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में सुधार करना?

खान : हमारे पास शिक्षकों, कर्मचारियों और अभिभावकों की एक मज़बूत टीम है। यहाँ की व्यवस्था पारदर्शी है। उदाहरण के लिए यदि कोई फंड या विशेष छात्रवृत्ति जारी होती है, तो मैं तुरन्त सभी हितधारकों की बैठक बुलाता हूँ और हम सामूहिक रूप से निर्णय लेते हैं कि हम उस फंड का उपयोग कैसे करें। जब किसी महान मनोरथ के लिए काम करते हैं तो पारदर्शिता बनाए रखना और संसाधनों का सही उपयोग करना बहुत महत्त्वपूर्ण होता है।

विजयश्री : अब जब आपने ऐसे असाधारण कार्य को पूरा कर लिया है तो आपके जीवन का लक्ष्य क्या है?

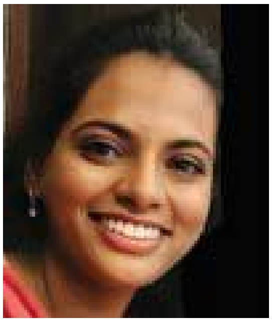
खान : मुझे तो लगता है कि मैंने कुछ नहीं किया है और इस क्षेत्र में अभी भी बहुत काम करना बाक़ी है। सभी बच्चों को जीने का मौलिक अधिकार है और मेरी इच्छा है कि हमें एक पूर्ण रूप से विकसित अस्पताल शुरू करना होगा जो विकलांग बच्चों की विशेष आवश्यकताओं को पूरा करता हो। मुझे यह भी लगता है कि सभी बच्चों को समान अवसर मिलने चाहिए। हमारा एक पूर्व विद्यार्थी अब मैसूर विश्वविद्यालय में स्नातक की पढ़ाई कर रहा है। जब हमें पता चला कि वह किसी अन्य सामान्य विद्यार्थी की तरह ही जीवन जी रहा है तो हमें बहुत गर्व हुआ। उसके लिए यह इसलिए सम्भव हो पाया क्योंकि स्कूली जीवन के दौरान उसे स्पीच थेरेपी दी गई थी। मैं शिक्षा विभाग से अनुरोध करता हूँ कि हमारे स्कूल के लिए इस नारे पर विचार करें, 'यह स्कूल विकलांग बच्चों को समान अवसर प्रदान करता है'।











विजयश्री पी.एस. एक स्रोत व्यक्ति हैं और अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन में बेंगलूरु ज़िले के अर्बन स्कूल इनिशिएटिव में कार्यरत हैं। उनसे vijayashree.ps@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

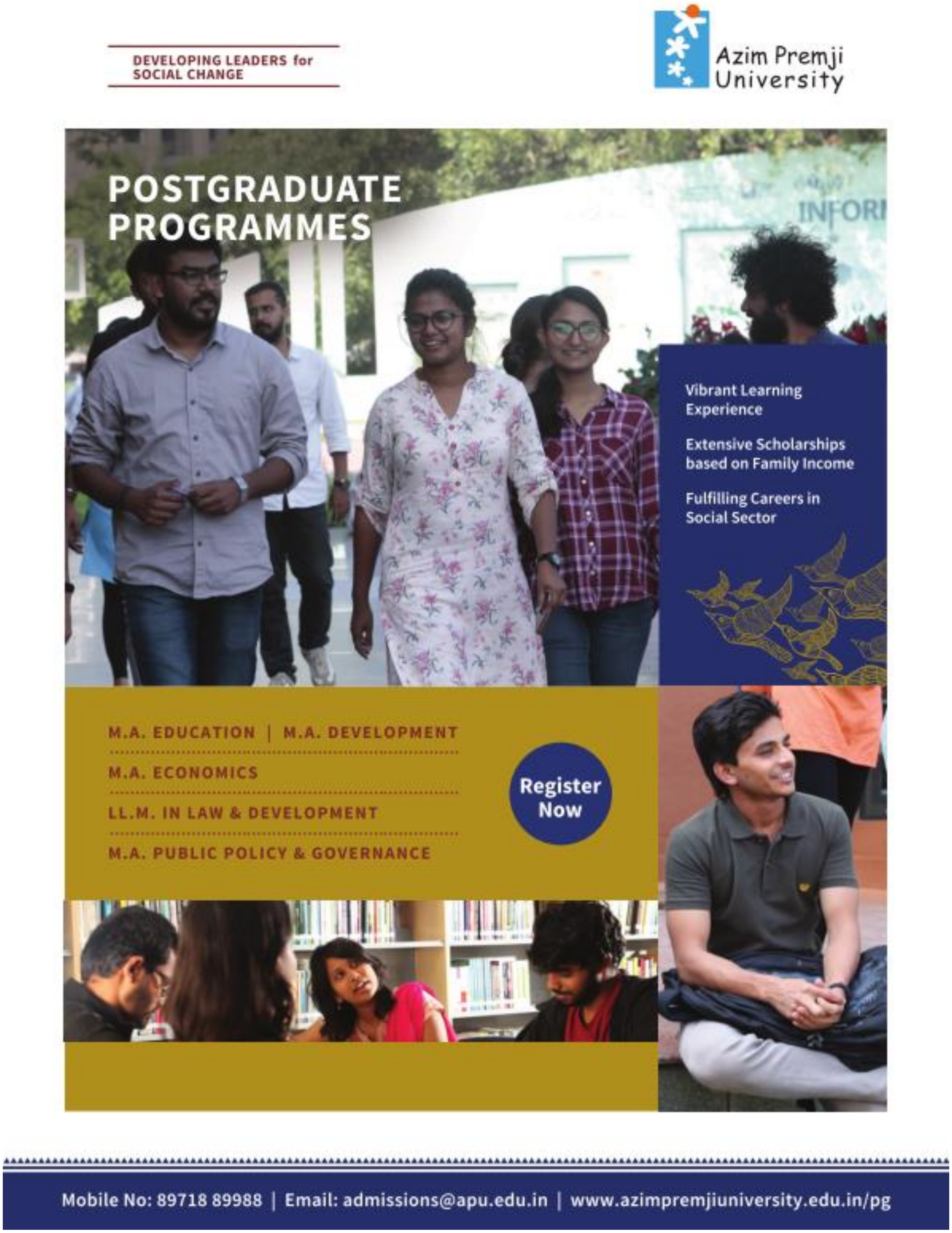
अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व के पुराने अंक **http://azimpremjiuniversity.edu.in/Site Pages/resources-learing-curve.aspx** से डाउनलोड किए जा सकते हैं।

यह पत्रिका अंग्रेज़ी और कन्नड़ा में भी छपती एवं प्रकाशित होती है।

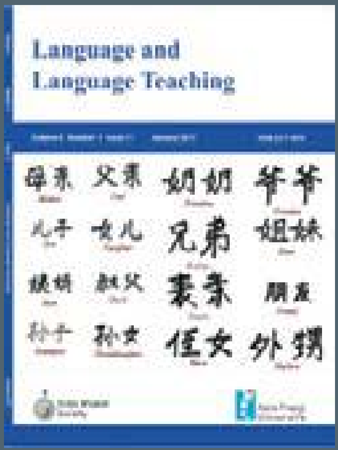
अपने सुझाव,टिप्पणियाँ, मत और अनुभव हमें इस ईमेल पते पर भेज सकते हैं :
learningcurve@apu.edu.in

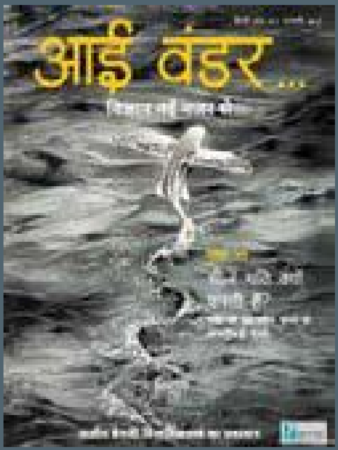
मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट के लिए
आदर्श प्रा.लि.,4 शिखरवार्ता, प्रेस काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल पिन 462 011 से मुद्रित

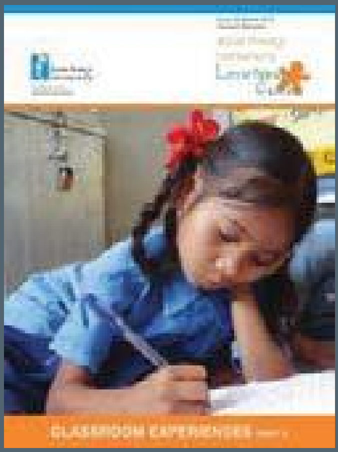
एवं अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, पी.ई.एस. कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग कैम्पस, इलेक्ट्रॉनिक सिटी, बेंगलूरु 560 100 से प्रकाशित,
मुख्य सम्पादक : प्रेमा रघुनाथ


DEVELOPING LEADERS for SOCIAL CHANGE
Azim Premji University
POSTGRADUATE PROGRAMMES
Vibrant Learning Experience
Extensive Scholarships based on Family Income
Fulfilling Careers in Social Sector
M.A. EDUCATION | M.A. DEVELOPMENT
M.A. ECONOMICS
LL.M. IN LAW & DEVELOPMENT
M.A. PUBLIC POLICY & GOVERNANCE
Register Now
Mobile No: 89718 89988 | Email: admissions@apu.edu.in | www.azimpremjiuniversity.edu.in/pg

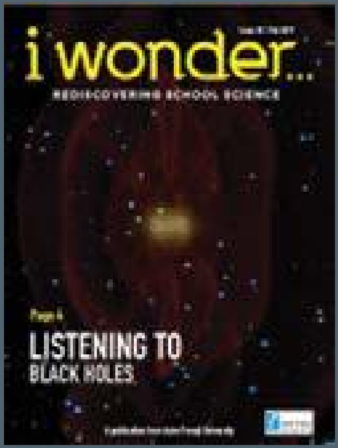
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की पत्रिकाएँ

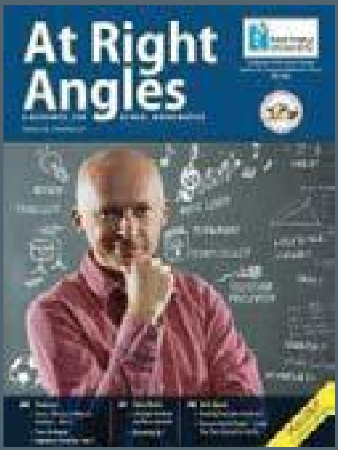












अगला अंक

हर बच्चा सीख सकता है

Azim Premji University
PES Campus, Electronic City, Hosur Road
Bengaluru - 560100

080-6614 4900
www.azimpremjiuniversity.edu.in

Facebook: /azimpremjiuniversity
Instagram: @azimpremjiuniv
Twitter: @azimpremjiuniv